विप्लवाग्नी

[राजनैतिक उपन्यास]

लेखक

श्री सिद्धविनायक द्विवेदी

प्रकाशक

हिन्दी प्रकाशन मन्दिर

बनारस

प्रथम संस्करण : सितम्बर १९५३

~~मूल्य ... रुपया ... आना मात्र~~

मूल्य दो रुपया बारह आना मात्र

प्रकाशक
हिन्दी प्रकाशन मन्दिर
बनारस (उत्तर प्रदेश)

मुद्रक
दुर्गा प्रेस
आदिविश्वेश्वर, बनारस

वीतरागी

मानो एक युगकी बीती घटनाएँ चल-चित्र-सी उसकी अन्तरदृष्टिमें चमक उठीं। अनुभूतियोंकी धूप-छाँहके रंगीन सुख दुख-जीवन-चदरीके ताने-बानेकी तरह गुँथने लगे। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा—

"जीवन-पथ तमिस्राछन्न है। प्रकाशकी कोई लौ, कोई रेखा नहीं। अपरिमित दुःख हैं, उनसे मुक्तिका कोई उपाय नहीं। विचक्षण! तुम जाओ और सम्राटसे जाकर निवेदन करना कि मैं अपने निश्चित ध्येयसे विचलित नहीं हो सकता। राष्ट्र-सेवा हमारा व्रत है। अन्याय और अनीतिके प्रति मैं विद्रोह करता हूँ। सम्राटकी शर्तोंके समक्ष आत्म-समर्पणका कोई प्रश्न नहीं।"

अजितका प्रत्युत्तर सुनकर विचक्षणको जैसे काठ मार गया। उसने क्रूरतापूर्वक अपने होंठ काट लिये। उसे लगा कि हिमालय जैसी विपत्तियोंसे टकराकर भी अजित ज्योंका त्यों अडिग, अटल है, किन्तु इसका पतन होना ही चाहिये, अन्यथा मेरी महत्वाकाँक्षाएँ, राह-राह की

भिखारिन बनेंगी। अजितके तप-त्यागकी मान्यताएँ एक ऋण बनकर राष्ट्रकी जनता और सम्राट दोनोंको अपने वश में लिये हुये हैं। अजित-का ओजस्वी प्रभाव जन-मन पर से हटना ही चाहिये।

विचक्षणने धैर्य से काम लिया। मुखपर उभरती हुई द्वेष एवं डाहकी भावनाओंको कुचलकर बनावटी संयमसे बोला—"मैंने तो कह दिया अजित कि तुम सम्राटके बनकर रहो। इसीमें तुम्हारा कल्याण है। सम्राट तुमसे कुछ नहीं चाहता। वे राज काज में तुम्हारा विरोध नहीं—सहयोग चाहते हैं।

"....किन्तु सहयोगका अर्थ आत्म-समपर्ण नहीं, विचक्षण! याद रखो। अजित किरीटधारियोंके हाथ नहीं बिक सकता........!"

"क्या मूल्य है, तुम्हारे इस स्वाभिमानका, अजित; जब कि तुमपर महान विपत्तियोंके बादल मड़रा रहे हैं। तुम्हारे सगे स्वजन दरिद्रताकी पीड़ासे छटपटा रहे हैं! प्रत्येक दिन तुम्हारे लिये निराशा और बेबसीकी चिन्तासे परिपूर्ण रहता है। मेरी बात मानो, तुम्हारे सामने स्वर्ण अवसर है। इसे हाथसे न जाने दो। चलो, अपने अपने स्वार्थोंके लिये, अपने भूखे बच्चोंके लिये आदर्श और सिद्धान्तको कुचल दो। मैं जानता हूँ, शक्ति भर तुमने अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है। तुम्हें लोक-निंदासे डरनेकी कोई बात नहीं।"

अजितने विचक्षणके सान्त्वना एवं सहानुभूति भरे शब्दोंमें अपने जीवनके पतनकी छलनाको भाँप लिया। विचक्षणकी चाटुकारितामें निपुण कूटनीतिज्ञकी भाँति अजितको धूलमें मिला देनेका षड्यंत्र छिपा था, अजितको यह भी ज्ञात था कि विचक्षण एक धूर्त राजनीतिज्ञ है। आज तक अजितके नैतिक अधःपतनको संभवकर दिखानेमें उसने सारे प्रयत्न कर डाले हैं, किन्तु अजितके अपरिवर्तनशील स्वभावके कारण सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। आज जब सम्राटके साम्राज्यमें एक छोरसे दूसरे छोरतक

असन्तोष एवं विप्लवकी आग धधक उठी है और जब कि निस्तेज एवं निरीह जनता कुछकर गुजरनेपर तुल गयी है, तब सम्राटके कानोंमें जूँ रेंगी है और अधिनायकवादी शासन प्रजाके सामान्य अधिकारोंपर हस्तक्षेप न कर अपनी सद्बुद्धि एवं कुशलताका परिचय देना चाहता है।

प्रकट रूपमें अजितने कहा—"विचक्षण! क्या सम्राटको यह नहीं ज्ञात कि दुर्बलकाय मनुष्योंकी पंक्तियाँ अन्न भण्डारोंके सम्मुख दाने-दानेको तरसती हुई, अवसादमग्न होकर शून्य आकाशको निराश दृष्टिसे देख रही हैं। इस घिनौनी दरिद्रताको इस तरह साकार देखकर किसी भी सहृदय प्राणीके अन्तःकरणमें बिजली कौंध उठती है। यह समाज है भ्रष्ट, अत्याचारी! कुबेरोंकी बस्तीमें दरिद्रताका साम्राज्य! अति संग्रहकी लिप्साने मानवको दानव बना दिया है। सोचो, इस दानवसे प्रतिकार—प्रतिशोध कौन ले!...........विचक्षण! क्यों न कोटि कोटि मानव जागरणके नव प्रभातमें अँगड़ाइयाँ तोड़ते हुए उठें और एक ही सशक्त हुङ्कारसे युगोंके शोषण, दरिद्रता, दुख-दैन्य और सम्पूर्ण असमानताओंकी शृङ्खलाओंको चटपटाकर तोड़ दें?...........क्यों न अर्ध-नग्न, बुभुक्षित एवं शोषणके दानवीयपाशमें जकड़े हुए अभागे-मानव युगोंके अपने शोषक शत्रुओंसे भीषण मोर्चा लें और अपने अस्तित्वके प्रति उपेक्षा करनेवालोंके अस्तित्वको यहीं समाप्तकर दें।"

"...........".

"क्यों न प्रकृतिके अक्षय भंडारका स्वामी सर्वहारा हो? और प्रतिनिधि सत्तात्मक पञ्चायती राज्यमें उसीका बहुमत हो?"—

'यही तुम भूल करते हो"—बीचमें ही बात काटकर विचक्षण बोल उठा—"लोग देशकी सम्पत्तिके राष्ट्रीयकरणकी जोरोंसे चर्चा करते हुये अपना मत व्यक्तकर रहे हैं किन्तु व्यक्तिका नियन्त्रित होकर मशीनके कल-पुरजोंकी तरह कार्य करना व्यक्तित्वका सर्वनाशी परिणाम होगा। मैं मानता हूँ कि सम्पत्तिपर एकाधिकार करनेवालोंने राष्ट्रकी गरीबीको बढ़ानेमें सहायता पहुँचायी है,

किन्तु अहिंसक वर्गहीन समाजके लिये व्यक्तिको पूर्ण स्वतंत्रता देनी होगी, जहाँ वह शोषण अत्याचार एवं अति-संग्रहके पापसे मुक्त होकर अपनी शक्तियोंका पूर्ण विकास करते हुये अपना और समाज दोनोंका उचित हितचिन्तनकर सके और मानवता उपासनामें शक्ति भर योग-दान देकर अपने मूल्योंसे मानवताके सत्यं शिवं एवं सुन्दरं बना सके।

"कुछ भी हो विचक्षण ! यह कल्पना तो अहिन्सक—अराजकताकी है, जहाँ किसी प्रकारके शासनकी आवश्यकता ही नहीं है, जहाँ समर्पित-भावसे व्यष्टिको समष्टि में लय हो जाना है, जहाँ सभीको अपने स्वार्थोंकी पूर्तिमें, बिना दूसरोंके स्वार्थोंको चोट पहुँचाये हुए, अपने सुख शान्ति एवं समृद्धि के लिये निरंतर प्रयास करते रहना है और जहाँ अपने सुख शान्ति एवं समृद्धिका अर्थ है, समाजकी सुख शान्ति एवं समृद्धि, किन्तु ऐसी कल्पनाके लिये आजकी दुनियामें कोई स्थान नहीं है। आज तो संसारके कोने-कोनेमें आँसुओंसे भींगी हुई जनता दुख-दर्दसे कराह रही है, किन्तु जनता की कराहके समक्ष सम्राज्य वादियोंके किरीट भी झुकने लगे हैं। यद्यपि यह सच है कि साम्राज्य वादियों एवं पूँजीवादके अञ्चल में मुखढाँपे हुए उपनिवेशवाद प्रजातन्त्रका ढोल पीट-पीटकर श्रमिकों एवं किसानोंका शोषण मनमाने ढङ्गसे करता आया है, किन्तु आज सारे वाद-विवादोंका नग्न स्वरूप सामने है। जनता इन सारी व्यवस्थाओंसे ऊब गई है। वह नव-क्रान्तिकी देहली पर पाँव रखे नव-निर्माणकेद्वारा अपने उज्वल भविष्यका सपना देख रही है, इसी लिये विचक्षण, मेरा सहयोग सम्राट और उनकी सरकारसे न होकर श्रमिकों एवं किसानोंके संघोंसे होगा।"

कूटनीतिज्ञ विचक्षणने किसी भी तरह अजितको अपने चंगुलमें फँसाता हुआ न देख मन ही मन चलने की ठानी। प्रत्यक्ष वह बोला,—"अ-जित ! सम्राटकी ओरसे परिपूर्ण आश्वासनोंद्वारा मैं तुम्हें सुखी बनानेका

पूर्ण प्रयास करता। मैंने सोचा कि तुम्हारे तर्क अकाट्य हैं और उनमें सचाई है। किन्तु युगोंके दरिद्रताके कोढ़को तुम अपने उपकारी कर्मके उपचारसे भी दूर करनेकी क्षमता नहीं रख सकते। हाँ, एक बात अवश्य है। वह यह कि समग्रराष्ट्रकी जनता को तुम्हारे नेतृत्वमें विश्वास है, इसी लिये मेरी सूझ थी कि जो कार्य विद्रोहके द्वारा संभव नही, वह सम्राटके सहयोगसे अवश्य हो जाता और अपनी दूरदर्शिताके कारण तुम यशके भाजन भी बन सकते थे।"

विचक्षण एक रहस्यमय दृष्टि-निक्षेप करते हुए चलनेको उद्यत सा खड़ा हो गया। अजितने उठकर अभिवादन किया और चलते हुए विचक्षणसे इतना ही कह सका—"महा आमात्य! मैंने आपकी बातोंको धीरजसे सुना है। उनपर स्वतः मननकर रहा हूँ। और अपने अन्य साथियोंसे भी परामर्श करूँगा। आप मेरी ओरसे सम्राटसे निवेदन करें कि सहयोगका हाथ बढ़ानेके लिये कमसे कम एक पक्षका समय चाहिये इसके पश्चात मैं अपने निर्णयकी सूचना स्वतः सम्राटके समीप भेजवा दूँगा।

विचक्षण जो अब तक अजितके तर्कोंसे पूर्ण निराश हो चुका था, एका एक खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला—'विचारके लिये जितना समय चाहिये, उतना लो, अजित! सम्राटका शासन कुछ दिनोंके लिये मौन होकर तुम्हारे अन्तिम निर्णयकी प्रतीक्षा करे किन्तु...........मैं जानता हूँ कि जो कुछ भी निर्णय तुम्हारे साथी करेंगे, वह तुम्हारी इच्छाके विपरीत न होगा। बोलो, तुम एक बार सम्राटकी इच्छाका ध्यान रक्खोगे!"

अजित समझता था कि विचक्षण उससे क्या कहलाना चाहता है, इसलिए उसने विचक्षणके प्रति उठती हुई अन्तरकी घृणाको रोककर कहा—"मैं इस समय कोई स्पष्ट उत्तर देनेमें असमर्थ हूँ!"

विचक्षण अधिक अपमान न सह सका। वह मतवाले हाथीकी तरह

झूमता हुआ चल पड़ा। मन ही मन वह सोचता जा रहा था—
"क्या करूँ। यह दासत्व पाश मुझे जकड़े हुए है। विचक्षण सम्राटोंके सम्मुख झुकना नहीं जानता, किन्तु सम्राटके कारण भिखारीके सामने गिड़-गिड़ाना पड़ा है किन्तु यह अपमान मैं भूल न सकूँगा—भारत सम्राटका महाआमात्य, अजित जैसे लँगोटीवालेके सामने दीनतापूर्वक सहयोगकी भिक्षा माँगे और इतनेपर भी राह-राहका आवारा अजित उसे निराश कर दे। क्या कहूँगा मैं सम्राटसे जाकर कि अजितने उनके महाआमात्य को नगण्य व्यक्ति जैसा समझकर उपेक्षित तिरस्कृत कर दिया।"

हाथ मलते हुए हारे जुआरीकी भांति विचक्षण सम्राटके समीप जा पहुँचा। चिन्ताकी होलीमें धधकते हुए सम्राट उसीकी प्रतीक्षा कर रहे थे विचक्षणको सम्मुख देखते ही आतुर शब्दोंमें सम्राटने कहा—"क्यों महाआमात्य! अजितने क्या उत्तर दिया?"

"वह भिखारी क्या उत्तर देगा, सम्राट! वह अपनी हेकड़ी छोड़ नहीं सकता—माना आज वह धूलमें मिल चुका है। विपत्तियोंने उसके जीवनको चलनीकर डाला है फिर भी वह बड़े बोल बोलता है। उसने उत्तर दिया है कि उसका सहयोग सम्राटकी सरकारसे न होकर श्रमिकों एवं किसानसंघोंसे होगा।

विचक्षण प्रत्युत्तर सुनाकर चुप हो गया किन्तु उसने देखा कि अजितके प्रत्युत्तरमें सम्राटके अस्तित्वके प्रति घोर उपेक्षा थी और उसे सुनकर सम्राटके माथेमें पसीनेकी बूँदें उभर आयीं। धीमे स्वरमें सम्राट-ने कहा—

"महाआमात्य! अभी-अभी सन्देश प्राप्त हुआ है कि साम्रा-ज्यकी दक्षिणी जनताने विद्रोह कर दिया है। शासनसूत्र विद्रो-हियोंके हाथमें है। हमारे रण-कुशल सेनानी पराजित होकर विद्रोहियोंके शिविरमें बन्दी हैं और मुख्य शासनाधिकारी मौतके घाट उतारे जा चुके हैं।"

विचक्षण सम्राटके सम्मुख बैठते हुए बोला—"तो क्या इस हिंसक विद्रोहमें अजितका भी हाथ है। अबतक शासनको जो सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं, उनसे तो यह सिद्ध नहीं होता कि अजितने वर्तमान समय या अतीतमें कभी-कभी भी जनताको विद्रोह करनेके लिए आदेश दिया हो ! वह तो जनताकी संगठित शक्ति द्वारा शासनसे असहयोग करनेकी बात किया करता है। इतना तो मैं बल देकर कह सकता हूँ कि यदि अजित हिन्सक क्रान्तिका समर्थक होता, तो जनताने कभी तलवार उठा ली होती। उस समय ऐसी स्थिति न होती। सम्पूर्ण देशके एक छोर से दूसरे छोर तक उत्पात, उपद्रव, लूटमार, अराजकता एवं अशान्ति फैल जाती और उस समय शासनकी क्या स्थिति होती, इसे समयकी जटिल परिस्थिति ही बतलाती।"

"कुछ भी हो विचक्षण ! इसका निर्णय तो भविष्य करेगा कि अजित हिंसक क्रान्तिका समर्थक है या नहीं किंतु शासनके सामने निश्चय ही जटिल समस्याएँ हैं। दक्षिणी क्रान्तिका असर उत्तरपूर्व एवं पश्चिमके साम्राज्यपर भी पड़ेगा और उस समय साम्राज्यकी क्या स्थिति होगी ! इसे अभीसे कौन बता सकता है। यह किसे ज्ञात है कि जिस अराजकताको दक्षिणी जनता प्रश्रय दे रही है, उसके बीज उत्तरपूर्व एवं पश्चिममें न पड़ गये हों। आज सम्पूर्ण साम्राज्य विद्रोहकी अन्तर्दशामें घिरता जा रहा है। ऐसा ज्ञात होता है कि दमनके दुष्परिणामने ही घातक बीज बोये हैं। अधिकारके नशेमें बेहोश अधिकारियोंने बुद्धिमत्ताका परिचय नहीं दिया।"

सम्राट चुप हो गये। चिन्ताकी घनी अनुभूतिमें उनके मस्तिष्क पर इतना बोझ पड़ा कि क्षणभरके लिए वह भूल गये कि वे सम्राट हैं। एक साधारण मनुष्यकी तरह उन्हें ज्ञात हुआ जैसे वे परिस्थितिपर कोई अधिकार नहीं जमा सकते। जैसे उन्हें अब कुछ करना बाकी नहीं

है, जैसे उनके कर्त्तव्यकी इति हो चुकी है और वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये हैं।

विचक्षणाके मत्थेपर भी चिन्ताओं की झुर्रियाँ दौड़ पड़ीं। वास्तवमें दक्षिणाकी नंगी-भूखी जनता के शोषण-दमन एवं उत्पीड़नका सबसे अधिक दायित्व साम्राज्यके प्रधान मंत्री—विचक्षणापर ही था। वह सत्ताके जहरीले नशेमें मदमस्त था। जिसने रोटी-रोज़ी माँगी, उसे अन्नके दाने और काम देनेके स्थानपर गोलियोंका उपहार दिया—जनताने प्रार्थनाएँ कीं तो हुकूमतकी जूतीने निर्दय बनकर उनके शीशोंपर ठोकरें जमायीं। जनताने मूक विरोध प्रदर्शन किया तो सत्ताधारियोंने उन्हें लाञ्छित, अपमानित एवं तिरस्कृत किया। जनताके सामने सिवा विद्रोह करनेके अन्य कोई उपाय न था। हुकूमत बहरी थी—वह जनताके दुख-दर्दकी प्रार्थनाएँ सुनकर भी चुप्पी और बेदर्दीका आश्रय लेकर उचित माँगोंको अनसुनीकर देना चाहती थी।

विचक्षणा एवं सम्राटके मस्तिष्कमें सारी पिछली भूलें चलचित्र-सी एकके पश्चात् दूसरी नाचने लगीं किन्तु अब हो क्या सकता था? हुकूमत अपना कामकर चुकी थी—अब उसकी प्रतिक्रिया बाकी थी। जनता जैसेका तैसा जवाब देना प्रारम्भ कर चुकी थी।

सम्राटने प्रधान मंत्रीको सम्बोधित करते हुए कहा—"अब क्या हो? यदि उपद्रवियों एवं बलवाइयोंने शासनसूत्र अपने हाथमें लिया तो साम्राज्यके लिए चुनौती है। दूसरी ओर प्रमुख शासनाधिकारी उन्हींकी कैदमें हैं, जिन्हें मुक्त कराना आवश्यक है। तीसरे जो अधिकारी एवं कर्मचारी मौतके घाट उतारे जा चुके हैं, उनकी सेवाओंके परिणामस्वरूप उनके पीड़ित परिवारको सान्त्वना एवं उपहार तथा उपाधिके रूपमें सरकारी सहायता।"

"यह सब तो होगा ही।"—चिन्तित स्वरमें विचक्षणाने कहा—"किन्तु

शासनके सम्मानको दक्षिणमें पुनः प्रतिष्ठित करनेके लिए आवश्यक है। एक शक्तिशाली एवं संगठित सैन्यको भेजना दूसरी ओर जिन राजनैतिक व्यक्तियोंके अवैध कार्यवाहियोंपर शासनको सन्देह हो उनकी नजरबन्दी........।"

"जो तुम्हें आवश्यक ज्ञात हो, करो।"—अन्यमनस्क भावसे सम्राटने प्रत्युत्तर दिया—"किन्तु ध्यान रहे कि विद्रोह जितना शीघ्र दबाया जा सके, दबाया जावे। साथ ही जनताकी न्यायपूर्ण मांगोंकी भी पूर्तिकी जावे।"

विचक्षणने अति निराश भावसे उत्तर दिया—"राज-कोषमें सञ्चित धन नहीं है। जनताकी माँगों की पूर्तिके लिए आवश्यक धन-सञ्चित करना चाहिए, किन्तु राजकीय अर्थ-स्रोतोंके अतिरिक्त धन-संचित करनेके कोई साधन नहीं। साम्राज्यका अधिक धन व्यक्तिगत कोषमें व्यक्तिगत सम्पत्तिके रूपमें हैं। पूँजीवादी व्यक्ति अपने धनके संरक्षणके लिए शासन विभागोंमें अपना एकाधिकार चाहते हैं और इसी एकाधिकारके विरुद्ध जनताका विद्रोह है। यदि विद्रोह सफल हुआ, तब तो पूँजीवादियों और साम्राज्य दोनोंके लिए खतरा है।

सम्राट कुछ रुष्ट स्वरमें बोले—"प्रधान आमात्य! क्या तुम बतला सकते हो कि दक्षिणी साम्राज्यकी ऐसी विकट एवं अबूझ परिस्थिति एकाएक बनानेमें तुम्हारी ओरसे कितना स्वेच्छाचार किया गया है? क्या यह सही है कि शासन यंत्रमें पूँजीपतियोंके एकाधिकारका राग अलापनेवाले तुम अकेले व्यक्ति हो? क्या दक्षिणी साम्राज्यमें अन्न-वस्त्र एवं आजीविकाकी विभीषिकाका नग्न नृत्य साधारण सी त्रुटिसे ही संभव हो सका?"

"बात तो कुछ ऐसी ही है।" —प्रधान आमात्यने दबे शब्दोंमें प्रत्युत्तर दिया।

"झूठ, सरासर झूठ! आज तुम दूषित कुकृत्योंमें पर्दा डालने

के लिए विद्रोहका सारा दायित्व या तो अजितपर मढ़ना चाहते हो या दैवको दोष देकर जनता को ही कलङ्कित करते हो ! यह न समझो कि मैं उन कारणोंको नहीं जानता, जिनके कारण साम्राज्यके एक छोरसे दूसरे छोरतक विप्लवका तूफान उठ खड़ा हुआ है। मैं जानता हूँ कि जिस समय तुमने शासनको सूचित किया था कि दक्षिणी साम्राज्यमें अकालकी स्थिति है। वास्तवमें तुम पूँजीपतियोंसे मिलकर वहाँकी समस्त पैदावारको लूट रहे थे और अतिरिक्त लाभके लोभमें तुमने सम्पूर्ण पैदावार पूँजीपतियोंके संरक्षणमें दे दी। तुमने यह समझनेका कोई प्रयत्न न किया कि यदि सम्पूर्ण पैदावार पूँजीपतियोंके भाण्डारोंमें एकत्रितकर दी जायगी, तो पूँजीपति उसी पैदावारको साधारण जनताके हाथ मनमाने भावपर बेचेंगे। खुले बाजार जनता लुटेगी और उसकी आयका शोषण होगा। आज जनताका पूर्णरूपसे शोषण किया जा चुका है। जनता निरपराध है। दैव-दुर्विपाकसे देशके उसी भागमें अकालकी स्थिति भी है। जो कुछ अन्न है भी, वह बड़े-बड़े करोड़पतियोंके अन्न-भाण्डारोंमें सुरक्षित है। मुझे सूचना मिली है कि अन्नके दो दानोंके लिए माँ-बच्चेको, स्त्री अपनी अस्मतको और बड़े बूढ़े अपनी इज्जतको बेच रहे हैं। निरामिष जनता पशु-पक्षियोंके मांसपर दिन काट रही है। यह असह्य स्थिति है। लुटेरे पूँजीपतियोंके अन्न भाण्डार एवं कोष लुटने ही चाहिए। उनके संरक्षणकी बात कहकर उल्टे गरीबोंके रक्तसे होली खेलनेका स्वांग रच रहे हो ! उफ़, यह घृणास्पद है। इसका अन्त होना ही चाहिए।

विचक्षणका मुख पीला पड़ गया। सम्राट अपने आसनसे उठकर टलहने लगे। विचक्षणको सूझ न पड़ा कि सम्राटकी नग्न-स्थितिसे उत्पन्न होनेवाले भयावह परिणामोंसे मुक्तिका कौन-सा मार्ग बताये और अपनेको निर्दोष एवं निष्पक्ष कैसे सिद्ध करे ? अभीतक प्रत्येक गलतीका दायित्व प्रायः अजितके ऊपर डाल दिया जाता था। विचक्षणको

सर्वदा अजितसे भय बना रहता था। अनेक बार साम्राज्यकी जनताने प्रधान आमात्यपर यही दोषारोपण किया था कि वह स्थापित स्वार्थों वाले वर्गका प्रतिनिधि है और विशेषतः वह पूँजीपतियों एवं भू-स्वामियोंके हितोंको राज्यसे संरक्षण दिलानेवाला है। जनता एकसे अधिक बार, प्रधान आमात्यके पदको छीनकर, अजितको देनेका आग्रह भी सम्राटकी सरकारसे कर चुकी थी। आज वे सम्पूर्ण तथ्यसार सत्य बनकर सम्राटकी दृष्टिमें घूम रहे थे। सम्राट धीरे-धीर क्रोधावेशमें अपनेको खोते जा रहे थे।

विचक्षणकी कूटनीति इस बार असफलताके सामने सिसक रही थी। कहाँ तो उसने सोचा था कि विद्रोहकी आग सुलगाकर अजितको विद्रोहका निमित्त सिद्ध करेगा और उन समस्त व्यक्तियोंको बग़ावतका झण्डा खड़ा करनेवाला बताकर, न्याय एवं कानूनकी दृष्टिमें दण्ड देगा, जो विचक्षणके स्वार्थोंके विपरीत दीर्घकालसे शोरगुल मचाते आये थे, किन्तु अबकी बार उसकी दुधारी तलवार उसीके गलेमें पड़नेवाली थी। सम्राटके गुप्तचर विभागने परिस्थितिका सही लेखा-जोखा पूर्व समयसे ही देना प्रारम्भकर दिया था। कदाचित् विचक्षणको यह बात ज्ञात न थी, अन्यथा उसने इसका भी उपचार अवश्य किया होता।

गुप्तचरों द्वारा परिस्थिति की सही जानकारी रखनेके कारण ही सम्राटने विचक्षणको अजितके पास सहयोगकी याचना करने भेजा था। सम्राट इस प्रकार अजितको मिलाकर एक ओर तो प्रजा-रञ्जनका यश प्राप्त करना चाहता था और दूसरी ओर विद्रोहकी आगको प्रज्वलित होनेके पूर्व ही बुझा देना चाहता था, किन्तु विचक्षणकी असफलताके कारण सम्राटके दोनों शुभ संकल्पोंपर पानी फिर गया था।

विचक्षण शीघ्र ही भाँप गया कि उसके दोनों वार खाली गये। वह साहस बटोरकर सम्हल गया। उसे एक चाल सूझी। वह विनयपूर्वक

बोला—"सम्राट ! मैंने सदैव अपनी सेवाओं द्वारा साम्राज्य, राज-वंशकी प्रतिष्ठा एवं गरिमाको अक्षुण्ण बनाये रक्खा है। दुर्भाग्यसे घटनाचक्र मेरी सेवाओंके विपरीत परिणाम सामने ला रहा है। आज मैं प्रथम बार अपने ऊपर सम्राटको क्रुद्ध एवं अप्रसन्न पा रहा हूँ। अतः जबतक मैं दक्षिणी साम्राज्यमें पहुँचकर वहाँकी जटिल परिस्थितिको अपने वशमें न कर लूँगा, तबतक मैं राजधानीसे दूर रहूँगा।"

"और तुम्हारे पदका दायित्व कौन सम्हालेगा ?"

"मेरे सहायक आमात्य !"

"नहीं, यह नहीं हो सकता। तुम्हें राजधानी छोड़नेकी आज्ञा नहीं। परिस्थितियाँ एकके पश्चात् दूसरी जटिलतम होती जा रही हैं। तुम प्रधान सेनापति एवं अन्य मंत्रियोंको बुलाओ। किसी अन्तिम निर्णयतक पहुँचनेके पूर्व हर पहलूसे विचार करना अधिक सामयिक होगा और तब-तक अजितके निर्णयकी प्रतीक्षा करना भी आवश्यक है।"

विचक्षणके आन्तरिक रहस्योंपर जैसे तुषारापात हो गया हो। वह निर्लज्जतापूर्वक भरे हुए मनसे सम्राटको अभिवादनकर लौट पड़ा।

२

विचक्षणके जानेके पश्चात् अजित ने किसान एवं मजदूर संघोंके मन्त्रियोंको एक गश्ती - पत्र द्वारा आवश्यक मन्त्रणाके लिए बुला भेजा। प्रचार साधनोंने महत्वपूर्ण बैठकके रूपमें इस सम्मेलनका प्रचार किया। सम्राटका गुप्तचर विभाग सतर्क एवं तीक्ष्ण दृष्टिसे, हर व्यक्तिको जो अजितसे मिलने आता था, निगरानी

रखता था। शासनिक अव्यवस्था एवं वर्गस्वार्थके कारण जो उपद्रव सम्पूर्ण साम्राज्यमें फैल रहा था, उसका दोषपूर्ण दायित्व अजित जैसे शान्तिवादी नेताके ऊपर मढ़ा जा रहा था। शासनयन्त्रके पदाधिकारी जिस स्वेच्छाचार एवम् अनियन्त्रित ढंगसे शासकीय गाड़ी चला रहे थे, उसका स्वाभाविक परिणाम विनाशके अतिरिक्त और कुछ न हो सकता था। एक ही सप्ताहमें अजितका कार्यालय दूर-दूरसे आये हुए कृषक एवम् श्रमिक प्रतिनिधियोंसे भर गया। सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रगतिशील मस्तिष्क सक्रिय एवं विचार व्यस्त होकर उलझी हुई समस्याओंको सुलझाने जुट गया। मुख्य प्रश्न था—अकाल एवं बेकारीसे उत्पन्न अराजकताका विनाश।

अपने विभिन्न नगर निवासी सहयोगियोंके सामने अजितने राष्ट्रमें फैली हुई भूखमरी-बेकारी एवम् अराजकतापर विस्तृत प्रकाश डाला और साथ ही सम्राट द्वारा सहयोगकी अपीलपर अपने साथियोंका विचार जानना चाहा।

अजितने अपने और विचक्षणाके बीच हुई बातोंको बतलाते हुए कहा—"मैंने स्पष्ट शब्दोंमें विचक्षणासे कह दिया है कि अन्याय एवं अनीतिके विरुद्ध मेरी और मेरे सहयोगियोंकी लड़ाई चलती रहेगी।"

दक्षिणी साम्राज्यके आये हुए प्रतिनिधियोंमेंसे एक प्रतिनिधि जिसका नाम यशवर्द्धन था और जो सम्पूर्ण दक्षिणमें अजितकी भाँति ही जनताकी आशाओंका केन्द्र था, बोला—"साथियो! श्रीअजितकी बातोंको आपने ध्यानसे सुना और यह भी ज्ञात हुआ कि सम्राट और उनका शासन देशमें फैली हुई अव्यवस्था एवं अराजकताको दूर करनेमें अजित और उनके साथियोंका सहयोग चाहती है। सद्व्यवहारका तकाजा तो यही है कि सम्राट और उनकी सरकारको हार्दिक एवं सक्रिय सहयोग दिया जाय, किन्तु प्रश्न उठता है कि क्या इस प्रकार सहयोगकी

माँग अतीतमें भी कभी की गयी थी? क्या हमारे सैकड़ों साथियोंका बलिदान एवं अगणित प्राणियोंके उत्पीड़नकी करुणगाथा भुलाने योग्य है? तड़प-तड़पकर मरनेवाले जिन्दादिल शहीदोंकी तपस्याएँ एवं त्याग साम्राज्यवादियोंके पाशको कठोर बनानेके लिए नहीं है, वरन शोषकों-के सम्पूर्ण मनसूबोंको धूलमें मिलाकर, त्रस्त जनताको निर्भय, गतिशील एवं समुन्नत पथपर अग्रसर करनेके लिए हैं। यह वर्ग संघर्षका युग है। विभिन्न स्वार्थोंके गुटबन्दीकी लड़ाईका है। दलित, त्रस्त, शोषित एवं राजकीय अधिकारोंसे दूर रहनेवाली जनताका अपना अलग अस्तित्व है। भला, सम्राटोंके स्वार्थोंके साथ ऐसी जनताके स्वार्थोंका क्या मेल! शेर और बकरेके सहयोगका क्या अर्थ! मेरी स्पष्ट राय है कि जनताके अधिकारोंकी लड़ाई अनुकूल परिस्थिति पाकर विजयश्री संवरण करने जा रही है। सम्राट, प्रधान आमात्य और उनकी तानाशाही अपने अस्तित्वको बुझते हुए दीपकके लौकी तरह जानकर ही मेल-जोल एवं सहयोगका राग अलाप रहे हैं।''

अजितने यशवर्द्धनके प्रस्तावपर अन्य साथी प्रतिनिधियोंकी राय ली और अन्तमें मतदान करनेपर यशवर्द्धनका प्रस्ताव सर्व-सम्मतिसे स्वीकृतकर लिया गया और निश्चय किया कि तानाशाही एवं सामन्ती शासनको बदलकर जन-प्रतिनिधियोंका पञ्चायती शासन स्थापित किया जावे, जिसमें सर्वहारावर्गका बहुमत एवं आवश्यकतानुसार अधिनायकत्व स्थापित हो।

प्रचार-साधनोंने ''सर्वहाराका अधिनायकत्व'' घोषितकर कृषक एवं मजदूर संघोंके प्रमुख अजितके निर्णयको दूरतक फैला दिया। अजितके निर्णयका देशकी त्रस्त एवं शोषित जनताने स्वागत किया। शीघ्र ही बधाई एवं स्वागतके समाचार देशके कोने-कोनेसे अजितके पास आने लगे। राष्ट्रके विचारोंकी नाड़ीको—अटकलबाजीसे नहीं—वरन् सही-सही जाननेमें अजितको देर न लगी। ज्ञात हुआ कि सम्पूर्ण

राष्ट्रकी शोषित एवं बुभुक्षित जनता अजितके राजनैतिक असहयोग आन्दोलनमें उसका साथ देनेको तत्पर है ।

सम्राटकी सरकार एवं शासक वर्गकी बेचैनीका ठिकाना न रहा । सरकारकी तीक्ष्ण दृष्टि अजित द्वारा चलाये गये असहयोग आन्दोलन एवं उसके पड़नेवाले प्रभावपर थी । शासक वर्ग घबराहट, बेचैनी एवम् अस्थिरताके कारण मृतप्राय सा हो रहा था । एड़ी-चोटीका पसीना एक करके सारा शासन यंत्र इस प्रकार चलाया जा रहा था कि अजित या उनके अनुगामी कार्यकर्ताओंको आलोचना करनेका अवसर प्राप्त न हो किन्तु एक युगसे जो शोषण किया गया था, उसके कारण नंगी-भूखी जनता समझ रही थी कि शोषणके घिनौने एवम् गलित कोढ़को छिपाने-के लिए दान एवम् खैरातकी केशर मली जा रही है फिर भी दूषित वातावरणमें सरकारकी सम्पूर्ण उदारता निष्फल सिद्ध होगी और कुशा-सनमें आमूल परिवर्तन किये बिना विषाक्त वातावरण कभी भी जन-हितोंके लिए स्वास्थ्यप्रद न होगा ।

क्रमशः दो सप्ताह व्यतीत हो गये । सम्राटकी सरकारने लिखित रूपमें अजितसे सहयोगकी याचना की । यद्यपि गुप्तचरों द्वारा शासनको अजितके कृषक एवम् श्रमिक संघोंका निर्णय ज्ञात हो चुका था, किन्तु किंकर्तव्यविमूढ़ शासनके सामने दमनके अतिरिक्त रचना एवम् निर्माणका कोई स्पष्ट कार्यक्रम न था । राजनैतिक दाँव पेंच एवम् कूटनीतिका प्रश्रय लिया जा रहा था । राष्ट्रकी दलित एवम् शोषित जनताके प्रतिनिधि एवम् नेताके रूपमें सम्राटकी सरकारने विषम समस्याओंके समाधानके लिए अजितके पास आमंत्रण भेजा और सम्राट एवम् अजितकी भेंटके लिए एक निश्चित तिथि नियुक्तकर दी गयी ।

साम्राज्यके वैभव सम्पन्न राजप्रासादमें प्रथम बार अजितको भेंट करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ । यद्यपि व्यक्तिगत रूपमें कितनी ही बार

सरकारी कार्यालयमें अजित सम्राटसे मिल चुका था, किन्तु इस बार विशेष प्रयोजन होनेके कारण अतिगुप्त रूपमें अजित और सम्राटकी भेंट राजप्रासादमें ही निश्चित की गयी थी। भेंटके अवसरपर सम्राट एवं अजितके अतिरिक्त अन्य तीसरे व्यक्तिका प्रवेश भी निषिद्ध था। सम्राटके भृत्यों तकको वार्तालाप करनेवाले कक्षसे दूर रहनेका आदेश था। एक प्रकारसे भेंटका उक्त स्थल राजप्रासादके अन्तःपुर एवं सम्राटके निवास-गृहके बीचमें था। हाँ, एक विशेषता यह थी कि जहाँपर अजित एवं सम्राटका मिलन होना था, वह अन्तःपुरमें रनिवासका शयन कक्ष था। एक पतली दीवाल भेंटके स्थलको अन्तःपुरसे अलग करती थी। जाने या अनजाने राजपुत्री भी सम्राट और अजितकी भेंटके अवसरपर उपस्थित थी और दोनोंके बीच होनेवाले सम्भाषणको छिपे हुए गुप्त रूपसे सुन सकती थी!

ज्योंही भेंटके कक्षमें अजितने पदार्पण किया, उसने देखा एक मसनदके सहारे सम्राट भूमिपर ही चिन्तित मुखमुद्रामें उसकी प्रतीक्षा करते हुए बैठे थे।

अजितके अभिवादन करनेपर सम्राटकी ध्यानमुद्रा भंग हुई और उन्होंने अजितको बैठनेका संकेत करते हुए भृत्यको दूर रहनेका आदेश दिया।

सम्राटके सामने ही एक दूसरे मसनदके सहारे अजित बैठ गया और आदरपूर्वक सम्राटसे बोला—"आज्ञा हो, मुझे क्यों बुलाया गया है।"

व्यथा मिश्रित क्षीण मुस्कुराहटके साथ सम्राट बोले—"भाई अजित! आज मेरे तख्तकी लाज एवं वंश परम्पराकी लाज तुम्हारे हाथ है? विशेष कहूँ क्या? तुम जानते हो, सम्राट मैं नहीं विचक्षण है। प्रजाको जिस पीड़ाका बोझ उठाना पड़ा है, उससे मैं अवगत हूँ किन्तु मैं एक स्वतन्त्र स्वेच्छाचारी एवम् निरंकुश सम्राट कहलाकर भी वास्तव

मेंएक वर्ग विशेषका प्रतिनिधि हूँ। मैं नहीं चाहता कि जनता अपार कष्टोंका आलिङ्गन करके भी मेरी ही छत्रछायामें अपना जीवन व्यतीत करे। जनताको पूर्ण अधिकार है कि चाहे तो वह मुझे राजसिंहासनसे च्युत कर दे या निर्वासित कर दे या साम्राज्यकी व्यवस्थाको बदल दे किन्तु मैं जो चाहता हूँ, वह यह कि उत्पात और उपद्रव न हो—राष्ट्रकी शक्ति गृह-युद्धमें विनष्ट न हो—कहीं हमारे राष्ट्रीय कलहका अनुचित लाभ उठाकर अन्य शक्तियाँ हमपर अपना प्रभुत्व न स्थापित करें।"

अजितको ऐसे लगा कि यह तो अहम्मन्यताका उपासक वह सम्राट नहीं, जिसके आदेशों एवं राजकीय घोषणाओंने सारे राष्ट्रको विप्लव एवं तूफानकी आँधियोंसे भर दिया है। यह तो कर्त्तव्य-बुद्धिसे प्रेरित एक सहृदय एवं सदय व्यक्ति है, फिर इसके शासनकालमें जनताको असह्य यंत्रणाओंका बोझ उठाकर क्यों चलना पड़ा है? किन्तु प्रकट रूपमें अजित बोला—"सम्राट! अतीतकालमें शोषणकी चक्की इस प्रकार चली है कि शासन यंत्रने सर्वसाधारणको चूस और पीस डाला है। जनताके हृदयमें ऐसे शासनके प्रति समादरका कोई भाव नहीं। पेटकी ज्वालासे सन्तप्त-अर्द्धनग्न जनताकी सुख-शान्ति अपहरण करनेवाली शासनकला ही सदोष है। लुटी पिसी जनता पूंजी एवम् सामन्तवादी व्यवस्थासे अपनी मुक्ति चाहती है। फिर वह मुक्ति वैध आन्दोलनों द्वारा प्राप्त हो अथवा हिन्सक क्रान्ति द्वारा! यह एक प्रश्न है जिसके समाधानमें राष्ट्रका उन्नत मस्तिष्क सजग है। जहाँतक मुक्तिका प्रश्न है, दो राय नहीं। मुक्ति तो चाहिए ही, किन्तु जहाँ साधन साध्य अनिष्टकारी हैं, वहाँ साधन साध्य दोनों ही सुख-शान्ति एवम् समृद्धमय चाहिए। हमारे कृषक एवम् श्रमिक संघोंने इसे ही अपनाया है किन्तु खेद है कि सम्पूर्ण शासन यन्त्र दमन एवम् उत्पीड़नका सहारा लेकर जनताको निस्तेज एवम् निर्वीर्य बना रहा है। रोगका निदान एवम् उपचार दोनों ही दोषपूर्ण पद्धतिसे किया जा रहा है, इसी कारण रक्तमयी क्रान्तिकी

आशंकासे सिहर उठना पड़ता है। सम्राटने सहयोग माँगा है किन्तु हमारे संगठनका विश्वास सम्राटकी सरकार परसे उठ गया है। फिर भी राष्ट्रकी भुखमरी-बेकारी एवम् अशिक्षाको दूर करनेमें सही दिशामें जो भी सहयोग चाहा जाय उसे देनेको मैं कृतसंकल्प हूँ।''

सम्राटके नेत्र कोरोंमें अश्रु-बिन्दु छलछला आये और रुँधे कण्ठसे वह बोले—''अजित! तुम शासनके दोषपूर्ण होनेके बारेमें जो कुछ कहो, उससे मैं सहमत हूँ किन्तु मुझे भय है कि एक दिन जनताकी रोषाग्निमें पड़कर हम और हमारे बाल-बच्चे भस्म हो जायँगे और हमारे निर्दोष होनेकी परीक्षा भी न हो सकेगी।''

सम्राटके आँसुओंको देखकर अजितका हृदय पसीज उठा वह बोला—निःसन्देह सम्राट! शासनके प्रमुख व्यक्ति होनेके नाते जनताका सारा दोष आपपर ही ढहेगा, यदि समय रहते आप अपनी सफाई न दे सके!''

''इसीलिये तो मैंने तुम्हें बुलाया है, अजित! विचक्षणके पापों एवम् कुकृत्योंका बदला यदि मुझसे लिया जायगा, तो इससे अधिक पछतावेकी क्या बात होगी! मैं अपनी सफाईके लिए और शोषणके पापका प्रायश्चित करनेके लिए तत्पर हूँ। मुझे मार्ग बताओ।''

सम्राटने बैठे बैठे ही दीवालके सहारे एक गुप्त आलमारी खोलकर एक दानपत्र निकाला और अजितके हाथमें देते हुए कहा—''लो, यह मेरी सम्पूर्ण व्यक्तिगत सम्पत्तिका दानपत्र है, जो मैं राष्ट्रकी जनताको भुखमरी एवम् बेकारीसे मुक्त होनेके लिये देता हूँ। मेरा सर्वस्व तन, मन, धन जनताके चरणोंमें समर्पित है मैं मणि-माणिक जड़े हुए सोने, चाँदीके राजसिंहासनका परित्याग करता हूँ किन्तु मैं जनताके हृदय सिंहासनसे निर्वासित नहीं होना चाहता।''

अजितने दानपत्रको ध्यानसे पढ़ा। उसने देखा कि सम्राट वास्तवमें

जनहितके लिए अपना सर्वस्व दान कर रहे हैं। गौरवकी गरिमासे अजितके नेत्र चमक उठे—कृतज्ञता भरे शब्दोंमें वह बोला—"सच-मुच सम्राट जनताका हृदय—सिंहासन आप जैसे सम्राट के लिये सर्वदा उपलब्ध है। आज आप महान् यशके भागी होने जा रहे हैं। आपके प्रदान किये हुए धनसे लाखों, करोड़ों प्राणियोंके जीवनकी रक्षा होगी। दीन-दुःखियोंके आशीर्वादसे आपकी सन्तान अक्षय सुख एवम् पुण्यकी भागी होगी।"

सम्राटने कहा—"अजित ! यह मेरा अपना कुछ नहीं। समय समय पर जनताके द्वारा यह धन मेरे पूर्व पुरुषों और अन्तमें मुझे मिला था। जनताकी धरोहरको, जनताके हितके लिये ही दे रहा हूँ। एक संस्था बना-कर इस धनको काममें लाओ। मैं इस धनके व्यय करनेका सम्पूर्ण अधिकार ओरसे तुम्हें देता हूँ। किन्तु स्मरण रहे कि प्रधान आमात्य विच-क्षणको कानों कान इसकी सूचना न मिले। सचमुच इस नीच ही का विश्वास करके मैंने अपना सर्वनाश किया और आज उसके हाथकी कठ-पुतली हूँ।"

"विचक्षणके प्रभाव एवं चङ्गलसे सारे राष्ट्र एवं आपको मुक्त करनेमें मैं प्रबल सहायक बनूँगा, किन्तु स्मरण रहे कि विचक्षण जैसे कूटनीतिज्ञको मेरे और आपके बीच होनेवाली सन्धिका तनिक भी ज्ञान न हो। भविष्यमें स्वयं जनता सशक्त होकर विचक्षण और उसके कठ-पुतली सहायकोंको न्यायालयके कठघरेमें खड़ा करेगी।"

सम्राटका भार कुछ कम सा हो गया। मुरझाये हुए मुख की मलि-नता दूर हो गई। प्रसन्नताकी स्मित-रेखा सम्राटके मुखमण्डलपर कान्तित हो उठी। अजितको प्रथम बार बोध हुआ कि सम्राटके कुशासनका वास्तविक कारण प्रधान आमात्यका वर्गगत स्वार्थ है। सामन्तवादी स्वार्थोंके संरक्षकके रूपमें प्रधान आमात्य विचक्षण शासन यंत्र चला रहा है।

अजित और सम्राटके बीच कुछ क्षणोंतक विद्रोहके सन्बन्धमें वार्ता

चलती रही। सम्राटने अजितको बताया कि दक्षिणी साम्राज्यकी जनताने बगावतका झंडा खड़ाकर दिया है। साम्राज्यके उस भागमें विद्रोही जनता ने अपनी सरकार स्थापितकर ली है। बहुतसे सेना नायक एवं सरकारके प्रमुख अधिकारी युद्ध में अपने प्राणोंको बलि दे चुके हैं और बचे हुए युद्ध बन्दी रूपमें विद्रोह सेनाके शिविरमें बन्दी हैं।

सम्राटने जानना चाहा कि क्या इस हिन्सक विद्रोहमें अजित का भी हाथ है?

अजितने स्पष्ट बतलाया कि इस संबन्धमें उससे आदेश माँगे गये थे किन्तु परिस्थितिकी सही जानकारी न होनेके कारण उसने अपने सह-योगियोंको जहाँ तक बन सके—संगठित हिन्सक क्रान्तिसे बचनेका आदेश दिया था, किन्तु यह भी उसने स्वीकृति दी थी कि यदि यशवर्द्धन और उसके साथियोंको सम्राटकी सरकार बन्दी बनाये तो जनता स्वेच्छापूर्वक अपना मार्ग चुन ले।

सम्राटने बताया कि दक्षिणी साम्राज्यके राजनैतिक नेता एक बार सरकारा-द्वारा बन्दी बनाये गये थे किन्तु विद्रोहियोंने उन्हें सरकारकी कैदसे छीन लिया है। अब वे स्वतंत्र हैं और सम्भवतः वे दक्षिणी साम्राज्यकी स्वतंत्र सरकार चला रहे हैं।

इस बार अजित ने जानकारीके सम्बन्धमें अपनी असमर्थता प्रकटकी।

सम्राटने बताया कि विचक्षण एक विशाल सैन्य लेकर उस ओर जानेवाला है किन्तु मेरी अस्वीकृतिके कारण वह सैन्य भेजनेका चुपचाप आयोजनकर रहा है। हाँ, मेरी स्थिर राय है कि यदि वहाँकी जनता नवीन सरकारका स्वागत करती हो, तो मुझे उस सरकारको मान्यता देनेमें कोई आपत्ति नहीं।

कुछ समयतक सम्राट एवं अजितमें गुप्त वार्ताएँ चलती रहीं। अन्तमें अजितने कहा—"आप विचक्षणको दक्षिणी साम्राज्यकी ओर

जानेकी स्वीकृति दे दें। मैं समझता हूँ कि महोन्मन विचक्षणको उचित शिक्षा प्राप्त करनेके लिए दक्षिणकी ओर जाना ही चाहिए।"

सम्राटकी चिन्ता अजितसे मिलकर बहुत अंशोंमें दूर हो चुकी थी। वह प्रसन्न मनसे बोल उठे—"अच्छी बात है, मैं प्रधान आमात्यकी दक्षिणी यात्राका स्वागत करता हूँ। आज ही मैं अपनी स्वीकृति उन्हें दे दूँगा।"

अजित सम्राटको अभिवादनकर चलनेको उद्यत हो ज्यों ही अपने स्थानसे उठा, उसने देखा दो चमकते हुए नेत्र शयन-कक्षके झरोखोंसे उसे झाँक रहे थे। क्षणभरके लिए अजितकी दृष्टि उन नेत्रोंसे उलझकर स्थिर हो गयी। अजितको ज्ञान हुआ—जैसे सम्राट और उसके बीच होनेवाली भेदकी वार्ताको उस मूर्तिने जान लिया हो।

अजितने सम्राटसे पूछा—ऊपरके कक्षमें किसका निवास है।

"राजकन्या का? क्यों, क्या बात है?"

"और तो कुछ नहीं! केवल यह सन्देह हो रहा है कि कहीं दिवालोंकी ओटमें विचक्षणका गुप्त दल कार्य न कर रहा हो!

सम्राटका माथा ठनका। वह उलटे पाँव शयन कक्षकी ओर बढ़े। वहाँ शाहजादीको अकेला पाया। सम्राटको देखकर उनकी लाड़िली कन्या पूछ उठी—"पिताजीका मेरे कमरेमें अचानक आगमन क्यों?"

"एक आवश्यक कार्य है, बेटी!"

"वह क्या!"

"यह बताओ कि यहाँपर तुम्हारे अतिरिक्त और कौन था?"

"मेरी अङ्गरक्षिका सखी!"

"कौन! विरूपाक्षी?"

"हाँ, पिताजी!"

"वह कहाँ है?"

"अभी-अभी किसी कार्यवशात् नीचे गयी है।"

"अच्छा जाओ—उसे महलसे बाहर जानेसे रोक दो। साथ ही मेरे पास बुला लाओ।"

पिताकी आज्ञा पाकर शाहजादीने आज्ञा दी और अन्तःपुरसे बाहर जानेवाली विरूपाक्षीको अन्य दासियोंकी मददसे शीघ्र ही वापस लौटा लायी।

विरूपाक्षी अपनेको सम्राटके सामने देखकर काँप उठी। सम्राटने पूछा—"तुम कहाँ जा रही थी?"

"अपने निवास स्थान!"

"क्यों, तुम्हारा आजका कार्यकाल समाप्त हो चुका, क्या?"

"नहीं सम्राट! मुझे अपने आवश्यक कार्यके लिए बाहर जाना था।"

सम्राटके नेत्र क्षणभरमें आरक्त हो उठे। उन्होंने अन्य दासियोंको तलाशी लेने की आज्ञा दी। विरूपाक्षीके हृदय-प्रदेशसे छिपा हुआ एक पत्र मिला, जिसे सम्राटने छीनकर विरूपाक्षीको अन्तःपुरमें ही बन्दिनी बनाकर अन्य दास-दासियोंको सतर्क दृष्टि रखनेकी आज्ञा दी।

पत्र पढ़ते ही सम्राटको ज्ञात हुआ कि विचक्षणका गुप्तचर विभाग अन्तःपुरके रहस्यों तकसे उसे परिचित कराता रहता है।

सम्राट अपने कमरेमें आकर अजितको विदा करते हुए बोले—"सचमुच तुम्हारे संकेतका तत्काल परिणाम निकल आया। यह देखो, एक पत्र है, जिसमें हमारे-तुम्हारे बीच हुई बातोंका सांकेतिक शब्दोंमें भेद लिखा गया है। अन्तःपुरके बाहर भेद ले जानेवाली राजकुमारीकी एक विदुषी अङ्गरक्षिका है। मैंने उसे अन्तःपुरके बन्दी-गृहमें डाल दिया है। उसके द्वारा अन्य अनेक रहस्योंका उद्घाटन होगा।"

अजित विदा लेकर सीधे अपने कार्यालय पहुँचा, किन्तु अपने और सम्राटके बीच हुई सम्पूर्ण बातोंको गुप्त रक्खा।

देशके विभिन्न भागोंसे अजितके नाम आये हुए संदेश, पत्रादि उसके लिए ज्योंके त्यों रखे थे। वह शीघ्रतापूर्वक उक्त पत्रादिकोंको पढ़ता हुआ दक्षिणी साम्राज्यसे भेजे गये एक पत्रको आतुरतासे खोलने लगा। अजितको उस पत्रकी प्रतीक्षामें एक-एक क्षण चिन्तासे काटने पड़े थे। वह पत्र उसीके प्रियसखा एवं कृपा-पात्र साथी यशवर्द्धनका था। पत्र इस प्रकार था :—

'आदरणीय साथी अजित !,

हमारी रक्तहीन क्रान्ति सफल हुई। विचक्षण के कृपापात्र सूबेदार-सेनानायक एवं प्रधान कर्मचारी हमारे कृषक एवं श्रमिक संघकी अक्षुण्ण एकता में षड्यन्त्रपूर्वक फूट डालनेमें असफल हुए। विचक्षणकी कूटबुद्धि कृषकों एवं श्रमिकोंकी इकाईमें फूट डालकर प्रलोभनों-द्वारा उन्नत कार्यकर्ताओंको अपनी ओर मिला लेनेवाली थी। विचक्षणका यह कार्य विशेष प्रयोजनमय था। वह चाहता था कि बुभुक्षित जनता वस्त्रहीनताके अभिशापसे द्विगुणित पीड़ित हो और उस समय अपने नियुक्त किये हुए दलालों द्वारा वस्त्रको सर्वसाधारण जनता एवं छोटे व्यवसाइयोंके लिये दुर्लभकर दें। उस प्रकार नंगी भूखी जनता हिंसक क्रांतिके लिए उद्यत हो। उस समय साम्राज्यकी ओरसे सैन्य-योजनाओंमें व्यय होनेवाले आर्थिक स्रोतोंको अपने विशेषाधिकारमें लिये हुए अपने आपको मालामाल किया जाय।—'

'धनोपार्जनका ऐसा निन्दनीय एवम् क्रूर कर्म-ठीक उस समय, जब सम्पूर्ण राष्ट्रकी जनता दाने-दानेकी भिखारी हो, और जब देशकी माँ-बहिनोंकी मर्यादा वस्त्रहीनताके कारण लुट रही हो, तब विचक्षण जैसे नर-राक्षसोंद्वारा मांसहीन हड्डियोंसे यह हिंसक खिलवाड़ ? किन्तु दक्षिणी साम्राज्यकी जनतासे विचक्षणकी क्रूर-धन-संग्रह-वृत्ति छिपी न रह सकी ! जनताने सामूहिक रूपसे अहिंसक नियंत्रणके भीतर रहकर पूँजीपतियोंकी दूकानोंपर अधिकारकर लिया और जीवन-निर्वाहकी

सम्पूर्ण वस्तुओंकी आवश्यकतानुसार जनतामें वितरितकर दिया। कोई लूट या छीना-झपटीका प्रश्न ही नहीं उठा। जनता हमारे संघोंके कार्यकर्ताओंकी सेवाओंसे प्रसन्न हो उठी। उसके कष्ट कुछ कम हुए। वस्तुओंके वितरणका लेखा-जोखा सरकारकी तरह ही नियमानुकूल बनाया गया है। इससे कार्यकर्त्ताओंकी दक्षता एवं सामूहिक सेवाका हृदयग्राही भाव स्पष्ट विदित होता है। ज्ञात होता है कि विपत्तिकालमें ऐसे ही सैन्य सेवकोंकी सेवाओंसे जनताकी पीड़ाएँ दूर होती हैं।'

'किन्तु इन सेवकोंको विद्रोही बताकर विचक्षणके दलालोंने न्याय और सुव्यवस्थाके नामपर भीषण नरमेध-यज्ञ प्रारम्भकर दिया। दली-मसली जनताकी पीड़ाएँ-एक निश्चित पराकाष्ठाका अतिक्रमणकर चुकी थीं। भूख और नंगेपनने उन्हें असहिष्णु बना दिया था। सरकारी दमन उनके लिए वरदान लेकर आया था। उन्होंने आपसमें गोष्ठीकी और निश्चय किया कि तिल तिल जलकर भूखों मरनेसे अपने अधिकारोंके लिए, सरकारके दमनद्वारा, मर जाना अधिक श्रेयस्कर है।'

जनता सरकारके हिन्सक अस्त्रोंके सम्मुख शान्तिपूर्ण तरीकोंसे पूर्ण असहयोगका नारा देते हुए डट गयी। सामन्ती सरकारकी एकतंत्रवादी सेना निरीह प्राणियोंके रक्तसे होली खेलने लगी। नेताओं और जनताके प्रतिनिधियोंको क्रूरतापूर्वक बन्दी बनाया गया। बस, फिर क्या था? जनता जो सर्वदा जोर और जुल्मोंसे सताई गई थी, संहारक-सरकारके अस्तित्वको मिटा देनेमें जुट गयी। कत्ले आम हुआ। रक्तकी नदियाँ बही। निरीह प्राणियोंके शव-शरीर गली-वीथियोंमें (अपावन) की भाँति पड़े मिले। इस निर्दय रक्तपातका प्रतिकार करने चली! मरणशील-नंगी-भूखी निर्वीर्य एवं निस्तेज जनता!'

किन्तु न्यायके देवताने भीषण बलिदान लेकर अन्तमें जनताको साथ दिया। एक उद्देश्यके लिए मरनेवाली संगठित असन्तुष्ट जनता सरकारके लिये अभिशाप सिद्ध हुई। सामन्ती सेनानायक पराजित हुए

जनताकी पञ्चायतने उन्हें आततायी सिद्ध किया। न्याय मांगनेपर उन्हें घृणित-शोषक कहकर पुकारा गया। उन्हें प्राण-दण्ड मिला।'

'कुछ ऐसे भी अधिकार हैं, जिन्हें संक्रमण-कालमें जनता काममें लाती है। साधारण एवं पराजित जनता किसी परिस्थितमें स्वयं राजसिंहासन पर आसीन हो जाती है और पतित शासकोंको प्राण-दण्ड देती है।'

'इतिहासकी ऐसी ही पुनरावृत्ति इस समय हुई। सारी सरकार उलट दी गयी है। सामन्तों एवं पूँजीपतियोंके दलालोंके स्थानपर जनताकी पंचायत शासक है। जनताकी बेकारी दूर करने और निर्माण कार्यको फैलनेमें एक सीमातक अकालकी विपत्ति दूरकी जा रही है। महान परिवर्तन है। युगान्तरकारी कठोर परीक्षाकी कसौटी पर कसे जा रहे हैं। विजय हमारी है। हम स्वयं शासक एवं-स्वयं शासित हैं।

आप लिखें कि विचक्षण किस षडयंत्रमें लीन है? स्वार्थोंका प्रतिनिधि घोषितकर साम्राज्यकी प्रान्तीय सरकारोंको आदेश दिया है कि सरकारें जिस व्यक्ति या समूहको अराजकतावादी समझें, उसे शीघ्र ही प्राण-दण्ड दें। एक प्रकारसे सम्पूर्ण राष्ट्र सैनिक अधिकारियों द्वारा शासित है। हाँ, हमारे प्रान्तमें जहाँ जनताने पंचायती शासन पद्धति स्वीकारकर ली है---भीषण उपद्रव रक्तपात एवं मारकाट होता है। जनता धनसे हीन है। देखें पंचायती सरकारका कैसा भविष्य हो। संभव है, शीघ्र ही हमारी पंचायतोंका जाल सम्पूर्ण राष्ट्रमें बिछ जावे। और प्रभुत्व-सम्पन्न-पंचायती राज सब सुख-शान्ति एवं शिक्षाका केन्द्र बनें।

'सम्राटकी भेंटका परिणाम !'

आपका ही—

यशवर्द्धन

पत्र पढ़ते ही अजितको ज्ञात हुआ, जैसे उसकी तपस्या फलदायिनी सिद्ध हुई हो। अजित शेष पत्र छोड़कर प्रथम बार जीवनमें सुखमय कौतूहल-सा अनुभव करते हुए एकान्तकी ओर चल पड़ा।

इधर विचक्षणके गुप्तचरोंने सम्राट् एवं अजितके एकान्त मिलनका सविस्तृत ब्यौरा उसकी जानकारीके लिये भेज दिया। विचक्षणको सम्राट-द्वारा प्रदान किये गये व्यक्तिगत वसीयतनामेके भेदका भी ज्ञात हो गया। उसने मन हीमें विचार किया कि यदि विद्रोहियोंको सम्राटके अतुल सम्पत्तिकी सहायता मिली, तब फिर सामन्तोंके वर्गगत स्वार्थोंकी चिता धधकनेमें अधिक देर नहीं है, किन्तु क्या सम्राट् अपने परम्परागत अधिकारों एवं सम्पत्तिको जनतामें प्रदानकर स्वयं अस्तित्वहीन न बन जायँगे? क्या सम्राट्ने अपनी सन्तानोंके मुखकी रोटी एवं पदकी महत्ताको उपद्रवियोंके हाथों समर्पित करके भयानक भूल नहीं की है?

इधर विरूपाक्षीके बन्दिनी बननेके कारण सम्राट्को अगणित षड्यन्त्रोंका भेद भी ज्ञात हो जायगा और मुझपर जो रहा-सहा विश्वास अवशेष था, वह भी मिट जायगा। संभव है, विरूपाक्षीके अतिरिक्त अन्य भेदियोंकी जानकारी भी सम्राटको हो जावे और वे सबके सब दंडित होकर मेरे ही प्रतिकूल बन जावें!

विचक्षणके पाँव-तलेकी भूमि खिसकने-सी लगी। वह कर्म ठोंककर निराश स्वरमें अपने आप ही बोल उठा—"अच्छा है, सम्राट्ने जो आग लगायी है, उसका भीषण परिणाम उन्हें भी भोगना पड़ेगा। विचक्षणकी नींव दृढ़ है। वर्तमान मन्त्रिमण्डलको सहसा भंगकर देनेकी क्षमता सम्राटमें नहीं है, किन्तु हाँ अजितका सहयोग सम्राटके लिए वरदान सिद्ध हो सकता है।"

अभी विचक्षण सोच ही रहा था, कि अजितको जो सम्पत्ति सम्राटने प्रदान की है वह किसी प्रकार उसे न प्राप्त हो सके, अन्यथा दक्षिणी साम्राज्यमें विद्रोहियोंका फौलादी आतङ्क एवं प्रभाव बढ़ जायगा, और सम्भव है विचक्षणको सम्राट उसके पदसे उठाकर फेंक दें। सहसा दक्षिणी साम्राज्यमें हुए वीभत्स नरमेध एवम् विचक्षणके नियुक्त किये हुए सैनाधिकारियों एवम् शासकोंकी पराजय एवम् मृत्युका समाचार विश्वस्त

दूतों-द्वारा प्राप्त हुआ। अभी विचक्षण सम्राट्से निबटनेकी युक्ति सोच भी न पाया था कि सहसा इस सर्वनाशी सूचनाने विचक्षणको मृत प्राय-सा कर दिया। मृत्यु दण्डके पूर्व रक्तकी लालिमासे लिखा गया उसके प्रमुख सहयोगीका वह पत्र मिला, जिसमें सामन्तोंकी एकत्रित पूँजीसे व्यापार-द्वारा दक्षिणी साम्राज्यकी जनताको लूटने एवं शोषण करनेका जो भयानक षड्यन्त्र दीर्घकालसे चलाया जा रहा था, उसके सर्वनाश एवं सामन्ती स्वार्थोंके चिर-मरणकी करुणगाथा अङ्कित की गयी थी। पत्रके एक-एक शब्दमें सामन्ती अस्तित्वके प्रति तीव्र निराशा एवम् वर्षों-के उपार्जित धनके लूटकी प्रतिशोधमयी कथाका वर्णन था। पत्रके अन्तिम शब्दोंमें करुण भाव व्यक्त करते हुए लिखा गया था कि शता-ब्दियाँ एवं सहस्राब्दियाँ व्यतीत होंगी, किन्तु सामन्ती वैभवकी वे महान् सम्पन्न घड़ियाँ इतिहासके नीरव पन्नोंमें पढ़नेको न मिलेंगी!

विचक्षण, अन्याय-द्वारा उपार्जित सम्पूर्ण पूँजी एवं अभिन्न सह-योगियोंके विनाशकी कथा पढ़कर अचेत हो गया। पीड़ाओं एवं निरा-शाओंके विषैले दंशनसे उसकी महत्वाकाक्षाएँ विलखकर रो पड़ीं। वह आत्म-प्रतारणाका स्वयं-स्रष्टा बना हुआ मृत पिण्ड-सा बेसुध होकर भूमिमें गिर पड़ा। पर-पीड़न एवं पापकी कमायी हुई सञ्चित सम्पत्तिके विनाशने उसके मृत्युकी घड़ियोंको अधिक निकट ला दिया। दास-दासी उसकी ऐसी दशा देखकर घबड़ा उठे। चिकित्सक आये और विचक्षण-की चेतनाको पूर्वावस्थामें लानेका प्रयास करने लगे। वह पत्र पास ही पड़ा था। चिकित्सकोंने उसे पढ़कर विचक्षणकी दुरावस्थाका कारण जान लिया। उपचार प्रारम्भ हुआ। विचक्षणकी खोयी हुई चेतना लौटी किन्तु मानसिक अशान्तियोंको साथ लिये हुए। चिकित्सकोंने पूर्ण विश्राम की सलाह दी। निराश दृष्टिसे शून्य छतको देखता हुआ विचक्षण रुग्ण-शैयाका सेवन करने लगा।

सम्राट्, बन्दिनी विरूपाक्षीके समीप जाकर अनेक रहस्यमय षड्यंत्रोंकी

जानकारीमें जुट गये। विरूपाक्षीने विचक्षण-द्वारा नियुक्त किये गये भृत्यों एवं दासियोंके एक विशेष समुदायको बतलाया जिनका एक जाल-सा अन्तःपुरमें और बाहर बिछा हुआ था, जो सम्राटके क्षण-क्षणकी सारी कार्यवाहियों एवं अनेक आयोजनाओंको विचक्षणसे प्रकट कर देते थे।

सम्राटके नेत्र खुले। उन्हें प्रथम बार ज्ञान हुआ; जैसे वे अपने ही दास-दासियोंके विकट-पाशमें जकड़े हुए हैं। उनका हृदय विचक्षणके प्रति घृणासे भर गया। वे पछतावेके साथ अपनी कन्यासे बोल उठे—"मृणालिनी, जिस विचक्षणको मैंने महा-आमात्यके पदपर प्रतिष्ठित किया, उसी कृतघ्नने मेरा, मेरी जनता एवं सम्पूर्ण साम्राज्यका विनाश कर दिया। साम्राज्यके एक छोरसे दूसरे छोरतक उसीकी तूती बोलती थी एवं उसीके आदेशों-द्वारा सम्पूर्ण साम्राज्यका शासन चलता था। इससे अधिक भयानक नीचता और क्या हो सकती है! यदि आज साम्राज्यकी जनता विद्रोही है, तो मुझे पूर्ण विश्वास हो चला है कि द्रोहके बीच विचक्षणके बोये हुये हैं।"

मृणालिनी—जो सम्राटकी एकमात्र सन्तान थी—जो विचक्षणके नीचा कार्य-कलापोंसे पूर्व परिचित थी—और विचक्षणकी घृणा करते हुये भी पिताके भयसे जो विरोध न करती थी—आज सहसा बोल उठी—"पिताजी, मैं तो इस नीचसे आपको सावधान करना चाहती थी, क्योंकि इसकी महत्वाकांक्षा महा-आमात्य बनकर ही परिपूर्ण न हो पायी है, बल्कि वह स्वयं सम्राट बननेका भीषण षड्यन्त्र दीर्घकालसे करता आ रहा है। उसने गुप्तरूपसे एकसे अधिक पत्र इसी विरूपाक्षी-द्वारा मेरे पास भिजवाये हैं, जिसमें उसने स्पष्ट लिखा है कि यदि मैं उसके पुत्रसे विवाहकर लूँ तो साम्राज्ञी बनूँगी अन्यथा किसी छोटे-मोटे राजाके साथ विवाहकर दासियों भी निकृष्ट जीवन व्यतीत करूँगी।"

सम्राट्का सुप्त स्वाभिमान जाग्रत हो उठा—"ओह नीच!"—वह

बोले—"मेरी जूतियोंको अभिवादन करनेवाला मेरे रक्तसे हँसी करे—किन्तु मुझे आज ज्ञात हुआ कि इसके इशारेपर चलकर मैंने अपने आपको बन्दी बना डाला है। सारे मन्त्री इसकी हाँमें हाँ मिलानेवाले हैं। बहुमतका नाटक रचकर यह मेरी अवज्ञा करता आया है और परिस्थितियोंसे विवश होकर मैंने कभी विरोध नहीं किया, किन्तु अब असह्य है। ऐसे कृतघ्न पशुके दाँत उखाड़ने पड़ेंगे; अन्यथा जाने-अनजाने यह मेरा सर्वनाशकर बैठेगा।"

समाटने सन्देह युक्त दास-दासियोंको बन्दी बनाकर अन्तःपुरके सम्पूर्ण खालसाओं एवं खिदमतगारोंका परिवर्तनकर दिया। प्रथम बार सम्राटने अजितको पत्र लिखकर गुप्तरूपसे ऐसे व्यक्तियोंको अन्तःपुरकी सेवा एवं टहल में रक्खा, जो सम्राटको किसी भी क्षण धोखा न दें—जो राष्ट्र-प्रेमी हों और जिनका विचक्षणसे विरोध रहा आया हो।

अजितकी सहायताने सम्राटके समीप एवं शाही अन्तःपुरमें ऐसे व्यक्तियोंकी भरमारकर दी गई जहाँ विचक्षणकी दाल न गल सके और अनेक गुप्त एवं प्रकट षड्यंत्रोंकी सूचना अजितको मिलती रहे।

विचक्षण-द्वारा नियुक्त किये गये दास-दासियोंके समूहने प्राण-दण्ड एवं कठोर यातनाओंके भयसे वे सारे भेद सम्राट और न्यायाधीशको प्रकटकर दिए, जिनके कारण अतीतमें अन्याय और दमन किये थे और भविष्यमें भी ऐसी कार्यवाहियों-द्वारा भयानक भूलें घटित होनेवाली थीं।

जब तक विचक्षण स्वास्थ लाभकर साम्राज्यके शासन प्रबन्धमें हाथ बटाये, तब-तकमें शाही भवनमें आमूल परिवर्तन होकर शासन और साम्राज्यकी सही सूचना देनेवाले कृतज्ञ दास-दासियों-द्वारा अन्तःपुरका सारा कार्य चलने लगा।

सम्राटने जनता एवं अजितके सहयोगसे विचक्षणके विरुद्ध जुल्म-ज्यादतियोंकी एक ऐसी सूची तैयारकी, जिसकी खुली जाँचके लिए एक

चुने हुए पंचोंकी न्याय-समिति स्थापित करनेकी सम्राटको स्वीकृति देनी पड़ी। विचक्षणके पापका घड़ा लबरेज़ भरा हुआ दिखायी पड़ा। प्रधान आत्मात्यके पदका भार वहन करते हुए—पञ्चायती न्याय समितिके समक्ष घुटने टेकनेके लिए विचक्षणको राजी होना पड़ा। विचक्षणके साथही उसके सहयोगी मंत्रियोंके अपराधोंकी सूची तैयार थी। विचक्षण एवं उसके सहयोगी मंत्रियोंपर मोटे मोटे आरोपित दोष निम्न थेः—

(१) आर्थिक स्रोतोंपर विचक्षण एवं उसके पिट्ठुओंका एकाधिकार और जनताके नामपर वर्ग विशेषके स्वार्थोंके संरक्षणके लिए उनका व्यय।

(२) सरकारी पदोंपर प्रतियोगिताका सिद्धान्त लागू किये बिना गुट-बन्दीके आधारपर नियुक्ति।

(३) शान्ति एवं सुरक्षाके नामपर जान सेवकोंका दमन एवं स्वेच्छाचारको प्रोत्साहन।

(४) औषधालयों एवं शिक्षण संस्थाओंपर होनेवाले व्यय द्वारा सामूहिक शिक्षा पद्धति एवं उपचारके नामपर शासक वर्गके सगे सम्बन्धियोंको निशुल्क शिक्षा एवं दवा-दारूकी सहायता।

(५) कृषि एवं निर्माणपर होनेवाले व्ययके द्वारा सामन्तों जागीर-दारों एवं धनिकोंकी चरमोन्नति।

(६) गरीबी, बेरोजगारी एवं अकाल निवारणके नामपर सरकारी आय द्वारा धनिकों, साधन सम्पन्नों एवं भूस्वामियोंके बीच-बीच खाद एवं सरकारी सहायताका वितरण।

(७) न्यायालयों एवं पंचायतोंके प्रमुख पदोंपर विचक्षण द्वारा नियुक्ति।

(८) वैदेशिक सन्धि-विग्रह एवं व्यापारिक समझौतोंपर हस्ताक्षर करनेवाले विचक्षणके प्रमुख षड्यंत्रकारी कृपा पात्र।

(६) भाषण—लेखन स्वतंत्रताके नामपर विचक्षण एवं उसके मंत्रि मण्डलका यशोगान। विपरीत टीका-टिप्पणी करनेवालोंको अराजकता-वादी बतलाकर भीषण दमन।

(१०) सेना एवं गृह-रक्षक-दलोंपर विचक्षण का आधिपत्य।

कहना न होगा कि सम्राटकी भृकुटि-बक्र होते ही विचक्षण, षडयंत्रों-की विकट पृष्ठभूमिका सहारा लेकर ही अपनेको पन्चायती न्यायालयके सम्मुख निर्दोष एवं निष्पक्ष सिद्ध करनेमें प्राणपनसे चेष्टा करने लगा किंतु दूसरी ओर दक्षिणी साम्राज्यकी पुनरावृत्तिके लक्षण दीख पड़ने लगे। दक्षिणमें सरकारी प्रशासनका पुनः स्थापित करना तो दूर रहा, पूर्व-पश्चिम एवं उत्तरमें होनेवाले घातक उपद्रवोंने साम्राज्यकी शिला-दण्डको हिला दिया। विचक्षणकी महत्त्वाकांक्षा विधवाके करुण जीवनकी तरह रो पड़ी।

एकके पश्चात् एक, विचक्षणकी सभी सेनाके अधिकारी-मित्र मृत्युके ग्रास बनने लगे। जिनकी पराजय कभी सुनी नहीं गयी, वे अराजक गृह-युद्धमें नङ्गी-भूखी जनताके कोप भाजन बनने लगे। जितना ही वे दमनको पराकाष्ठा तक ले जानेका प्रयास करते थे, उतना ही वे विफल होते जाते थे। सामर्थ्य एवं शक्तिका प्रदर्शन तथा प्रयोग घातक सिद्ध हो रहा था। गृह-रक्षा-दलों एवं सैन्य टुकड़ियोंमें भी विद्रोहके स्फुलिङ्ग चमकने लगे थे। वर्ग चेतनताने सिपाहियोंको विवश कर दिया कि वे निहत्थे एवं नङ्गे-भूखोंपर अस्त्र-शस्त्र प्रहार करनेके स्थानपर या तो आत्मघात कर लें या विद्रोहियोंसे मिलकर अन्याय एवं अनाचारका प्रतिकार करें!

सत्ताधारियोंकी स्थिति विषम हो चली थी। अब अजितके शक्ती-पुत्रोंने साम्राज्यके कोने-कोनेमें असहयोग एवं कर-बन्दीकी वैधानिक लड़ाईको तीव्र कर दिया। सरकारी पदोंपर काम करनेवाले उच्च, मध्यम एवं निम्नवर्गके कर्मचारियोंको महीनोंसे वेतन नहीं प्राप्त हो रहा

था। वे सबके सब विचक्षणपर झुँझला रहे थे। जब तक स्थान विशेष का प्रबन्ध विचक्षण करे, तब तक अन्य स्थानोंमें विशेष बाधाएं उपस्थित हो जाती थीं। बिगड़ी हुई परिस्थितिका सन्तोषजनक सुधार विचक्षणके मन्त्रिमण्डलके लिए असम्भव बनकर आया था।

इधर सम्राट राजधानी छोड़कर सम्पूर्ण साम्राज्यका दौरा करने निकल पड़े थे। जिन भागोंमें शोषण, उत्पीड़न अकाल एवं बेकारी घर बनाये हुए थे, उन्हीं स्थानोंमें अजितके कृषक एवम् श्रमिक संघोंके कार्यकर्ताओंकी सहायता लेकर अन्न, वस्त्र एवम् आर्थिक सहायताके वितरणके लिये सहयोगी समितियोंकी स्थापना करने लगे थे। सम्राट अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति पानीकी भांति बहाकर जनताके आशीर्वादके भागी बनते जा रहे थे। जनता सम्पूर्ण अव्यवस्थाका दायित्व विचक्षणके ऊपर मढ़ने लगी थी और यही करना सम्राटका प्रयोजन भी था।

विचक्षण सम्राटके पतनके लिए प्रयत्नशील था। उसने बड़े-बड़े सामन्तों एवम् भूस्वामियोंको संगठन सूत्रमें एक करके सम्राटके पद-च्युत करनेका प्रयास खुले रूपमें प्रारम्भ कर दिया। उसे अभिमान था कि सम्पूर्ण प्रजाकी बागडोर उसके हाथमें है और सम्राट निमित्त-मात्रके लिए वैधानिक प्रमुख हैं।

अजितने सम्राटके प्रति सर्व साधारणकी सामूहिक घृणाको प्रेम और सहानुभूतिमें बदल दिया। जनताके हितोंको लाभ पहुँचानेके लिए सम्राटका खुला खजाना एक ऐसा प्रमाण बन गया था कि विचक्षणके कोरे प्रचारका कोई प्रभाव न जम पाया था। जितना ही विचक्षणके मन्त्रि-मण्डल द्वारा जनताकी दृष्टिमें समाटको गिरानेका प्रयत्न किया जा रहा था, उतनी ही जन-जनके मनमें सम्राटके प्रति श्रद्धा बढ़ती जाती थी। वास्तवमें सम्राटके सर्वस्व त्याग एवम् अजितके सहयोगने राज वंशकी प्रतिष्ठाको एक बार पुनः सुदृढ़ कर दिया।

दीर्घकाल तक अजित, सम्राट एवं विचक्षण अलग-अलग दौरा करते रहे। विचक्षणको ज्ञात हो गया कि सम्राट या अजित द्वारा किसी भी क्षण उसका और साम्राज्यमें फैले हुए उसके शक्तिशाली गुटका विनाश होना सम्भव है, इसलिए वह पुनः राजधानी लौट आया।

विचक्षण अबकी बार निर्दय बनकर सम्राटके जीवनकी इतिश्री करना चाहता था। उसे एक युक्ति सूझी। जब उसने देखा कि सम्राटके पुनः बढ़ते हुए यश एवं प्रभावकी देदीप्यमान दीप शिखा, उसके जीवन एवं शक्तिको भस्म कर देगी, तभी उसने अपनी ओरसे सहायता पहुँचाकर एक पुराने रसोइयेको साम्राज्यके सर्वश्रेष्ठ नगरमें उत्तम पक्वान्नोंकी दूकान खुलवाने भेजा। विचक्षणको गुप्तचरों द्वारा सूचना प्राप्त हो चुकी थी कि सम्राट उस नगरमें रुकते हुए राजधानी लौटेंगे।

विचक्षणने गुप्त रूपसे ऐसा प्रबन्ध किया कि वह पक्वान्नोंका व्यवसायी शीघ्र ही वहांके कृषक एवम् श्रमिक संघोंका सदस्य बन जाय और जब सम्राट उस नगरकी जनताके दुःख दर्दोंकी गाथा सुनने जावें तब वह प्रजाके नाते सम्राट एवम् प्रमुख राजनैतिक कार्यकर्ताओंको आमन्त्रित करे और विष द्वारा सम्राटके जीवनका विनाश कर दे।

होनहार प्रबल होती है। उसे कौन रोक सकता है! विचक्षण जिस महानाशका सूत्रधार बनने जा रहा था, वह सम्राटको उस नगर तक खींच लायी। विचक्षणका षड़यन्त्र सफल सिद्ध हुआ। सम्राट उस नगरमें सप्ताह भरके लिये ठहर गये। जनता अपनी करुण जीवनगाथा सुनाने सम्राटके समीप पहुँची। सम्राट ने नगरकी नंगी-भूखी जनताके लिये अन्न वस्त्र एवम् आजीविका उपार्जनके साधन जुटानेमें बहुत अधिक धन दान दिया। सम्राटकी सहानुभूति एवं विश्वास प्राप्त करनेके निमित्त पक्वान्नोंके व्यवसायीने अपनी ओरसे स्वयं धन दान किया और विचक्षणके गुटके बड़े-बड़े सामन्त सरदार एवम् पूंजीपतियों द्वारा भी जनताके सहायतार्थ धन दिलाया।

उक्त व्यवसायीके सहयोग प्रदान करनेपर सम्राट बहुत प्रसन्न हुए और व्यवसायीको आदर प्रदान करते हुए सम्राटने अपनी ओरसे पारितोषिक देनेकी इच्छा व्यक्त की। चालाक व्यवसायीने सम्राटको अपने विश्वास-सूत्रमें जकड़ लिया और आमन्त्रण देकर अन्तमें सम्राटको बुलाया ही।

कृतज्ञ व्यक्तिकी तरह सम्राटने व्यवसायीका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और उसके निवास स्थल तक जाकर भोजन करनेसे अनिच्छा प्रकट की फिर भी एक विशेष पेय पदार्थके साथ उसने सम्राटको विष खिला दिया। इतिहास इस बातका साक्षी है कि बड़े-बड़े साम्राज्योंका विनाश विश्वासघात द्वारा ही हुआ है।

सम्राट उस व्यवसायी का अतिथ्य ग्रहण करते हुए कृतज्ञ भावसे अपने निवास स्थल लौटे। विष इतना धीरे किन्तु स्थायी सर्वनाशी प्रभाव डालनेवाला था कि सम्राट अन्तिम बार शैय्यामें जाकर चिर निद्रा-निमग्न हो गये। सम्राटके जीवनका इस प्रकार षड्यन्त्र-पूर्ण अन्त कोई भाँप न सका।

दूसरे प्रभातमें, जब उषा सुंदरी लोहित परिधानसे सुसज्जित होकर बसन्तका स्वागत करने चली थी, प्रहरियों एवं भृत्योंने एकाएक सम्राट के निधनकी करुण सूचना नगरके प्रमुख कर्मचारियों एवं सद्-वैद्योंको दी।

चूँकि विनाशका पूर्ण षड्यंत्र पहले ही विचक्षण रच चुका था अतः उसके किये ही अचानक हृदय रोग द्वारा सम्राटकी मृत्युका कारण बतलाया। कुछ ऐसा प्रबन्ध था ही सम्राटके निधनके पश्चात शीघ्र ही विचक्षण उस नगर में जा पहुँचा और सम्राटकी अन्त्येष्टि क्रिया आँसुओंके प्रवाहके बीच सम्पन्न हुई।

विचक्षण सम्राटकी चिता-धूलि एवं अस्थियोंको लिये हुए राजधानी पहुँचा और अश्रु गिराते एवं वेदना प्रदर्शित करते हुए

सत्यको आडम्बर पूर्ण वेदनाके पर्देमें छिपा दिया। राज परिवार एवं सर्व-साधारणने विनाशकी अटकल लगा लेनेके पश्चात् भी अपने होठोंको बन्द रक्खा।

विचक्षण आज मुकुटहीन सम्राट था। अपने एकान्तमें भी कोई सम्राटकी मृत्युका सही कारण जाननेको तत्पर न था। यमकी भाँति सारा साम्राज्य विचक्षणसे डर रहा था। सम्राटके खाली राजसिंहासनकी एक-मात्र उत्तराधिकारिणी उसकी कन्या मृणालिनी थी, जिसे शीघ्र ही शासनके वैधानिक प्रमुखके रूपमें जनताके सामने सेवाएँ अर्पित करनी थीं।

सम्राटकी मृत्युका समाचार वायुकी भाँति सारे साम्राज्यमें फैल गया। सरकारी कार्यालय, व्यापारियोंकी दूकानें, घड़ी-घन्टे शोक प्रदर्शन करनेके हेतु बन्दकर दिए गये। विचक्षणकी गुप्त आज्ञाके अनुसार सारे देशमें शोक सभाएँ एवं राजपरिवारके लिए हार्दिक सहानुभूति प्रदान करनेके आयोजन किये गये। सरकारी-अर्द्ध सरकारी एवं नागरिक कार्य कुछ समयके लिए रुक गया।

एक ओर विचक्षण अपने पापको छिपाये रखनेके लिए बड़ी बड़ी शोक सभाओंमें जाकर सम्राटके नामपर अश्रु-प्रवाह एवं रुदन करता था, दूसरी ओर मृणालिनीके राज्याभिषेककी गुप-चुप शानदार तैयारीकी जा रही थी। अभी सम्राटकी मृत्युपर बहाये आँसू सूखने भी न पाये थे कि केवल एक माह पश्चात् राज्याभिषेककी निश्चित तिथि नियुक्तकर दी गयी।

उधर सम्राटकी आज्ञासे बन्दिनी बनायी गयी, शाहजादी मृणालिनीकी अङ्गरक्षिका विरूपाक्षी मुक्तकर दी गयी। उसे मृणालिनीकी निगरानीका कार्य भार गुप्त रूपसे सौंपा गया। शोक सन्तप्त मृणालिनीको विरू-पाक्षीसे कोई प्रेम न रह गया था और वह उसे फूटी आँख देखना भी न चाहती थी, किन्तु विचक्षणका षड्यन्त्र राजपरिवारपर सतर्क दृष्टि एवं

अन्तःपुरमें होनेवाली प्रत्येक प्रकारकी चर्चाओंकी जानकारी रखना था।

अब विचक्षणाकी क्रूर दृष्टि अजित पर लगी हुई थी। वह बड़ी लगनके साथ सम्राट द्वारा प्रदान की गयी, अतुल सम्पत्ति राशिकी खोजमें था। विचक्षण के विश्वास-पात्र गुप्तचर साम्राज्यके व्यवसाइयों एवं धन-कुबेरोंके हिसाब-किताबका ब्यौरा ले रहे थे, किन्तु कहींसे भी यह पता लगना कठिन था। सम्राटके निजी कोषकी जानकारी ही वास्तवमें साम्राज्ञीके अतिरिक्त और किसीको थी भी नहीं, किन्तु विचक्षणाका अनुमान था कि यदि किन्हीं व्यावसायिक धनागारोंमें सम्राटका एकत्रित कोष प्राप्त हो सका, तो वह हर संभव उपायोंसे अपने अधिकारमें कर लेगा और अजितको प्राप्त होनेवाली सहायता रुक जायगी।

हाँ, अजित द्वारा खोली गयीं वे सहकारी समितियाँ जिन्हें सम्राट-द्वारा पहले ही आर्थिक सहायता प्राप्त हो चुकी थी और जिनपर कृषक एवं श्रमिक संघोंका अधिकार था, विचक्षणाके लिए जटिल पहेली बन गयी थीं। अगणित बेकार नागरिकों एवं छोटे व्यवसाइयोंकी रोजी-रोटी उन्हीं सहकारी समितियों द्वारा चल रही थी और जिनपर सशक्त जनता-का हर संभव सहयोग जुटाया जा रहा था।

दक्षिणी सम्राज्यके जिन भागोंमें जनताकी समानान्तर सरकार शासन प्रबन्धकर रही थी, उसे पुनः जीतकर अपने अधिकार क्षेत्रमें कर लेनेकी सनक भी विचक्षणाको सताये जा रही थी। अजितका सम्राटके अन्तिम क्षणोंमें जैसा प्रभाव राज-परिवार एवं साम्राज्यमें बढ़ गया था, वह सब तो आज भी विचक्षणाकी सुखकी नींद अपहरण किये हुए था। उपद्रव, उत्पात एवं अराजकतामें लेशमात्र कोई कमी न हुई थी। हाँ, विचक्षणाके जीवनकी सबसे सुखद घटना सम्राटकी मृत्यु थी, जिससे शासन प्रबन्धका सारा दायित्व एवं एकाधिकार विचक्षणाको प्राप्त हो चुका था। रही सही दम घुटानेवाली बात यही थी कि वैधानिक प्रमुखके रूपमें सम्राटकी कन्या विचक्षणाकी स्वामिनी बनेगी, किन्तु यदि विचक्षण एक

दाँव और जीत सका जिसकी पूर्ण संभावना है, तब तो फिर मृणालिनी-को विचक्षणकी पुत्र वधू बनना स्वीकार करना पड़ेगा। हाँ, अभी विचक्षण अराजकतावादियोंका उन्मूलन करना ही अपना प्रथम कर्तव्य समझ रहा था।

३

सम्राटकी मृत्यु हुए एक माससे अधिक हो चुका था। धीरे-धीरे वह दिन आ गया, जिस दिन मृणालिनीके सिरमें काँटोंका मुकुट पहनाया जानेवाला था। राजधानीमें मृणालिनीके राज्याभिषेककी महानतम् घटना घटित होनेवाली थी। विचक्षणसे साम्राज्य भरकी जनता सशंकित एवं ऊबी हुई थी। अस्तु मृणालिनीको साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित देखनेकी शुभ लालसा जन-जन मनमें जाग्रत हो चुकी थी। हाँ, मृणालिनी स्वयं रक्तके आँसू रो रही थी। उसके दुःखका पारावार न था किन्तु वह एक रमणी-रत्न थी। विचक्षण जैसे क्रूर, आततायी एवं नीचके विरोध करनेकी उसमें क्षमता न थी। वह विवश थी।

राज्याभिषेकके दिन वह राजसी वस्त्रों एवं शृङ्गारसे विभूषित होकर प्रथम बार जनताके सम्मुख उपस्थित हुई। परम्पराके अनुसार वह राज सिंहासनपर जा विराजी। जनताने हर्ष ध्वनिके साथ उसका अभिनन्दन किया। राज्याभिषेक समारोह बड़ी धूमधामसे मनाया गया। मृणालिनी अन्तरमें रोती हुई, पर प्रकट रूपमें पूर्ण प्रसन्न एवं स्वस्थ्य दीख पड़ती थी।

ज्योंही शपथ ग्रहण करनेकी शुभ घड़ी उपस्थित हुई, मृणालिनीने ईश्वर, सत्य एवं जनताके विश्वासकी सौगंध खाते हुए गंभीर स्वरमें कहा—

"साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित होते हुए मैं व्रत लेकर कहती हूँ कि प्रजाकी सुख समृद्धि एवं शान्तिके लिए मैं प्राणपणसे चेष्टा करूँगी और अपनी ओरसे कुछ भी उठा रखना बाकी न रखूँगी। अन्याय, अनीति एवं अनाचारसे सम्पूर्ण प्रजा मुक्त रहेगी, भले ही ऐसी सेवाके लिये मुझे अपने जीवनकी बलि तक क्यों न देनी पड़े!"

"आज सम्पूर्ण साम्राज्य विपत्तिके बादलोंसे घिरा हुआ है। जनताकी असीम कठिनाइयाँ हैं। वह अन्न वस्त्रकी कमीसे क्षुब्ध है। जीवन निरानंद है। साम्राज्यमें आसुरी वृत्तियोंका बोलबाला है। मानव-जीवन लहूलुहान है। जीवन-पथ कण्टकोंसे आच्छन्न। राष्ट्रके जीवन पथके पग-पगपर बिछे हुए हैं शूल। किन्तु हमें अनिवार्य एकाग्रताके साथ कठिनाइयों, विपत्तियों एवं दुःख-दैन्योंके साथ युद्ध करते हुए आगे बढ़ना है—सुख समृद्धि एवम् शान्ति ही राष्ट्रके जीवनका अन्तिम लक्ष्य है। हमें शिव-संकल्पमय मनसे सजग रहना है। न तो घनी आपदाओंके विफल आक्रमणसे निश्चिन्त होकर मुसकुराना है और न वेदना एवं निराशाकी घड़ियोंमें अवसाद-मग्न होकर दीनकी भांति रोना ही है, वरन् इन सारे द्वन्द्वोंसे ऊपर उठकर राष्ट्रके जीवनको महान मानवताकी सेवामें भेंट करना है।"

"आप सब मिलकर सहयोग दें। मैं राजदण्डका सहारा लिए हुए अनय, अनीति एवं अनाचार पर अवश्य विजय पाऊँगी। बस, यही मेरी प्रतिज्ञा है। यही साम्राज्ञी होनेके नाते मेरी सेवा।"

"आप मुझे आशीर्वाद दें कि आपके दिये हुए विश्वास, श्रद्धा एवं सामर्थ्यका मैं सदुपयोग करते हुए जनता एवं राज सिंहासनकी सेविका बनी रहूँ।"

"ईश्वर मुझे दायित्व सम्हालनेकी शक्ति दे। मैं उपस्थित महानुभावोंका अभिनन्दन एवं वन्दन करती हूँ।"

राजकुमारी राजसिंहासनको नमस्कार करते हुए उसीके सहारे बैठ गयी। परम्परानुसार राज्याभिषेक समारोह सम्पन्न किया गया। अन्तमें विचक्षणने सम्राटकी दुःखद मृत्युपर शोक प्रकट करते हुए अपनी ओरसे सम्पूर्ण सभासदों एवं प्रजावर्गको धन्यवाद दिया और राजसिंहासनके प्रति वफ़ादार बने रहनेकी प्रतिज्ञा की।

उस दिनकी सारी कार्यवाही समाप्त हुई और साम्राज्ञी राजप्रासाद पधार गयीं।

विचक्षणकी महत्वाकांक्षायें नवआशाओंको पल्लवित, अस्फुटित एवं कुसुमित करने लगी थीं। वह साम्राज्ञीको उसके पिताकी तरह ही अपने वशीभूत रखना चाहता था और हेल-मेल बढ़ाकर अपनी स्वेच्छा-चारिता द्वारा सम्पूर्ण साम्राज्यमें अपने खोये हुए प्रभावको पुनः विस्तृत करना चाहता था, किन्तु मृणालिनी इतनी सजग एवं सावधान थी कि राजकाजके आवश्यक क्षणोंको छोड़कर एक क्षण भी किसीसे मिलना अनुचित समझती थी। हाँ, उसने एक निश्चित नीति यह बना रक्खी थी कि विचक्षणका मन्त्रिमण्डल सर्व सम्मतिसे जो भी कार्यवाही करना चाहता, उससे असहमत होते हुए भी अपनी आन्तरिक इच्छाको प्रकट किये बिना चुपचाप स्वीकृति प्रदान कर देती थी।

एक दिन विचक्षण किसी कार्यवशात् मृणालिनीके राजप्रासादमें मिलने गया। मृणालिनीकी मुख-मुद्रा यह स्पष्ट प्रकट करती थी कि वह किसी गम्भीर चिन्तनमें निमग्न है।

विचक्षणने सहानुभूति मिश्रित वाणीमें प्रार्थना करते हुए कहा—"साम्राज्ञी! आपका सुकुमार जीवन साम्राज्यके कार्यभारसे बोझिल है। वास्तवमें यदि आज हमारे पूज्य सम्राट हम सबके बीच होते, तब क्या आप शासन जैसे नीरस कार्यको स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करतीं?"

गम्भीर मुद्रामें मृणालिनी बोली—"मैं आपका तात्पर्य नहीं समझ सकी! आप बतायें कि इस प्रश्नसे आपका उद्देश्य क्या है?"

कुछ झेंपते हुए विचक्षण बोला—"मेरा तात्पर्य है, आपके वैयक्तिक शासन सम्बन्धी कार्योंमें सहयोग देनेवाला कोई सहायक, जिसके सहारे आप अपने जीवनको नीरस होनेसे बचा सकें।"

"अच्छा"—हँसती हुई मृणालिनी बोली—"आप सोचते हैं कि अपने दायित्वको पूरा करनेमें मुझे अधिक समय देना पड़ता है और इस लिए मुझे विनोदी स्वभावमें आप नहीं देखते।"

"बिल्कुल ठीक।"

"तो क्या ऐसा कोई कर्मठ एवं सुयोग्य सहायक आपने मेरे लिए ढूँढ़ निकाला है?"

"अवश्य!"

"कृपया नाम बताइये।"

"विजयश्रवा!"

"ओह यह नाम तो परिचित जैसा ज्ञात होता है। कभी-कभी विरूपाक्षी इस नामका उच्चारण करते हुए इनके मृगया सम्बन्धी कार्यों-की विशेष चर्चा किया करती थी, किन्तु यह हैं कौन!"

मन ही मन विचक्षण प्रफुल्लित हो उठा। प्रकट रूपमें वह बोला—"विजयश्रवा साम्राज्ञीके प्रधान आमात्यका इकलौता पुत्र है।"

मृणालिनी खिलखिलाकर अल्हड़ बालकों जैसे हँस पड़ी—"यह आपने ठीक बताया? एक ओर प्रधान आमत्यका इकलौता बेटा और दूसरी ओर सम्राटकी इकलौती पुत्री! मनोविनोद तो बराबरीवालेसे ही होता है।"

"तो क्या साम्राज्ञीकी सेवामें विजयश्रवा उपस्थित हो?"

"अभी नहीं आमात्य! दुनिया मुझपर हँसेगी और छींटे कसे। प्रजामें भांति-भांतिकी वातायें चलने लगेंगी। कोई कहेगा, पिताकी मृत्यु होनेसे निश्चिन्ता आ गई है। स्वयं सर्वसत्ता सम्पन्न है। विषाद ही

किस बातका। किन्तु हाँ अवकाश प्राप्त होते ही मैं स्वयं सूचित करूँगी। अभी तो संपूर्ण साम्राज्य अराजकताके लक्षणोंसे अशान्त है।"

"उसकी चिन्ता आप न करें, साम्राज्ञी ! मैं सब देख भाल लूँगा। केवल मुझपर साम्राज्ञीकी कृपा दृष्टि चाहिए।"

"सो तो है ही, किन्तु प्रायः सरकारी एवं अर्द्ध सरकारी सूत्रोंसे ज्ञात हुआ है कि सम्पूर्ण साम्राज्यमें अराजकताको नेतृत्व प्रदान करनेवाला एक ही व्यक्ति है और साम्राज्यकी प्रजाका उसपर अगाध विश्वास है।"

"हाँ, बात तो ऐसी ही है। सम्राटने अपने जीवन-कालके अन्तिम दिनोंमें उससे सम्पर्क स्थापित किया था और वार्ताकी प्रारम्भिक चर्चा मेरी ही मध्यस्थतामें शुरू हुई थी किन्तु अनेक कारणोंसे सफलता न प्राप्त हो सकी।

"क्या नाम है उस व्यक्तिका !"

"अजित !"

"निवास स्थान कहाँपर है ?"

"राजधानीमें ही।"

"आजकल वह कहाँ है ? सरकार द्वारा उससे अब भी वार्ता चलानेकी कोई आयोजना है अथवा वार्ता भंग होनेके पश्चात् फिर कोई प्रयत्न ही नहीं किया गया है।"

"नहीं सम्राज्ञी ! गृह-विभाग द्वारा प्राप्त सूचनाओंसे ज्ञात होता है कि अजित और सम्राटमें मृत्युके पूर्व बहुत अधिक मेल हो चला था और सम्राटका वैयक्तिक रूपसे वह समर्थन भी करने लगाथा किन्तु सम्राट की मृत्युके पश्चात् वह स्वयं अराजकतावादियोंका नेतृत्व करने लगा है। आज दक्षिणी साम्राज्यमें उसीके सहायक यशवर्द्धनका पञ्चायती राज्य स्थापित हो चुका है।"

"तो क्या साम्राज्यकी सरकार द्वारा पञ्चायती सरकारको मान्यता

प्रदान कर दी गयी अथवा साम्राज्यके उस भागमें पुनः सरकार स्थापित करनेका कोई विशेष आयोजन भी है ?"

"आयोजन तो है ही, किन्तु सम्राटके स्वर्गारोहणके पश्चात् कार्य-रूपमें परिणित नहीं किया जा सका ?"

"तब तो परिस्थितिपर नियन्त्रण करनेके लिए आप स्वयं जावें ।"

विचक्षण अवज्ञा करना नहीं चाहता था, दूसरी ओर मृणालिनीको प्रारम्भ ही में अपने विपक्षमें कर लेना कूटनीतिज्ञ विचक्षणके लिए उचित भी न था, क्योंकि गुप्तचरों द्वारा उसे सूचना प्राप्त हो चुकी थी कि सम्राटकी मृत्युने विचक्षणको सन्दिग्ध व्यक्ति सिद्ध कर दिया था। जैसे जैसे सम्राटके प्रति जनतामें असीम विश्वास एवं राजभक्ति प्रगाढ़ होती जाती थी, वैसे ही विचक्षणके प्रति गहरी घृणा एवं द्वेषकी भावना तीव्र हो रही थी और विचक्षणने साम्राज्ञीके राज्याभिषेक समारोहके अव-सरपर मृणालिनीके प्रति जनताकी पूज्य भावनाको भी देखा था।

विचक्षणने स्वीकार किया कि वह एक सप्ताहके पश्चात् दक्षिणी साम्राज्यकी विशेष परिस्थितिपर अधिकार प्राप्त करनेके लिए ससैन्य रवाना होगा और इसी सप्ताहके अन्तर्गत मन्त्रिमण्डलकी विशेष बैठक द्वारा अपने लिए विशेषाधिकारकी माँग करेगा ।

मृणालिनीने प्रधान आमात्यकी रायसे अपनी सहमति प्रकट की। विचक्षण चलनेको उद्यत हो खड़ा हो गया। साम्राज्ञी पूर्ववत् गम्भीर मुद्रा-में बैठी रही। चलते-चलते विचक्षण बोल उठा—"मेरे राजधानी छोड़नेके पश्चात् यदि अजितने उपद्रव प्रारम्भ किया, तब क्या होगा ?"

"तो क्या साम्राज्यकी सम्पूर्ण शक्ति आप ही हैं ?"—घृणा और विरक्ति प्रकट करते हुए मृणालिनी बोली ।

विचक्षणको इस कठोर प्रत्युत्तरसे काठ जैसा मार गया। वह मृणा-

लिनीको बहुत निकटसे कभी न जानता था। उसे तो केवल इतना ही भान था कि मृणालिनी एक वयस्क महिला एवं मृत सम्राटकी पुत्री है किन्तु वह शासन प्रबन्धके सम्बन्धमें भी दक्ष एवं कुशल है, अथवा एक विलासिनी राजकुमारी है !

विचक्षण राजकुमारीको अभिवादन करता हुआ चुपचाप चल पड़ा। हाँ, उसे प्रथम बार भान हुआ कि वह एक सम्राटका प्रधान आमात्य नहीं, बल्कि अपने पद की महत्तासे परिचित एक रमणी-रत्नका भृत्य है। मन-ही-मन वह तिलमिला उठा। उसने मनमें प्रतिज्ञाकी कि फुंकारने-वाली विषैली नागिनके दाँत वह तोड़ेगा, किन्तु उसका सामना एक पुरुषसे नहीं, बल्कि एक अबलासे है, जो जनताकी शक्तिसे विभूषित सर्वेश्वरी जैसी राज-सिंहासनपर आसीन है।

विचक्षणके जानेके पश्चात् भी मृणालिनी काँपते होठोंसे स्वगत बुदबुदाती रही। उसकी दृष्टिमें एक ही साथ घृणा-प्रतिशोध नाचने लगे। नेत्र आरक्त हो उठे। यौवन मदसे इठलाती हुई वीर ब्रह्मचारिणी क्षत्राणीकी भांति ऊपर आकाशको देखने लगी। उसकी युगुल कराङ्गु-लियाँ अपने आप आबद्ध हो गयी। इस बार प्रकट शब्दोंमें बोली—
"हे मेरे पूज्यपिता ! तुम जहाँ हो वहीं तुम्हें प्रणाम है। मुझे शक्ति देना कि मैं हत्यारे प्रधान आमात्य एवं अन्य आततायियों-द्वारा तुम्हारी हत्याका भीषण प्रतिशोध ले सकूँ। मेरा हृदय क्रोधाग्निसे यज्ञ-कुण्डकी भांति प्रतिक्षण प्रज्वलित है। मेरी आग मुझे भी भस्मकर रही है किन्तु वह सहसा बुझ नहीं सकती। विचक्षण एवं उसके क्रूर-कर्मी साथियोंकी मृत्युसे ही मेरे ज्वलित हृदयको स्थिर शान्ति होगी।"

मृणालिनीने दासीको पुकारा। वह शीघ्र ही समुपस्थित हो गयी। मृणालिनी उसे देखते ही बोल उठी—"प्रमुख दुर्गपतिको बुलाओ !"—
"जो आज्ञा"—कहकर दासी चली गयी और कुछ ही क्षणों पश्चात् दासीके साथ एक प्रौढ़ व्यक्ति उपस्थित हुआ। मृणालिनीने दुर्गपतिका

अभिवादन स्वीकार करते हुए कहा—"आज मैं एक ऐसी आज्ञा दे रही हूँ, जिसका पालन करना आपका कठोर एवं कटुतम कर्त्तव्य होगा !"

राजकुमारी उस व्यक्तिको विश्वास-भरी दृष्टिसे श्रद्धापूर्वक देखने लगी। वह एक रोबीला स्वस्थ्य एवं अर्द्ध-श्वेत घनी मूँछ-दाढ़ियोंसे युक्त-वीर सेनानी जैसा दिखनेवाला पुरुष था। उसने करबद्ध मुद्रासे विश्वासमयी वाणीमें कहा—"साम्राज्ञी आज्ञा प्रदान करें। मुझे कर्त्तव्य पालन करते समय चिन्ता नहीं, कि वह कठोर है या कटुतम !"

मृणालिनी अपने स्थानसे उठकर उसके समीप आ खड़ी हुई। और प्रश्न-सूचक मुद्रामें बोली—"वीर दुर्गपति ! क्या आपको सम्राटकी मृत्युके सम्बन्धमें सही-सही ज्ञात हुआ है कि अचानक कैसे उनका परलोक गमन हुआ ?"

"ज्ञात है, साम्राज्ञी ! किन्तु उसे अपनी जिह्वासे उच्चारण करना कटु-सत्य होगा। क्या मैं उसे कहूँ ? पाषाणकी इन दीवालोंमें भी षड़-यन्त्र पूर्ण रहस्य हैं। अन्तःपुरकी बातें गली-कूचोंमें सुनायी पड़ जाती हैं।"

"इसी कारण तो मैं चाहती हूँ कि सत्य बातको सभी निर्भय होकर कहें।"

दुर्गपतिके नेत्रोंमें स्वाभिमान एवं वीरताकी रेखा-सी खिंच गयी। वह कड़ककर कह उठा—"सम्राटकी मृत्युका कारण प्रधान आमात्य हैं ! वे आज भी साम्राज्ञीको अपने शिकञ्जेमें जकड़ रखनेके लिए भीषण नीचता एवं षड़यन्त्रोंका सहारा ले रहे हैं !"

जिज्ञासाकी दृष्टिमें मृणालिनी बोली—"क्या आप उनके अन्य षड़यन्त्रोंसे भी परिचित हैं ?"

"अवश्य साम्राज्ञी !"

"तब आपने मुझे सूचित क्यों नहीं किया ?"

"इसलिए कि मुझे प्रधान आमात्यका कोप-भाजन बनना पड़ता

और सम्भवतः जो सेवा मैं राज-परिवारके अन्तःपुरकी करता हूँ, उससे वञ्चितकर दिया जाता। अभी आज ही विरूपाक्षीको उन्होंने आज्ञा दी है कि उनके पुत्र विजयश्रवाको साथ लेकर वह अन्तःपुर आया-जाया करे और अन्तःपुरके प्रबन्धादि एवं चौकसीमें हाथ बटाया करे। साथ ही जब कभी साम्राज्ञी आज्ञा दें, तब वह मनो-विनोद एवं खेल-कूदके समय सहयोग करें।"

"अच्छा ठीक! आप मेरी आज्ञा सुनिए! आजसे अन्तःपुर एवं दुर्गके भीतर उन सबका प्रवेश निषिद्ध होगा, जो सम्राटकी पूर्व आज्ञाके अनुसार आया-जाया करते थे। प्रधान आमात्यसे लेकर ऐसे प्रत्येक छोटे-बड़े दरबारी एवं भृत्य बिना पूर्व आज्ञा प्राप्त किये दुर्ग एवं अन्तः-पुरमें न आ-जा सकेंगे। मैं शीघ्र ही लिखित आज्ञा भी भेज रही हूँ। स्मरण रहे कि जो मेरी अवज्ञा करेंगे वे कठोर दण्डके पात्र होंगे। अब दुर्गके स्वामी सम्राट नहीं, बल्कि उनकी पुत्री साम्राज्ञी है और एक रमणी के सम्मानके लिए आवश्यक है कि पुरुषोंका प्रवेश पूर्णरूपसे निषिद्ध हो। जो इसके विपरीत आचरण करे उसे दुर्गके बन्दीगृहमें आप डाल सकते हैं। मैं आपको भी लिखित विशेषाधिकारोंसे सम्पन्न एवं सुदृढ़ बना दूँगी।"

दुर्गपति साम्राज्ञीकी इस नियन्त्रणमयी आज्ञासे पूर्ण सन्तुष्ट होकर बोल उठे—"आज आप साम्राज्ञी हैं और मैं भृत्य हूँ किन्तु मेरा एक और नाता है वह यह कि मैं स्वयं भी राजवंशमें जन्मा हूँ और सिंहा-सनका सेवक हूँ। आप मेरी कन्या और मैं चाचा हूँ। इस हेतु भी राज-वंशकी मर्यादा एवं सम्मानको अक्षुण्ण बनाये रखना चाहता हूँ। प्रधान आमात्यका दुर्गके भीतर प्रवेश करना मेरी दृष्टिमें सर्वदा निन्द्य रहा है, किन्तु सम्राटकी आज्ञाके विरुद्ध मैं कैसे होठ खोल सकता था?"

मृणालिनी दुर्गपतिकी बातोंसे विशेष प्रभावित हुई और उसने

सौजन्यपूर्ण शब्दोंमें कहा—"पुत्रीके सम्मानकी रक्षा करना आपका प्रथम कर्तव्य है ! यह लीजिये तलवार ! आजसे मेरी आन और असमत-का दायित्व आपपर है ।"

उपहार स्वरूप सुवर्ण एवं मणिजटित तलवारको कृतज्ञतापूर्वक ग्रहण करते हुए साम्राज्ञीके चरणोंमें दुर्गपतिने अपना सिर झुका दिया और बोला—"मैं आज ही सन्दिग्ध व्यक्तियोंकी पूरी छान-बीनकर, उन्हें दुर्गमें प्रवेश करनेसे सदाके लिए रोक देता देता हूँ । साम्राज्ञीकी आज्ञा प्राप्त किये बिना फिर कभी प्रवेश न पा सकेंगे ।"

मुस्कुराकर मृणालिनी बोली —"अच्छा ! आप जा सकते हैं !"

दुर्गपति साम्राज्ञीको नत-मस्तक करके चलते बने । मृणालिनी अपने कमरेसे उठकर विधवा मांके पास जा पहुँची । जहाँ एक दिनकी साम्राज्ञी युगोंकी सेविका जैसी दुःख निमग्न हो रक्तके आँसू रो रही थी । माताके आँसुओंको पोंछती हुई मृणालिनी बोल उठी—"माँ ! क्षत्राणी इस प्रकार रोया नहीं करती । वे तो तलवार उठाकर अन्याइयों एवं अनाचारियोंपर सिंहनी जैसी गरजकर टूट पड़ती हैं । माँ, मैं अपने आँसुओंको सन्ताप एवं क्रोधकी आँचसे सुखा रही हूँ । विचक्षणसे प्रति-शोध लिये बिना पितृ-ऋणसे मुक्त नहीं हो सकती । आज ही मैं आज्ञा देकर पुरुषों एवं सन्दिग्ध व्यक्तियों एवं स्त्रियोंके दुर्ग-प्रवेशको निषिद्धकर चुकी हूँ । पिताजीने प्रत्येक समय यही विश्वास किया था कि प्रधान आमात्यका प्रवेश इसलिए आवश्यक है कि शासन प्रबन्धमें राजकीय आज्ञाओंके बिना कोई त्रुटि न हो, किन्तु इस दुष्परिणामने उनकी मृत्यु-तक ला दी । सतर्कता मनुष्यके रक्षाकी प्रथम पृष्ठ-भूमि है ।

विधवा माताने मृणालिनीको हृदयसे लगाते हुए कहा—"वीर पुत्री तुझे देखकर ही मैं जीनेका साहस करती हूँ किन्तु प्रतिक्षण किसी भावी-आशङ्कासे प्राण कँपते रहते हैं । विचक्षणने मेरा सर्वनाशकर

दिया। मैं जानती हूँ कि ऐसा कृतघ्न कुत्तोंकी मौत मरेगा किन्तु आज हम सब भयभीत मृगीकी भांति उसके कपट-जालमें विकट-रूपसे फँस चुके हैं। भगवान जाने! हमारी मुक्तिका मार्ग कब प्रशस्त हो?

माताको धीरज बँधाते हुए मृणालिनी बोली—"इस प्रकार घबरानेसे क्या होगा, माँ! हमें तो उस नीचसे अच्छी तरह निबटना है। आज जो परिस्थिति हमारे सामने है, उसे धैर्य-पूर्वक अपने अनुकूल बनाते हुए लोकमतका सहारा लेना होगा। मैं जानती हूँ कि पिताजीकी मृत्युके उपरान्त सम्पूर्ण साम्राज्यकी सहानुभूति मेरे पक्षमें है।"

"किन्तु मृणालिनी! तू साम्राज्ञी बनकर भी उस षड़यन्त्री कूटनीतिज्ञका किस प्रकार सामना करेगी? अभी तेरे दूधके दाँत छिपे हैं। राज-काज जैसी उलझनसे भरी हुई कर्तव्य निष्ठा तेरे लिए एक कठोर परीक्षा है।"

"माँ, चिन्ता न करो। मरनेसे पूर्व पिताजीने एक ऐसे व्यक्तिको अपने पक्षमें मिलाया था, जो आज मेरे हेतु वरदान सिद्ध होगा!"

"कौन है वह?"—जिज्ञासा भरी दृष्टिसे माँने पूछा।

"वह एक लोकतन्त्रवादी मध्यम-वित्त-वर्गीय व्यक्ति है। उसने सारे साम्राज्यके कृषक एवम् श्रमिक संघोंकी इकाईका नेतृत्व अपने आप ले रक्खा है। उसके अनुयायियोंने दक्षिणी सामाज्यमें स्वतन्त्र-लोकतन्त्रवादी शासनकी समानान्तर सरकार स्थापित की है। विचक्षणके गुटवाले षड़यन्त्री अमीर उमराव मृत्युकी घाट उतारे जा चुके हैं। वहाँ विचक्षण पुनः जाकर अपनी एकतन्त्रवादी सरकार स्थापित करनेके प्रयासमें है, किन्तु यह कोई सरल कार्य नहीं, जनताने कृषक एवं श्रमिक संघोंकी प्रतिनिधि सरकारको अपनी ओरसे मान्यता प्रदानकर रखी है। वहाँ जाकर विचक्षणको लोहेके चने चबाने पड़ेंगे और सफलताकी तो कोई आशा नहीं।

राजमाता कुछ पुराने संस्मरणोंकी अटकल लगाती हुई कह उठी—"ठीक बात है। सम्राटने कुछ ही दिनों पूर्व अपने जीवन-कालमें ही मुझे इस प्रकारकी घटना सुनायी थी, किन्तु अचानक वज्रपात होनेके कारण साम्राज्यके बारेमें मुझे कोई जानकारी न प्राप्त हो सकी।

मृणालिनीने राज-काजके सम्बन्धमें स्वयं अपनी माताको सलाहकार घोषित किया था। अतः वह कह उठी—"माँ, अजित नामक व्यक्तिका साम्राज्य व्यापी नेतृत्व राज-परिवारके हितोंके लिए अधिक मूल्यवान होगा। मैंने विश्वस्त सूत्रोंसे सूचना एकत्रितकी है और एक पत्र भी पिताजीका मेरे नाम मिला है, जिसमें स्पष्ट आदेश है कि आजके युगमें साम्राज्यवाद-एकतन्त्रवाद दोषपूर्ण है। वह शोषण एवं आर्थिक दोहन को प्रश्रय देता है। अतः प्रजासे प्राप्त सम्पूर्ण विशेषाधिकार उसे ही लौटा देनेमें राजा एवं प्रजा दोनोंका समान हित है। इससे विपरीत आचरण करनेपर राजा-प्रजाके सम्बन्ध विषाक्त होंगे और रक्तमयी क्रान्तिका सहारा लेना पड़ेगा किन्तु ऐसी क्रान्ति भयानक परिणाम उत्पन्न करेगी, अस्तु मेरा तो विचार है कि विचक्षणको धूलमें मिलानेका सर्वश्रेष्ठ साधन होगा—"अपने अधिकारोंका जनताको दान।" इसका एक परिणाम यह भी होगा कि आजकी सशक्त जनता स्वयं उन्हें दण्ड देगी जो आज-तक उसे कुचलते आये हैं।"

माताने मृणालिनीके प्रस्तावपर स्वीकृतिकी मुहर लगा दी। राज-माताने मृणालिनीको गुप्त रूपसे अजितसे मिलने और अपने अधिकारोंके दानकी खुली घोषणा करनेकी सलाह दी।

मृणालिनीके नेत्र किसी नवीन आशासे चमक उठे—वह प्रत्यक्ष बोली—"ठीक है माँ। विचक्षण जैसे नीचके कुचलनेमें यह युक्ति बड़ी सहायक होगी, किन्तु एक विशेष बात यह है कि पिताजीके निधनका कारण भी यही बात थी। विचक्षण उनके मन्तव्योंसे परिचित था।"

माताने विशेष बल देकर कहा—"तब तो इस कार्यका करना

मृतात्मा सम्राटके प्रति महान श्रद्धाञ्जलि होगी। उनकी सन्तप्त आत्माको शान्ति प्राप्त होगी और तू स्वयं पितृ-ऋणसे मुक्त होगी।"

माता एवं पुत्रीने सम्राटके अधूरे कार्यको करनेकी शपथ ली। उनमें साम्राज्य उपभोग करनेकी किञ्चित-मात्र लिप्सा न थी। मृणालिनी तो योग्य एवं उदार पिताकी योग्य एवं उदार पुत्री बनना चाहती थी। कुछ क्षणोंतक वह इसी सम्बन्धमें मातासे परामर्श करते हुए बातें करती रही। उसने सम्राटकी अन्तिम इच्छाओंकी मातासे विशेष जानकारी करते हुए मन-ही-मन उन्हें पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा ली और तत्पश्चात् अपने शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अनेक ज्ञातव्य बातोंकी जानकारी करनेके लिए गुप्तचर दलसे मिलने चल पड़ी।

उधर सम्राटकी मृत्युने अजितकी आशाओंपर एक भीषण प्रहार किया। विचक्षण, जो सर्वदासे ही उसका प्राणघाती शत्रु बना बैठा था, इस अवसरका पूरा लाभ उठाकर, अजित एवं उसके राजनैतिक जीवनको समाप्तकर देनेके पूर्ण प्रयासमें षड़यंत्रोंका जाल बुनने लगा। साम्राज्यके प्रत्येक भागमें अजितको नजरबन्द करनेके फरमान भेज दिये गये। प्रभावशाली जन-सेवकोंकी सूची न जाने कबसे विचक्षणकी अन्तर्दृष्टिमें चल-चित्र-सी घूमती रहती थी। अब विचक्षण इस घातमें था कि कब कोई अनुकूल अवसर प्राप्त हो और अजितके साथ ही उसके सारे सहयोगी शासनके बन्दी बना दिये जावें।

सम्राटके जीवन-कालमें विचक्षणकी आशाएँ पूरी न हो पायी थीं। उल्टे विद्रोहियों द्वारा दक्षिणी साम्राज्यमें समानान्तर सरकारकी स्थापना हो चुकी थी। सम्राट-द्वारा अजितको प्रदानकी गयी अतुल धन राशि, उक्त शासनको व्यवस्थित रूपसे चलानेमें व्यय होने लगी। विचक्षणको आशा था कि सम्राटकी जीवन-लीला समाप्त होते ही उपद्रवियोंको कारावासमें बन्दकर वह शान्तिकी नींद सोयेगा, किन्तु वस्तुस्थिति कुछ और

ही सत्यता लेकर सामने आयी। विद्रोहियोंको बन्दी बनाना तो दूरकी बात हो चली, अब विचक्षणाको लेनेके देने पड़ने लगे।

विचक्षणाने अनुभव किया कि सम्राटकी मृत्युके उपरान्त विद्रोहियोंकी शक्ति प्रबल हो चली है। सम्राट और अजितके कुछ अच्छे सम्बन्धोंके कारण जहाँ अजितके अनुयायी शासनको उलट देनेमें थोड़ी-बहुत देरकर देते थे, वहाँ विचक्षणाका आधिपत्य बढ़नेके साथ ही विद्रोहियोंकी शक्ति सन्तुलित एवं सङ्गठित रूपमें पूर्व और पश्चिमी साम्राज्यमें भी शासन सत्ताको हथिया लेनेके भीषण कुचक्र-द्रुतगतिसे रचने लगी। अजित और उसके अनुयायियोंको बन्दी बनाना दूरकी बात हो चली। उलटे, विचक्षणाकी जी हुजूरी करनेवाले मुक्त रूपसे अजित एवं उसके अनुयायियोंके समर्थक बन बैठे। गुप्तसे-गुप्त आज्ञाएँ अजितको ज्ञात होते देर न लगती थी। साम्राज्यके निम्न एवं मध्यवित्तीय कर्मचारी विद्रोहियोंके मेरु-दण्ड बनकर उनके प्रबल सहायक बन गये।

विचक्षणाके पक्षमें उसके गुप्तचर एवं साम्राज्यके प्रबल जमींदार तथा पूँजीपति थे किन्तु उनकी संख्या बहुमतकी तुलनामें नगण्य थी। विचक्षणाके थोड़े-बहुत साथी विरोधी खेमेमें भेद लेने एवं फूट डालनेके मन्तव्यको लेकर घुस तो पड़े, किन्तु एकाएक विस्फोट होनेके कारण उन्हें प्राणोंसे भी हाथ धोना पड़ा। रंगे-सियारोंको पहचाननेमें अजितके साथियोंको विशेष दृष्टि प्राप्त हो चुकी थी। अतः जो भी वर्गभेदके बलपर अजितकी शक्तिको निर्बल बनानेका प्रयास करता था, वह विश्वासघातके अपराधमें मृत्यु-दंडको प्राप्त होता था।

सम्राटकी दक्षिणी साम्राज्यमें मृत्युके उपरान्त एक क्षणके लिए भी अजित कहीं न ठहरा था। सम्पूर्ण साम्राज्यका दौरा समाप्त करने वह चल पड़ा था। इसी बीच सम्राटकी मृत्यु हो गयी थी। अजितको सम्राटके षड्यंत्रपूर्ण अन्तका रहस्य भी ज्ञात हो चुका था, किन्तु एक धीर, वीर, रणकुशल सेनानीकी भाँति, अजित बिना विश्राम किये,

अपनी शक्तिको निरन्तर बढ़ाता हुआ, साम्राज्यके कोने-कोनेमें घूमा था। स्थान-स्थानपर जनताने उसका स्वागत किया था और अजितने रचनात्मक कार्यों-द्वारा साम्राज्यके बहुत बड़े भागकी अकर्मण्य एवं निष्क्रिय जनताके रोजी-रोटीके प्रश्नको हलकर लिया था। सम्राट-द्वारा प्रदान किये गये धनने अजितकी काल्पनिक बुद्धिको सृजनात्मक शक्ति प्रदान कर दी।

गृह-उद्योग-धन्धों, सहकारी समितियों, कताई-बुनाईके कामों एवं कृषिकी सामूहिक एवं सर्वांगीण उन्नतिकी योजनाओंको राष्ट्रकी जनताके समक्ष, मूर्त रूप देकर अजित लाखों करोड़ों नागरिकोंकी श्रद्धाका पात्र बन गया। धूर्त विचक्षणके आडम्बर पूर्ण कृत्यों एवं झूठी घोषणाओंका सर्वत्र अनादर होने लगा। अजितको बन्दी बनानेवाले सैनिक दस्ते राष्ट्रके कोने-कोनेमें उसका पता लगाकर पीछाकर रहे थे और उसके अनुयायी उसकी रक्षाका भार लेकर राष्ट्रके शिथिल प्राणोंमें चैतन्य उद्बोधन कर नव-जीवन भर रहे थे। तूफानकी तरह अजित नगरों, कस्बों, गाँवों एवं पहाड़ी-प्रदेशोंकी धूल छान रहा था और चारों ओर उसके नेतृत्वकी पृष्ठ भूमि दृढ़ हो रही थी। पूर्व एवं पश्चिमी साम्राज्यका पूरा पर्यटनकर चुकनेके बाद अन्तमें वह यशवर्द्धनका, जो दक्षिणी साम्राज्यमें समानान्तर सरकारका प्रमुख था, अतिथि बना।

सम्राटकी मृत्युके पश्चात्, यशवर्द्धन के साथ अजितकी प्रथम भेंट हो रही थी। इतने समयमें यशवर्द्धनने अकाल एवं बेरोजगारी जैसी कठिन समस्याओंको दक्षिणी साम्राज्यसे सदाके लिए बिदाकर दिया था। प्रजाकी चरमोन्नति विकास योजनाओंके सफल परीक्षण इस भागमें बड़ी तत्परता-पूर्वक किये जा रहे थे।

विचक्षणको विश्वास था कि अराजकतावादी अपनी सरकार स्थापित करते समय जनतासे बलपूर्वक धन छीनेंगे और यह एक बड़ा कलंक

युगान्तरकारियोंके यशपर छा जायगा, किन्तु वैसा कुछ हुआ नहीं। सम्राट-द्वारा प्राप्त धनका बहुत बड़ा भाग यशवर्द्धनको परीक्षणात्मक कार्योंके लिए अजितने प्रदान किया था। आज उसी धन द्वारा रचनात्मक कार्योंकी प्रदर्शिनी जैसा दक्षिणी साम्राज्य बन चुका था।

यशवर्द्धनने अजितको श्रमिकों एवं कृषकोंके सामूहिक प्रतिनिधियोंसे मिलाया और उन्होंने जीवन-आवश्यकताओंकी संग्रहित प्रदर्शिनीके रूपमें अपने-अपने जिलों एवं ग्रामोंमें बनायी जानेवाली वस्तुओंका परिचय कराया। अजितके रोम-रोमसे हर्ष एवं प्रशंसाके गान फूट निकले। उसने सर्वाङ्गीण उन्नति करनेवाली जनताको लाख-लाख बधाइयाँ दीं और युगोंके शोषितों एवं प्रताड़ितोंने अपने मुक्ति-दाताके नेतृत्वके सफल गीत गा-गाकर सम्पूर्ण वायुमण्डलको भर दिया।

यशवर्द्धन द्वारा ज्ञात हुआ कि विचक्षण आधुनिक शस्त्रोंसे सुसज्जित सैन्य लेकर दक्षिणी साम्राज्यकी जनता एवं समानान्तर सरकारका दमन करने आ रहा है। उसकी सेनाएँ वहाँ से बीस मीलकी दूरीपर व्यतीत मार्गकी थकान मिटा रही हैं। स्वयं विचक्षण आवश्यक सूचनाएँ एकत्रितकर रहा है। सम्पूर्ण जनता एवं समानान्तर सरकारकी सुदृढ़ सेना विचक्षणके स्वागतके लिए आदेशोंकी प्रतीक्षाकर रही है।

अजित इस विकट परिस्थितिसे उत्पन्न आसन्न संकटकी रक्तमयी वेलामें एक बार काँप उठा—

"उफ, तलवारोंकी धारें बुभुक्षित एवं पीड़ित नरमुण्डोंके पवित्र रक्तसे रंगकर क्या वीरोंकी शोभा बढ़ाएँगी? बलात् सत्ता हथियानेके भीषण कुचक्रमें राष्ट्रकी कितनी निर्धन अबलाएँ वैधव्यके करुण जीवनको अङ्गीकार करनेके लिए विवशकी जावेंगी? यशवर्द्धन! इस हत्यारे विचक्षणकी महत्वाकांक्षाको कुचल देनेके लिए हिंसक युद्धके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं क्या?"

"नहीं साथी! पिछले आन्दोलनमें जनता विचक्षणके दलालोंके

समीप अनुनय-विनय करते हुए रोजी एवं रोटी माँगने गयी थी। उस समय उन जल्लादोंने बिना किसी हिचकिचाहटके नंगे भूखोंकी छातियोंमें निर्दयता-पूर्वक बर्छियाँ घुसेड़ दी थीं। चारों ओर विकट चीत्कार होने लगा। जल्लादोंकी रक्त-पिपासा तीव्रतम रूप धारणकर निरपराधोंकी झोपड़ियोंमें आग लगाने और प्रतिरोधके एक भी शब्द निकालनेपर मृत्यु-दण्डके अतिरिक्त कोई सद्व्यवहार न कर सकी। आसन्न मृत्युसे विचलित न होकर जनताने सीधी कार्यवाही प्रारम्भ की। ढाई-वर्ष पहले यह संकट किसी प्रकार टल भी गया था, किन्तु इस बार तो विचक्षण स्वयं सर्वनाशका आमंत्रण लिये हुए ससैन्य आ धमका है। इस बारकी सेना सर्वनाशी एवं भयानक शस्त्रास्त्रोंका भाण्डार लिये हुए गरीबोंके रक्तसे होली खेलने आयी है। मैं तो अबतक स्थिर नहीं कर सका हूँ कि अन्ततः परिस्थितिका सामना किस प्रकार किया जाय!

"क्या समानान्तर सरकारके आधीनस्थ तृण सैन्य-संगठन नहीं?"

"है तो, किन्तु अधिकतर गृह-रक्षक दलके रूपमें है। वह सेना साधारण विपत्तियोंको भलीभांति निवारणकर सकती है, किन्तु साम्राज्यकी सुशिक्षित सेनाका डटकर सामना करना उसकी शक्तिके बाहरकी बात है।"

अजितके सामने आत्म-समर्पणके अतिरिक्त अन्य कोई चारा न था किन्तु धैर्य-पूर्वक स्थितिका सामना करनेपर विपत्ति टल भी सकती थी।

अजितने जानना चाहा कि क्या समानान्तार सरकार नगर छोड़कर थोड़े समयके लिए किसी सुरक्षित स्थानमें रहते हुए अपने अस्तित्वकी रक्षाकर सकती है?

यशवद्धनेका प्रत्युत्तर था—हाँ!

"तब तो रातों-रात सरकारको सुरक्षित स्थानमें पहुँच जाना चाहिए!"

"किन्तु नागरिकों की रक्षाका क्या उपाय है?

"उन्हें भी नगर छोड़कर चारों ओर फैल जाना होगा ! यदि यह कार्य सरलतापूर्वक हो सका तो विचक्षणसे मैं निपट लूँगा ।"—अजितने कहा ।

यशवर्धन शीघ्र ही सरकार एवं नागरिकोंको सुरक्षित स्थानोंमें पहुँचानेका भार लेकर चल पड़ा । विचक्षणकी कार्यवाहियोंपर सतर्क दृष्टि रखने एवं जटिल परिस्थितिको सुलझानेका भार लेकर, अपने कुछेक साथियों एवं गृह-रक्षक दलोंके साथ अजित परिस्थितिका सामना करने लग गया ।

अजितके मस्तिष्कमें केवल दो उपाय द्वन्द्व मचा रहे थे—

(१) विचक्षणकी सेनामें फूट डालकर सैन्य दलोंको आपसमें ही लड़ा देना ।

(२) या विचक्षणको किसी उपाय-द्वारा बन्दी बनाकर उसके हस्ताक्षरद्वारा सेनाको वापस लौटनेका आदेश देना ।

वास्तवमें ये दोनों कार्य जितने ही असम्भव थे, उससे अधिक भयानक किन्तु अजितके मस्तिष्कमें एक ऐसी चाल सूझ रही थी कि उसके सफल होते ही विजय श्री जनताके पक्षमें थी । अजितने उसी रात एक पत्र साम्राज्ञी मृणालिनीको लिखा ।

महान् साम्राज्ञी !

बधाई है कि एक योग्य सम्राटकी पुत्रीको, भारत देश जैसे महान् राष्ट्रकी साम्राज्ञी बनकर, महान् राजसिंहासनकी आप सफल उत्तराधिकारिणी हैं । सम्राटके जीवन कालमें ही हम सब किसी शुभ बेलामें आपके राज-तिलक करनेकी शुभ प्रतीक्षामें थे किन्तु दैव-दुर्विपाकसे हमारे प्यारे एवं दयालु सम्राट हमसे छीन लिए गये और आपको राजमुकुट पहिनानेके पवित्र कार्यसे हम वंचित रह गये । फिर भी सम्राटके प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त करनेवाली जनता, उनके षड़यन्त्रपूर्ण निर्दय निधनकी आकस्मिक घटनासे व्यथित होकर भी आपको भुला न सकी और अपनी पूर्ण

आस्था एवं विश्वास व्यक्त करते हुए सूने राजसिंहासनपर आपको प्रतिष्ठितकर दिया । हम सब जनता और राजसिंहासनके प्रति आभारी हैं ।

साम्राज्ञी ! इतना सब कुछ होते हुए भी, साम्राज्यका शासन-प्रबन्ध एक ऐसे निर्दय व्यक्तिके हाथमें है, जो वर्ग-स्वार्थके अतिरिक्त उत्तर-दायी शासनकी कल्पना भी नहींकर सकता । महा-आमात्य एक विशाल सैन्य वाहिनी लेकर नंगे-भूखोंकी हत्या करनेपर तुले हुये हैं। जनता अव्य-वस्थित एवं अशान्त शासन प्रबन्धसे ऊबकर कुछ दिनों पूर्व अपना शासन प्रबन्ध पञ्चायतके हाथों सौंप चुकी है। साथ ही चुनी हुई सरकारको विशाल बहुमतसे जनताने मान्यता प्रदानकर दी है किन्तु खेद है कि महा-आमात्य ऐसी सरकारके अस्तित्वको भी नहीं सहनकर सकते । यह भी सही है कि पूर्ण प्रजातन्त्र शासनका उपभोग करनेवाली दक्षिणी साम्राज्यकी जनता भारतकी महान साम्राज्ञीके राजसिंहासनके प्रतिपूर्ण उत्तरदायी है, किन्तु ऐसी जनता पूँजीपतियोंके नायकोंको अपना संरक्षक माननेमें पूर्णतः असहमत है । क्या ही अच्छा होता, यदि आप स्वयं ऐसे विकट समयमें हम सबके बीच आ उपस्थित होतीं और भावी नर-मेध यज्ञकी आहुतियाँ बननेसे पूर्व कृषकों एवं श्रमिकोंकी संरक्षक एवं त्राता बनकर उनके निरपराध जीवनकी रक्षाकर पातीं ।

आपकी प्रतीक्षा ही में कटनेवाले क्षणोंको विकलताके साथ बिताने-वाली ।

आपकी ही—

दक्षिणी साम्राज्यकी प्रजा

अजितने उक्त पत्र मृणालिनीकी सेवामें अपने एक विश्वस्त सैनिकके हाथ भेजकर विचक्षणकी कार्यवाहियोंपर तीक्ष्ण दृष्टि रखना प्रारंभकर दी । गृह-रक्षक दलोंको पूर्ण सजग रहनेकी आज्ञा थी ।

यशवर्द्धन अपनी स्वतन्त्र सरकारके साथ गुप्त रूपसे बीस मील दूरीपर अवस्थित एक पहाड़ी दुर्गमें रहने लगा। किन्तु दुर्गका ऊपरी भाग बीहड़ जंगलों एवं हिंस्त्र पशुओंसे घिरा हुआ था। यशवर्द्धन उसी पहाड़ी दुर्गकी प्राचीन खोहका जीर्णोद्धार कराकर पृथ्वी तलमें सहस्रोंनागरिकोंके साथ, जो किसी भी क्षण लड़ाकू सैनिकोंमें परिवर्तन हो सकते थे, स्वतन्त्र सरकार चलाने लगा।

दक्षिणी साम्राज्यके कोने-कोनेमें प्रभावशाली कार्यकर्त्ताओंके समीप अपने आदेश भेजकर सैनिक शक्तिको संगठित करनेकी धुनमें यशवर्द्धन लग गया। धीरे धीरे यशवर्द्धनकी सहायातार्थ विजयके गीत गाते हुए दूर और पासकी बस्तियोंसे सैनिक-तत्व एकत्रित होने लगे। विचक्षणको इन कार्यवाहियोंका कुछ भी पता न था। उसे जो सूचनाएँ प्राप्त हो रही थीं, उनके अनुसार वह इतना ही जान पाया था, अजित एक विशाल गृहरक्षक दलोंके साथ जनताकी सेवाके लिये तत्पर है, किन्तु स्वतन्त्र सरकारके दूर चले जानेकी कोई सूचना विचक्षणको प्राप्त न हो सकी थी।

दूसरे, अभी तक विचक्षण सेनाकी खाद्य-सामग्री भी पर्याप्त मात्रामें एकत्रित न कर सका था। उसके गुप्तचर चारों ओर घूम-फिरकर अन्न भण्डारोंका पता लगा रहे थे किन्तु चारों ओर अकाल ग्रस्त क्षेत्रोंका ही पता लग पाता था। विचक्षण राजधानीसे यही सोचकर आया था कि दक्षिणी साम्राज्यमें देशके इतने विशाल भूगाग पार करनेके पश्चात् वह अवश्य पर्याप्त-मात्रामें अन्न तथा दूसरी आवश्यक जीवन सामग्रियाँ प्राप्तकर सकेगा, किन्तु उसे चारों ओर निराशाका ही सामना करना पड़ा था।

यशवर्द्धन शत्रुको पराजित करनेका आधा कार्य पूराकर चुका था। अन्नके दाने न पाकर विचक्षणकी परिस्थिति बहुत कुछ बुरी हो चली थी। जितनी रसद-सामग्री लेकर विचक्षण चला था उसका अधिकांश तो मार्ग

ही में व्यय हो चुका था। बचा-खुचा अवशेष माह भरके हेतु पर्याप्त था। इतने दिन विचक्षणको स्थान-विशेषकी जानकारी करनेमें व्यतीत करने पड़े थे। वास्तवमें अजित ऐसे ही क्षणकी ताकमें था कि जब कि सेनाको रसद सामग्री प्राप्त न हो सके, तब वह सेनामें ही विद्रोहकी आग प्रज्वलितकर बैठे।

दूसरी ओर यशवर्द्धनके पहाड़ी दुर्गमें जो लोग सहायतार्थ आ रहे थे, वे अपने साथ रसद आदि पर्याप्तमात्रामें लेकर आ रहे थे। यहाँ तक कि उन्हें स्वतन्त्र सरकारपर निर्भर रहनेवाली जनताके उदर-पोषणकी भी चिन्ता थी। यशवर्द्धनने एक मासकी अवधिमें ही लाखों व्यक्तियोंके खाद्यान्न एवं वस्त्रादिकोंको सालोंके लिए एकत्रितकर लिया था। पहाड़ी दुर्गके नीचेकी सम्पूर्ण पृथ्वी सैनिक शिविरकी तरह स्वतन्त्र सरकारके काम आ रही थी।

इधर अजितके पत्रको प्राप्तकर मृणालिनी भी दक्षिणी साम्राज्यके लिए प्रस्थानकर गईं। अभी आधा मार्ग बाकी था किन्तु विद्रोहियोंके विजयका पूर्वाभास उसे मार्गमें ही मिल चुका था। वास्तवमें अजितने जिस व्यक्तिके हाथ मृणालिनीको पत्र भेजा था, वह यशवर्द्धनकी स्वतन्त्र सरकारके रक्षा-मंत्री था और सम्पूर्ण रास्तेमें विनोदकी जगह मृणालिनको भी सूचनाएँ दी गयी थीं, जो दक्षिणी साम्राज्यमें स्वतन्त्र सरकार स्थापित करते समय अराजकतावादियोंने अपनाईं थीं।

विचक्षण स्वतंत्र सरकारके सदस्यों एवं मन्त्रियोंको बन्दीरूपमें देखनेकी कल्पना [illegible] [illegible]ल-विजयवाहिनीके साथ दक्षिणी साम्राज्यकी भूमि रौंदने [illegible] था किन्तु महान आश्चर्य इस बातका था कि उसकी सेनाका [illegible] करनेके हेतु सूने घरोंके अतिरिक्त और कोई न था। अजितके गृह-रक्षक दलों तकका पता लगाना कठिन हो गया, जिन्हें कुचलनेका अरमान भरा हृदय लेकर वह चला था, वे उसकी सिर-पीड़ा बनकर

साम्राज्यके कोने-कोनेमें अपनी आग प्रज्वलितकर रहे थे। अजितके गृह-रक्षक दल उसके रसदकी लूट मचा रहे थे।

विचक्षणके सहायक जमीन्दार उसकी सेनाको विपत्तिमें फँसी देख खाद्यान्न देनेका वचन दे चुके थे किन्तु जैसे ही वह खाद्यान्न विचक्षणके शिविरके समीप पहुँचने लगता था, अजितके गृह रक्षकदल विशेष मार्गोंसे पहुँचकर आक्रमणकर बैठते थे और उसे छीनकर पंचायती सरकारके कोषमें जमाकर देते थे। प्रत्येक भावी दिनके उपस्थित होते ह विचक्षणकी नयी कठिनाइयाँ उसके साहस एवं महत्वाकांक्षाओंका गला घोंट देती थीं। एक ओर यशवर्द्धनकी स्थिति सामरिक दृष्टिसे दृढ़ होती जाती थी तो दूसरी ओर विचक्षण विपत्तिपूर्ण घड़ियोंके अधिक निकट आ रहा था। एक दिन वह आ उपस्थित हुआ, जब साम्राज्ञी मृणालिनी भी विचक्षणके सैनिक शिविरमें आ उपस्थित हुई और अपने महा-आमात्यके हाथ-पावोंको निराशा एवं हारसे फूलते हुए पाया।

अजित इतने समय तक केवल मृणालिनीकी प्रतीक्षामें बैठा हुआ चुपचाप अपनी स्थिति दृढ़ बना रहा था। ज्योंही मृणालिनीके आगमनका समाचार उसे ज्ञात हुआ, उसने चुने हुए कार्यकर्ताओंद्वारा प्रान्तकी नंगी-भूखी जनताका आह्वान किया। वे अस्थि-चर्मावशिष्ट प्राणी साम्राज्ञीको अपनी करुण गाथा सुनानेके लिए लाखोंकी तादादमें आ एकत्रित हुए। मृणालिनी इनकी हड्डीकी ठठरियोंको देखकर अवाक् रह गयी। उसे स्वप्नमें भी न भान था कि पेटकी ज्वाला मनुष्यको इतना घिनौना, दीन, एवं कुरूप बना देती है। ज्ञात होता था, जैसे उन अस्थिपंजर कायोंके भीतर मृत्यु भी प्रवेश करनेसे हिचकती है।

मृणालिनीने उनकी हृदय हिला देनेवाली विपत्ति सुनी। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा—"इतने दिनों पश्चात् पंचायती सरकारने हमारी कठिनाइयोंको दूरकर दिया था। अगली पैदावार बोनेके लिए पंचायती सरकारद्वारा बीज एवं आर्थिक सहायता पहुँचायी जाने लगी थी किन्तु

महा-आमात्यका सैनिक-संगठन पुनः चारों ओर अव्यवस्था फैलानेमें लग गया। क्या आवश्यकता थी कि विजयवाहिनी के साथ महा-आमात्य दक्षिणी साम्राज्यमें आकर चारों ओर आतंक फैला दें और जनता का शान्तिमय जीवन असम्भव हो जावे ? चारों ओर मौत की-सी भगदड़ मच पड़े और वर्षों की सतायी एवं चोट खायी जनता अपना दैनिक निर्वाह त्यागकर पहाड़ों और जंगलों की खोहोंमे आत्म-रक्षाका प्रबन्ध करे ?''

''घृणा होती है ऐसे नर-राक्षसकी हीन वृत्तियोंसे, जो मृत्युका ग्रास बननेवाली नंगी भूखी प्रजापर कत्ले-आमका रोब लादनेवाली हो ! जो लड़खड़ाती जनता को सम्हलनेसे पहले निर्दय ठोकर मारकर भूमिसात्‌कर दे ! जो सोने-चाँदीके सिक्कोंके स्थानपर जनताका जीवन-नाश चाहती हो।''

बीच हीमें बात काटकर जनताको सम्बोधित करते हुए मृणालिनी बोली—''आप लोगोंपर होनेवाले अत्याचारों एवं प्रहारोंसे मैं दीर्घकालसे अवगत हूँ। महा-आमात्यसे परामर्श करनेके पश्चात् आपकी सम्पूर्ण विपत्तियोंको दूर करनेका प्रत्येक संभव उपाय करूँगी, किन्तु मैं जानना चाहती थी कि जब आप लोगोंकी ऐसी दुरावस्था वर्षोंसे होती चली आ रही थी, तब आपने सम्राटकी सरकारके समक्ष अपनी इस हीन-स्थितिका प्रदर्शन किया था या ?''

''अवश्य साम्राज्ञी ! स्वर्गवासी सम्राटने अजितके संरक्षणमें जनताके नामपर अपना समग्र व्यक्तिगत कोष प्रदान किया था और उसी धनसे रोजी-रोटी एवं अकालकी विकट परिस्थितिका सामनाकर पिछले वर्षों सभी प्रजा आत्म-निर्भर हो गयी थी किन्तु इस नव-वर्षके आरम्भ होते ही महा-आमात्य विजय-लिप्सासे छले जाकर नंगों-भूखोंको विद्रोहका दण्ड देने आये हैं। हमारी साम्राज्ञीसे यही विनीत पुकार है कि यहाँ की व्यवस्था ज्योंकी त्यों स्थापित रहे और आमात्य

जो व्यय सेनापर करनेवाले हों, वह सारी सम्पत्ति हमारी पंचायती सरकारको प्रदानकर वे आतंकवादी सेनाको वितरित करे दें।"

विचक्षण इन दुर्बल-काय प्रेतात्माओंको देखकर स्वयं भौचक्कासा रह गया था। उसे आश्चर्य था तो इसपर कि उसकी उपस्थितिके समय एक भी मूर्ति दिखलायी नहीं पड़ती थी और साम्राज्ञीके आनेपर नेत्र-कोटरोंमें धँसी पुतलियोंवाले अभागे लाखों प्राणी अपना स्वयं प्रतिनिधित्वकर रहे हैं। सम्राज्ञीको मौखिक विवरण देनेसे अधिक प्रभावोत्पादक अकाल पीड़ितोंकी वृहत संख्या थी।

साम्राज्ञीके भृकुटि-विलासमें एकाएक महान् परिवर्तन हो उठा। पहले तो मृणालिनी सदय बनकर नेत्रकोरोंमें आँसू भर लायी किन्तु युगोंसे दधिचिकी भाँति त्यागमय जीवन बितानेवाले श्रमिक एवं कृषक वर्गकी सिकुड़ी हुई उदर—चर्मकी सलवटोंने, उसकी कोमल दृष्टिमें अंगारकी दहकती ज्वाला भर दी। उसने कठोर वाणीमें महा-आमात्यसे पूछा—"यही आपके दुःशासनका नमूना है? मनुष्यका रूप विकृत होकर प्रेतकी छाया-मात्र रह गया है! यह भूखे-पेटकी ज्वालासे सन्तप्त अर्द्ध-नग्न, सचमुच, क्या जीवित प्रेतोंके कंकाल हैं! इन्हें इस अवस्था तक पहुँचानेका दायित्व किस पर है?"

महा-आमात्य मृणालिनीके प्रश्नपर बगलें झाँकने लगा। कुपित स्वरमें साम्राज्ञी बोली—विद्रोहियोंको प्राणदण्ड देनेवाले महा-आमात्य बतलायें कि लाखों स्त्री पुरुषों एवं बच्चोंके भूखों मारनेवालेको क्या दंड प्रदान किया जावे?"

"इसका निर्णय फिर कभी होगा अभी तो साम्राज्ञी........."

"नहीं, इसका निर्णय अभी होगा। जनता ने शासन व्यवस्थाका सर्वनाशी प्रमाण मेरी दृष्टिके सम्मुख लाकर रख दिया है। अब दण्ड भी उसे ही भोगना पड़ेगा, जिसने कि राष्ट्रकी जनताके जीवनके साथ ऐसा भयानक खिलवाड़ किया है।"

विचक्षण अपराधी जैसा मृणालिनीका मुख ताकने लगा। मृणालिनीने सम्पूर्ण दक्षिणी साम्राज्यकी जनताको सम्बोधित करते हुए घोषणाकी कि इस वर्ष प्रजाको भूमिकर देनेसे मुक्ति दी जाती है। उन खाद, बीज एवं सिंचाईकी योजनाबद्ध व्यवस्था सरकारकी ओरसेकी जावेगी।

जनता साम्राज्ञीका नाम ले लेकर "जयजयकार" कर उठी।

मृणालिनीने आगे कहा—"आप लोगोंकी दयनीय अवस्थाका अन्त करनेके लिए आवश्यक है कि अधिकारपूर्ण शब्दोंमें आपकी पीड़ाओं एवं अव्यवस्थाओंकी आवाज सरकारके बहरे कानोंमें आपका विश्वसनीय प्रतिनिधि डाले और देखे कि सरकारकी ओरसे क्या आवश्यक कदम उठाये जाते हैं?"

साम्राज्ञी उक्त बात समाप्त भी न कर पायी थी कि कर्ण कुहरोंमें गूंजनेवाली गम्भीर मिली-जुली वाणीका उद्घोष सुनायी पड़ा—"हमारे चुने हुए प्रतिनिधि अजित एवं यशवर्द्धन हैं।"

"मैं उन्हें सरकारकी ओरसे मान्यता प्रदान करती हूँ।"

विचक्षण दाँत-उखाड़े हुये सर्पकी तरह अपनी क्रोधमयी फुफकारको दबाकर हाथ मलते हुए रह गया।

साम्राज्ञी आगे बढ़ी। उसने घोषित किया कि आजसे वह अपने सम्पूर्ण अधिकार पंचायती सरकारको प्रदत्त करती है और भविष्यमें परम्परागत पूर्व प्रचलनकी भाँति, समग्र भारतके राजसिंहासनकी उत्तराधिकारिणी साम्राज्यकी पंचायती सरकार होगी। सम्राट या साम्राज्ञीका पद छूटकर वैधानिक प्रमुखको प्रदान किया जावेगा, जिसे राष्ट्रकी जनता चुनेगी। इसी प्रकार मन्त्रिमण्डलके पदाधिकारी सम्राट या साम्राज्ञीद्वारा मनोनीत न होकर जनताद्वारा चुने जावेंगे।

विचक्षणाकी पाँव तले की भूमि खिसकतीसी दृष्टिगोचर होने लगी।

वह सूर्यके आलोकके समक्ष प्रकाशित दीपकके लौ की तरह निस्तेज हो गया। उसका दर्प-भरा मुखमण्डल अमित निराशाओंके अचानक प्रहारसे पीला पड़ गया।

साम्राज्ञी उचटती हुई दृष्टि विचक्षणपर डालते हुए आगे बढ़ी। उसने कहा—"जनतापर नित आये दिन ढहनेवाली विपत्तिके कारणोंका पता लगाने और अपराधियोंको कठोर दण्ड प्रदान करनेके हेतु अलगसे एक विशेष न्यायालयके निर्माणकी घोषणाकी जाती है। न्यायालय पंचायती दृष्टिकोण रखते हुए जनताके प्रतिनिधियोंके प्रति उत्तरदायी होगा और न्यायालयके मान्य-सदस्य जनता द्वारा ही मनोनीत किये जावेंगे। इसके अतिरिक्त स्वर्गीय सम्राटने अपने जीवन काल ही में, दक्षिणी साम्राज्यमें उत्पन्न विषम परिस्थितिकी जाँचके लिए, एक चुनी हुई न्याय-समितिकी घोषणाकी थी और विचक्षण एवं उनके मन्त्रि-मण्डलके विरुद्ध जनतापर किये गये जुल्म-ज्यादतियोंकी सूची प्रस्तुतकर महा-आमात्य एवं सम्पूर्ण मंत्रिमण्डलको बाध्य किया था कि वे अपने कार्यकालके दिनोंमें आरोपित दोषोंका समुचित प्रत्युत्तर देवें। दुर्भाग्यसे सम्राटके स्वर्गारोहणके पश्चात् महाआमात्यने उस न्याय-समितिको भंगकर दिया और उनके सहित सारा मन्त्रिमण्डल स्वेच्छासे ही निर्दोष बन बैठा था। किन्तु आज मैं सम्राटद्वारा नियुक्तकी गयी न्याय-समितिके अस्तित्वको स्वीकार करती हूँ और घोषणा करती हूँ कि महा-आमात्य एवं सारा मन्त्रिमण्डल तब तक अपनेको निर्दोष न समझे जब तक न्यायसमिति सबको निर्दोष न सिद्धकर दे और हाँ यदि उनका दोष सिद्ध हुआ तब तो उन्हें कठोर दण्ड भोगने के लिए उद्यत रहना चाहिए।"

तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच, साम्राज्ञीकी उग्र घोषणा मानों जनताकी स्वीकृति पाकर गरज उठी। विचक्षण और उनके साथियोंकी मनोदशा ठीक उस बन्दीकी भाँति हो चली, जिसे अपने कृत दुष्कर्मों

का फल भोगनेके लिए मृत्यु-दण्ड स्वीकार करना पड़ता है। विचक्षण सहमी दृष्टिसे अपने पूर्व कर्मोंको सोचते हुए मन ही मन मृणालिनीसे जीवन भिक्षा माँगनेकी कल्पनाकर रहा था किन्तु निरपराध सम्राटकी तसवीर उसकी अन्तर्दृष्टिमें उभरकर मानों उससे पूछ रही थी—"क्या कृतघ्नताकी तुम साकार प्रतिमा नहीं हो? क्या, तुम्हें मैंने महा-अमात्यके पदपर प्रतिष्ठितकर अपनी मृत्युको माँगा था? क्या कृतघ्नता भी तुमसे घृणा नहीं करने लगी है?"

जब विचक्षण अपने पापकी ज्वालासे चुपचाप भस्म हो रहा था, तब जनता तोरण बन्दनवारोंको सजाकर अपनी साम्राज्ञीके स्वागतका आयोजनकर रही थी। मृत्युकी सी शान्ति धारण करनेवाला नगर अमृतदायिनी घोषणाओंद्वारा सजीव होकर साम्राज्ञीके स्वागत-गानकी मधुर रागनियोंके कम्पनसे गूँज रहा था। जहाँ क्षण भर पहले करुणा नेत्र फाड़-फाड़कर अश्रुपात करती दिखलायी पड़ी थी, वहीं अब नूतन अभिनन्दन एवं आशाओंके फूल बरस रहे थे।

साम्राज्ञीका आगमन किसी शुभ मुहूर्तका प्रतीक था। पञ्चायती सरकार मृणालिनीकी घोषणाओंद्वारा मान्यता प्राप्तकर विशाल जन-समूहके साथ नगर लौट रही थी। अजित जो प्रथम दिनसे ही नगरमें गुप्तरूपसे निवास करता था, आज पहली बार प्रकट होकर साम्राज्ञीका अभिवादन करने निकला था। विचक्षणके लिए अजितकी उपस्थिति किसी अशुभ सूचनाकी द्योतक थी।

साम्राज्ञीने प्रधान सैनिक पदाधिकारियोंको बुलाकर सेनाका नियन्त्रण अपने हाथमें ले लिया। साम्राज्ञी अश्वारोही होकर सम्पूर्ण सेनाका अभिवादन कर रही थी। प्रधान सेनापति, जो विचक्षणके आशीर्वादस्थ होकर राजधानीसे दक्षिणी साम्राज्य तक अनेक विपत्ति सहन करते हुए आया था, प्रान्तका प्रत्यक्ष-वर्णन साम्राज्ञीसे कर रहा था।

प्रधान सेनापतिने साम्राज्ञीको बतलाया कि दक्षिणी साम्राज्यकी जनता आक्रामक न बनकर रक्षात्मक कार्यवाही करती आयी है। वास्तवमें जनता सम्राज्ञीकी सेनासे युद्ध नहीं चाहती और स्थिति यह है कि दुर्भाग्यसे यदि युद्ध अवश्यम्भावी बनता, तब तो पराजयका टीका लगाकर ही सेनाको राजधानीकी ओर लौटना पड़ता और ऐसी दुरावस्थामें सैन्य-विघटन करने से विद्रोह एवं अव्यवस्थाका फैल जाना निश्चित सा था।

प्रधान सेनापतिने साम्राज्ञीको स्पष्ट प्रकटकर दिया था कि भविष्यमें कभी भी महा-आमात्यके आदेशपर सैन्य संचालन एक भयानक भूल होगी। क्योंकि महा-आमात्य जिन्हें विद्रोही घोषित करते आये हैं, वे साम्राज्य एवं राजसिंहासनके प्रति अनुत्तरदायी नहीं, वरन् व्यक्तिगत रूप से महा-आमात्यके विरोधी हैं। क्योंकि उनके शासन प्रबन्धका दुष्फल जनताको असीम कष्टोंके साथ भोगना पड़ा है और शोषणसे मृत्यु तककी सम्पूर्ण यातनाएँ जनताने झेलीं है। दूसरे राजधानीसे दूर रहते हुए विशाल सैन्यके रसद एवं वस्त्रादिकका भी समुचित प्रबन्ध महा-आमात्य नहींकर सके। कहीं यदि जनता युद्ध करनेपर तुल गयी होती तब तो सैनिक-विद्रोह होता। सेनाने नंगों भूखोंसे युद्ध करना अस्वीकारकर दिया था। निहत्थी जनताका विनाश शासनके कलंक का टीका है। दूसरी ओर रसदके अभावमें सेनाके सेपाही स्वयं अराजक बन बैठते, अथवा विद्रोहियोंसे जा मिलते, जैसा कि अजितकी योजना थी। गुप्तरूपसे विवरण एकत्रित करनेपर ज्ञात हुआ है कि अजित एवं समानान्तर वर्दियाँ लाखों सिपाहियोंके लिए एकत्रित थीं। दूसरी ओर वे यहाँके प्रादेशिक ज्ञानसे सम्पन्न होनेके कारण र'ाज्य-द्वारा भेजी गयी सैनिक सहायताको हथिया लेनेमें छापामारका ५ार्यकर रहे थे।

मृणालिनीने सम्पूर्ण ज्ञातव्य बातोंको जानकर सेनाका सम्पूर्ण

संचालन अपने हाथमें ले लिया। प्रधान सेनापतिको आदेश दिया गया कि सैन्य संचालन सम्बन्धी कोई भी आदेश साम्राज्ञीके अतिरिक्त दूसरा अधिकारी न दे सकेगा। प्रधान सेनापति महाअमात्यके आदेशोंपर निर्भर न होंगे। सेनाका सम्पूर्ण नियन्त्रण एवं संचालन साम्राज्ञीके आदेशानुसार हुआ करेगा।

विचक्षणका शक्तिशाली प्रभुत्व सेनापरसे उठा लिया गया। एका-एक विचक्षणको अनुभव हुआ कि राजधानीसे हजारों मील दूर आकर उसने भयानक भूलकी है। एक ओर विचक्षणपर आरोपित पुराने अभियोगोंकी नये सिरेसे जाँच होगी। दूसरी ओर शक्तिका स्त्रोत उससे छीन लिया गया है और उसके विशेष पिट्ठुओंको साम्राज्ञीने अवकाश ग्रहण करनेका आदेश दिया है। नये सिरेसे सेनाके सारे प्रधान अधि-कारी साम्राज्ञीके प्रति उत्तरदायी हैं। मृणालिनी पिताकी भाँति दूसरोंपर विश्वास न कर स्वयं शक्तियोंसे सम्पन्न है और वास्तवमें उसने थोड़े ही कालमें सम्पूर्ण प्रजा एवं राजकीय सत्ताधारियोंके विश्वासको अपने पक्षमें जीत लिया है।

विचक्षणको ज्ञात हुआ कि जिस पदकी महत्ताके अहंकारसे उसने सम्राटको मृत्यके घाट उतारा और मृणालिनीको अपने हाथका खिलौना बनाकर जनताको धोखा देना चाहा, मृणालिनीने तीन वर्षोंमें ही प्रभुत्व एवं शक्ति सम्पन्न बनकर विचक्षण जैसे धूर्त्त एवं कुटिल राजनीतिज्ञको प्रभावहीन तथा खोखला बना दिया। मृणालिनीके साथ आनेवाले कर्मचारियों द्वारा ज्ञात हुआ कि केन्द्रमें ही शासन प्रबन्ध सम्बन्धी महत्व-पूर्ण पदोंमें विशेष परिवर्तन किये हैं, जिनके बारेमें विचक्षणसे अभिमत लेना तो दूर रहा, उसे सूचना तक नहीं दी गयी है। तो क्या मृणालिनी को विचक्षणके षड़यंत्र ज्ञात हो चुके हैं? क्या जिस बातको सम्राटने अपने जीवन-कालके अन्तिम क्षणोंमें जाना, उसे मृणालिनी शासन-सूत्र

ग्रहण करते ही जान गयी ? क्या विचक्षणके प्रभावका अवसान-काल निकट आ चुका है ?

विचक्षण मकड़ीके जालकी तरह, अपनी ही दुष्कृतियोंके फल-स्वरूप अपने आपसे ही बन्दी जैसा बन गया। उसे अपने चारों ओर षड़यन्त्रोंका व्यूह-सा दिखलायी पड़ रहा था, जिससे मुक्ति पानेका मार्ग चारों ओरसे अवरुद्ध था। पूर्ण तानाशाहकी भाँति निरंकुश जीवन व्यतीत करनेवाला भारतीय साम्राज्यका महा-आमात्य अपनी रक्षामें खड़े सैनिकोंको ही सन्दिग्ध दृष्टिसे देखने लगा। मृणालिनीको पूर्व सूचना दिये बिना, दक्षिणी साम्राज्यमें एकाएक निर्भय मनसे चले आना ही, मानों किसी भावी अनिष्टका संकेत-मात्र था। विचक्षण बन्दीकी भाँति चुपचाप रहा करता था। किसी प्रकार दिन व्यीतत होते ही, उसे रात्रिकी चिन्ता करती पड़ती।

विचक्षणकी मनोदशा मृणालिनीसे छिपी न रह सकी, फिर भी साम्राज्ञी अपनी ओरसे किसी प्रकारका सन्दिग्ध वातावरण बनाना न चाहती थी। वह अजितके साथ दिन-रात कठिन परिश्रम करते हुए, प्रजाके दुखोंके निवारणार्थ कार्य करती। जन-मन-रंजन करना ही उसे अभीष्ट था।

प्रजा उसके आगमनकी चर्चा सुनकर दूर दूरसे उसके दर्शनार्थ आ रही थी। मृणालिनी निरालस भावसे जनतासे मिलती, उनके दुःख-दर्दकी गाथा सहानुभूति एवं सौजन्य प्रदर्शित करते हुए सुनती और शीघ्र ही आवश्यक सहायता भी पहुँचाती जा रही थी। प्रजा उसके नामका माला जपते हुए अपने घरोंको लौटती थी। पीड़ा एवं निराशाके स्थानपर सुख एवं नवीन आशाका संचार करना मृणालिनीका कर्तव्य बन गया था। मृणालिनीके पास जो आया, वह उसका बनकर अपने घर लौटा।

एक दिन मृणालिनीने प्रधान सेनापतिको बुलाया और आज्ञा दी कि सम्पूर्ण सेना राजधानी लौट जावे। विचक्षणने अराजकतावादियोंका भय दिखाकर सेनाके अकारण लौट जानेका विरोध भी किया किन्तु साम्राज्ञीके सम्मुख उसकी एक न चल न सकी। मृणालिनीने आदेश दिया कि प्रधान सेनापति शीघ्र ही विशाल सैन्यवाहिनीके साथ राजधानीको प्रस्थान करें। दक्षिणी साम्राज्यमें कोई अराजकता या साम्राज्ञीके शासनके प्रति विद्रोह नहीं है।

मृणालिनीने स्वयं अपने विश्वस्त सलाहकारोंकी सहमति प्राप्तकर लेनेके पश्चात् यशवर्द्धनकी समानान्तर सरकारको मान्यता प्रदानकर विचक्षण द्वारा घोषित सरकारको भंगकर दिया। यशवर्द्धन स्वयं पंचायती शासनका प्रमुख बन, साम्राज्ञीके वैधानिक अस्तित्वको स्वीकारकर, सिंहासनके प्रति वफादार बने रहनेकी शपथ ग्रहणकर चुका था अतएव मृणालिनीकी रायमें दक्षिणी साम्राज्यमें पूर्ण शान्ति विराज रही थी और सम्पूर्ण प्रजा अपनी दृढ़ राजभक्तिका परिचय भी दे चुकी थी।

प्रधान सेनापतिके आदेशानुसार सम्पूर्ण सेना राजधानीकी ओर लौट चली और दक्षिणी साम्राज्यमें विचक्षणके पूँजीवादी शासन-कारियोंका पूर्ण विनाश भी हो गया। प्रजाको शोषणसे मुक्ति मिली और प्रजाके रक्तके प्यासे खूनी भेड़िये मौतके घाट उतार दिये गये। प्रजाकी बिन्दुमात्र रक्तपात हुए बिना ही शानदार विजय हुई। अजित एवं यशवर्द्धनके सफल नेतृत्वका कल्याणकारी परिणाम, जनताके उपभोग और आनन्दका प्रतीक बन गया। मृणालिनी, अजित एवं यशवर्द्धनकी 'जय-जयकार' चतुर्दिक प्रतिध्वनित हो उठी।

इस रक्तहीन क्रान्तिका परिणाम पूर्व एवं पश्चिमी साम्राज्यपर भी पड़ा। अजितके सफल नेतृत्वकी साख चारों ओर गूँज उठी। जनताकी न्यायोचित माँगे और अधिकारकी वैधानिक लड़ाई सारे देशके कोने

कोनेमें प्रारम्भ हो गयी। अभिनन्दन एवं आमन्त्रण भरे पात्रोंद्वारा अजितका बुलावा होने लगा। मृणालिनी अजित के नेतृत्वपर स्वयं मुग्ध हो गयी।

जैसे ही दक्षिणी साम्राज्यकी सम्पूर्ण कठिनाइयाँ समाप्त हुईं, वैसे ही मृणालिनीने राजधानी लौटनेकी इच्छा प्रकट की। अजितने कृतज्ञता पूर्वक साम्राज्ञीको थोड़े दिनोंके लिए रुकनेका आग्रह किया। अब दोनों एक दूसरेसे दैनिक मिलने, परामर्श करने एवं शासन प्रबन्धकी अनेक जटिल गुत्थियोंको साथ-साथ सुलझानेमें अपने शक्ति व्यक्ति व्यय करने लगे। प्रजाको अधिकाधिक लाभ पहुँचाने लगा और साम्राज्ञीको शासन प्रबन्ध जैसे पक्षपात रहित एवं नीरस कार्यके लिए एक योग्य साथी मिल गया। विचक्षण भी साम्राज्ञीके घृणाका पात्र बन गया। मृणालिनीने प्रकटरूपमें महा-आमात्यका बहिष्कार सा कर दिया और उल्टे यशवर्द्धनको गुप्त आज्ञा दी गयी कि वह महा-आमात्यकी कार्यवाहियोंपर सतर्क दृष्टि रखे और बिना साम्राज्ञीकी स्वीकृति प्राप्त किये, वह स्वतन्त्र रूपसे विचक्षण ही विचरण न कर सके। एक प्रकारसे विचक्षण नजर बन्दोंका सा जीवन व्यतीत करने लगा।

विचक्षणको मृणालिनीपर भी आ रहा था, किन्तु बेबस था। दूर देशमें वह नाम मात्रका महा आमात्य रह गया। मृणालिनी और अजितका बढ़ता हुआ सहयोग विचक्षणके हृदयमें कांटेकी तरह खटक रहा था। हाँ, उसे रह रहकर "न्याय समिति" का भय भी सता रहा था। सम्भवतः वह इसी हेतु रोक लिया गया था जिससे कि दक्षिणी साम्राज्यकी जनता द्वारा आरोपित दोषोंकी खुली जाँच की जावे।

विचक्षण इस प्रयासमें था कि यह जाँच राजधानीमें हो और न केवल दक्षिणी साम्राज्यकी वरन् पूर्व-पश्चिम एवं उत्तरसे भी उसके विरुद्ध प्रमाण एकत्रित किये जाँय, किन्तु उसे यह न ज्ञात था कि साम्राज्ञी

अजितकी सहायता प्राप्त कर सम्पूर्ण उपकरण एकत्रित कर चुकी है और देशके कोने-कोनेसे उसके विरुद्ध प्रमाण एवं साक्षी एकत्रित हैं।

अचानक एक दिन विचक्षणके सम्मुख विरूपाक्षी आ खड़ी हुई। वह भौचक सा रह गया। उसे यह भी न सूझ पड़ा कि विरूपाक्षीसे पूछे कि वह इतनी दूर कैसे आयी! क्यों आयी? किसकी सहायतासे आयी?

अन्तमें विरूपाक्षी ही ने मौन भङ्ग किया। अभिवादन करते हुए, काँपती वाणीमें विरूपाक्षी बोली—"महा-आमात्य! आपके मंत्री-मण्डल के सारे मंत्री प्रधानसेनापति द्वारा बन्दी बनाकर यहीं भेजे गये हैं। सुननेमें आया था कि किसी न्याय समितिके समक्ष वह बन्दी वेशमें खड़े होंगे। साम्राज्ञीकी विशेष आज्ञा द्वारा मंत्रि मंडल भङ्ग कर दिया गया है। राजधानीमें सैनिक शासन है। मुझे यह भी सूचना मिली है कि स्वतः आप पर सम्राटके प्राण लेनेका षड्यंत्र सिद्ध हो चुका है।"

बात समाप्त भी न हो पायी थी कि सहसा गृह-रक्षक दलोंके कई सतर्क युवक आ उपस्थित हुए। उन्होंने विरूपाक्षीको बन्दिनी बना लिला और महा-आमात्य, जो विरूपाक्षीकी बात सुनकर मूर्च्छित हो गिर पड़ा था, उन्हीं सैनिकों द्वारा होशमें लाया जाने लगा।

विरूपाक्षी तो भयानक काल कोठरीमें बन्द कर दी गयी और इधर चेतना लौटनेपर महा-आमात्य भी हथकड़ी एवं बेड़ियोंसे जकड़ दिये गये।

विचक्षण गृह-रक्षक सैनिकोंसे कारण जानना ही चाहते थे कि उनके प्रजक्षका कोड़ा विचक्षणकी पीठपर बरस पड़ा और सर्वेन्द्र बोला—"विचक्षण! भूल जाओ कि तुम कभी महा-आमात्य थे। आज तो तुम कातिल कैदी हो। तुम अपनी जीभतक नहीं हिला सकते। तुम्हारे अन्य मन्त्री साथी भी एकान्त कारावासकी कोठरियोंमें पड़े मार्ग श्रम मिटा रहे हैं। शीघ्र ही तुम्हें सारी स्थिति ज्ञात हो जायगी।"

कलका एक तन्त्रवादी प्रधान आमात्य, आजका बन्दी था और कुचक्र-पूर्ण शासन चलानेके अभियोगमें सम्पूर्ण मंत्री निर्णयकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

एक दिन वह भी आया जब महा-आमात्यका बेटा विजयश्रवा भी बन्दी बनाया जाकर, ठीक पिताकी कोठरीके सामने ही रखा गया। पिता पुत्र दोनों एक दूसरेको निराश दृष्टिसे देखकर मानों मूक-भाषामें कहा करते कि न्यायकी घड़ी शीघ्र ही आनेवाली है। हमारे जीवन भरके पाप अन्तिम दण्ड दिलानेके लिए उदित हो चुके हैं।

विजयश्रवाके आनेके पश्चात् एक ही सप्ताहमें वह व्यवसायी भी विचक्षणके सामनेकी कतारमें बन्दी बनाकर रखा गया, जिसने सम्राटको विषपान कराया था।

विचक्षणके जीवनकी रही सही आशा भी समाप्त हो गयी। एक दिन रक्षक पहरेदारकी असावधानीसे विचक्षण एवं व्यवसायीको बातें करनेका क्षणिक अवकाश मिल गया। व्यवसायीने विचक्षणको बताया कि इस गड़े मुर्देको उखाड़नेवाला अजित था। बात यह थी कि मृत्युके समय अजित उन्हींके साथ था। उसने उस व्यवसायीके घरेलू विश्वस्त सेवक-को धन देकर मिला लिया था। उसी सेवकने अजितको बतलाया कि किस प्रकार किन वैद्योंसे मिलकर प्राण-घाती कालकूट मँगाया गया था और सम्राटके भोजन एवं पेय पदार्थोंमें विषका सम्मिश्रण मेरे ही हाथों द्वारा किया गया था। अजितने विष सम्मिश्रित शुष्कान्नोंको उसी सेवक द्वारा चखाकर एक कुत्तेको तत्काल खिलाया था। जिसका गवाह प्रसिद्ध सरकारी औषधालयका चिकित्सक है। अजितने ही सम्राटकी मृत्युके पश्चात् उस सेवक, चिकित्सक एवं न्यायालयके सर्वश्रेष्ठ न्यायाधीशके बयानोंको प्राप्तकर सरकारी कागजातोंमें गुप्त रूपसे सबके बयान एवं हस्ताक्षर प्राप्तकर लिये हैं। इसके अतिरिक्त सम्राटने अपने जीवनकाल-

में ही अजितकी सहायतासे अन्तःपुरके जिन कर्मचारियोंको निकलवाकर उनकी स्थान पूर्तिके लिये अपने विश्वास सेवक रखे थे, उन्हीं सेवकोंकी उपस्थितिमें, निकाले हुए कर्मचारियोंने अनेक रहस्यमय बयान दिये हैं जिनसे सिद्ध होता था कि आप सम्राटको या तो पदच्युत करानेके प्रयत्नमें है, अथवा सर्वदाके लिए सम्राटके अस्तित्वको ही मिटा देना चाहते हैं !"

"हा !"—विचक्षण अपनी कोठरीमें ही गिर पड़ा । कुछ क्षणों पश्चात् पहरेदार भी आ गया । जब विचक्षणको होश आया, तभी सारे अतीतकालके षड़यन्त्र उसकी अन्तर्दृष्टिमें नाचने लगे । विचक्षणको ज्ञात हो गया कि सम्राटकी मृत्युके पश्चात् अजितका गुप्तरूपसे सम्पूर्ण साम्राज्यमें दौरा करना क्या अर्थ रखता था ? जिस अजितको कुचल देनेके लिए विचक्षण आजीवन लालायित रहा, वही अजित विचक्षणकी मृत्युका सारा सरञ्जाम उपलब्ध कर मृणालिनीका दाहिना हाथ बना था । विचक्षण कर ही क्या सकता था ! केवल पूर्वकृत पापोंकी एक ज्वाला उसके हृदयमें दहका करती और वह काल कोठरीमें पड़ा-पड़ा मृत्युकी अन्तिम घड़ियाँ गिना करता । अशान्तिमय जीवनकी ज्वाला, रौरवकी पीड़ाको उकसाकर विचक्षणको पश्चात्ताप भी न करने देती थी ।

अन्तमें एक दिन वह घड़ी उपस्थित हुई, जब बन्दीवेशमें भारत का महा-माहात्य अपने अन्य मन्त्री साथियोंके साथ अपराधीके कठघरेमें खड़ा किया । सारे षड़यन्त्रोंकी पृष्ठभूमिमें विरूपाक्षी एवं उसका अकेला पुत्र विजयश्रवा भी था ।

साम्राज्ञी मृणालिनी कभी दर्शक और कभी साक्षी बनकर उपस्थित हुआ करती थी । अजित तो अकेला व्यक्ति था, जिसने विचक्षण एवं उसके मन्त्रियोंके अनय-अनीतिमय कार्योंका भण्डाफोड़ किया था । साम्राज्यके कोने-कोनेसे ढूँढ़-ढूँढ़कर अजितने गवाह एवं सुबूत एकत्रित

किये थे। 'न्याय समिति'को एक विशाल प्राङ्गणवाले राजप्रासादमें बैठकर जनताके सामने सारी कार्यवाहियाँ करनी पड़ती थीं। प्रत्येक दिन जनताकी भीड़ ऐसे विश्वासघाती, शोषक, एवं हत्यारे मन्त्रिमण्डलकी घृणित कार्यवाहियोंको सुनने आया करती थी। न्यायालय नरमुण्डोंसे भरा दीख पड़ता था। स्वर्गीय सम्राट-द्वारा आरोपित दोष पूर्णतः सिद्ध हो चुके थे और सम्राटकी षड्यन्त्रपूर्ण हत्याका अभियोग भी प्रामाणित हो गया।

न्याय समितिने निर्णयकी एक विशेष तिथि नियुक्त की। साथ ही अपराधियोंको स्वतन्त्रता दी गयी कि वे यदि अपनेको निर्दोष सिद्ध करनेके लिए समय चाहें, तो माननीय न्यायालय द्वारा उन्हें सब प्रकार की सुविधा प्रदान की जावेगी, किन्तु सारे अपराधियोंके विरुद्ध इतने प्रमाण एवं गवाह तथा उनके हस्ताक्षर सहित पत्र एकत्र किये गये थे, जिन्हें असत्य सिद्ध करना त्रिकालमें भी असम्भव था। अतएव स्वयं अपराधियोंने दोष स्वीकारकर लिए। निर्णयकी तिथि भी धीरे धीरे आ ही गयी।

उस दिन साम्राज्ञीसे लेकर झोपड़ीवाले तक न्यायालयमें एकत्रित हो गये। चारों ओर हथियार बन्द गृह रक्षकदल एवं सैनिकोंका पहरा लग गया। जनता दर्शक-गैलरीमें आकर बैठ गयी। मौतका सन्नाटा छा गया। बन्दीगण न्यायाधीशके सम्मुख लाये गये। विचक्षण एवं उसके साथी मन्त्रियोंका हृदय धड़कने लगा। उसका पुत्र विजयश्रवा, सम्राटका हत्यारा व्यवसायी, गुप्तचरी, विरूपाक्षी एवं अन्य अनेक बन्दी, जो साम्राज्यके कोने-कोनेसे पकड़कर लाये गये थे, न्यायालयके कठघरेमें आकर खड़े हुए।

न्यायाधीशने अपने निष्पक्ष होनेकी सौगन्ध खायी और निर्णय देने लगा। जनताका ध्यान न्यायाधीशकी ओर गया।

न्यायाधीशने कहा—सम्राट द्वारा आरोपित दोषों एवं सम्राटकी षड्-यन्त्रमयी हत्या आदि अनेक दोष सिद्ध हैं।

(१) विचक्षण एवं उनके सम्पूर्ण मन्त्री साथियोंको प्राणदण्ड दिया जाता है और सम्पूर्ण व्यक्तिगत सम्पत्ति छीनी जाती है।

(२) व्यवसायीको भी प्राणदण्ड दिया जाता है।

(३) विजयश्रवा एवं विरूपाक्षीको षड्यन्त्रोंमें सहायता करने एवं जनताको असत्य सूचनाओं द्वारा नाना प्रकारसे प्रताड़ित करानेके अप-राधमें बारह-बारह वर्षके कठोर कारावासका दण्ड दिया जाता है।

न्यायाधीश अपने स्थानसे उठकर चल पड़ा। जनता "न्यायालय एवं सत्यकी जय"के नारे लगाती हुई प्रसन्न मनसे अपने-अपने निवास स्थलकी ओर चल पड़ी। मृणालिनी और अजित भी एक साथ, जो न्यायालयके बाहर खड़े-खड़े फैसलेकी प्रतीक्षा कर रहे थे, प्रसन्न मनसे चल पड़े। गृह-रक्षक दलों एवं सैनिकोंकी खुली हुई तलवारों एवं चम-कती हुई संगीनोंके संरक्षणमें हथकड़ियों एवं बेड़ियोंसे जकड़े कभीके मन्त्री एवं आजके बन्दी, जेलकी ओर चल पड़े, जहाँ उन्हें आज ही खुले मैदानमें फाँसीके तख्तोंपर झूलना था। हाँ, अभी मृत्युसे आलिङ्गन करनेमें कुछ घण्टोंकी देर थी।

धीरे-धीरे वह समय भी व्यतीत हुआ, विचक्षण एवं उसके साथी मन्त्रियोंने जीवनमें अन्तिम बार भोजनकी थालको स्पर्श किया किन्तु पश्चात्तापके आँसुओंने गला दबा दिया, मुख बन्द हो गया, भूख मर गयी, जीवनकी कोई आशा न रही। वे रोते हुए चुपचाप भोजनको छोड़कर उठ आये। जीनेके अन्तिम क्षण भी बीत गये। सिपाहियों और ... तलवारोंसे घिरे हुए वे वध करनेके उस स्थानपर लाये गये, जहाँ कितनी ही बार दूसरोंकी जीवन-लीला समाप्त कराने आया करते

थे। आज वही स्थल उनकी जीवन-लीला समाप्त करनेके लिए मनहूसी-का वातावरण फैलाये नीरव था।

न्यायाधीश, जनताकी भीड़, जल्लाद, मृणालिनी एवं अजित, यशवर्धन तथा छोटे बड़े कर्मचारी सिपाही एवं पहरेदार सभी लोगोंसे वह स्थल भर गया। मौतके क्षण आ गये। वे ज़ालिमोंके सरताज मौतके फन्दे गलेमें डलवाकर निर्लज्जतासे समाज एवं जनताके बीच फाँसीके तख्तेपर झूलने लगे। उनके नामपर रोनेवाला और सहानुभूतिके नाम पर आँसू बहानेवाला एक भी व्यक्ति न था।

भरे मनसे दक्षिणी साम्राज्यकी प्रजा अपने-अपने वास-स्थान चल पड़ी। मार्ग में जो थोड़ा बहुत चर्चा चल पड़ती थी, वह मानों अन्तर-तमकी सत्य एवं सूक्ष्म अभिव्यक्ति-मात्र थी

कोई कहता—अन्यायियोंको ऐसे दण्ड चाहिए।

कोई कहता—अभी क्या, जनताकी शक्ति प्रबल एवं उग्र होते ही उन सबको इसी मार्ग जाना होगा, जिन्होंने, समूचे राष्ट्रमें शोषण एवं उत्पीड़नकी अग्निसे प्रत्येक हृदयको झौंसा डाला है।

एक और अभिमत व्यक्त होता—"क्या कहें, जो ही शासन एवं शक्तिकी महत्तासे मानवीय कर्तव्योंकी तिलांजलि देकर, राष्ट्रको खोखला, घिनौना, दरिद्र एवं अशिक्षित बनाता है, उसे इसी प्रकार अपने दुष्कर्मों का दण्ड भोगना पड़ता है। मानवी-दया द्रवीभूत होकर भी अना-चारीको प्रश्रय नहीं दे सकती अतः निर्लज्ज बनकर पछतावेकी मौत मरना पड़ता है।"

एक अति मानवी आत्मा भी पिघल पड़ती है—'क्या हुआ? वह कहती है—क्षमा जैसा कोई बदला नहीं किन्तु एक बार हिंसाकी सृष्टिकर अनेक बार हिंसा करनी पड़ती है। यह पाप-पुण्यका [illegible] चला करता है। अपराधोंको घृणा करते हुए अपराधीको [illegible] करना

पड़ता है। प्रेमको जीता हुआ, दण्डनीयसे कहीं अधिक खरा निकलता है।

एक उक्त साधुवादितासे चिढ़कर कहता—"महात्माजी! यह दया-धर्मका उपदेश किसी साधु मण्डलीमें करिए—शासन प्रबन्ध केवल दया-धर्मसे नहीं चलता। राज दण्ड तो अन्याइयों, पर पीड़कों एवं दुराचारियोंके हेतु हैं ही। भले ही आपको विचक्षणपर दया आयी हो किन्तु क्या कोई गिनकर बता सकता है कि समूचे राष्ट्रमें मनुष्यकृत अकाल एवं बेकारी फैलाकर महा-आमात्यने कितने प्राणियोंकी हत्या की? कितने अबोध बालकोंकी माताओंके स्तनका दूध छीना? राष्ट्रका कितना शक्तिशाली शिशु धन एवं उनकी जननियाँ अकाल-कालका ग्रास बन गयीं? राष्ट्र दुःखी दलितोंकी कष्टसे उपार्जित कितनी बड़ी धन-राशि सत्ताके समर्थक धनियोंकी तिजोरियोंमें व्यर्थ ही बन्द रखी गयी? और रोजी-रोटी माँगनेवालोंकी छातियोंपर निर्दयता पूर्वक भीषण प्रहार किया गया? जो कुछ हुआ, ठीक हुआ। दया-धर्मके ठीकेदार अन्यायी प्रकृतिवालोंको साधू नहीं बना सकते।"

जनता एवं सरकारी कर्मचारियोंकी भीड़ इसी प्रकार बातें करते चली जा रही थी। सबसे पीछे अजित एवं मृणालिनी निश्चिन्त एवं गम्भीर मुद्रामें बातें करते आ रहे थे। कुछ भी हो, कोमल हृदया साम्राज्ञीके मनमें क्षणिक उदासी भी दीख जाती थी।

साम्राज्ञी कह उठी—"जो कुछ हुआ, देखनेमें तो अवश्य कठोर है किन्तु इसके अतिरिक्त और मार्ग भी क्या था?"

'क्या था?'—अजित कह रहा था—"राष्ट्रके हितमें इनका विनाश ही कल्याणकारी थी और युगकी वाणी भी खरी निकली, इनका विनाश होकर रहा। अन्यायकी शाखाओंमें मधुरफल कैसे पैदा हो सकते थे?"

किन्तु राजधानी पहुँचते ही पञ्चायती सरकार स्थापित करनेका

कार्य प्रारम्भ कर देना होगा और आपको मेरे साथ रहकर पूर्ण सहयोग देना होगा।"

"मैं योग्य सेवाओंके लिए प्रतिक्षण आपके साथ हूँ, साम्राज्ञी। वर्षोंकी अनवरत तपस्याका फल देखनेकी शुभ लालसा अब आई है साम्राज्ञी! यदि राष्ट्रके झोपड़ियोंकी निराशा एवं उत्पीड़न दूर भगा देनेमें हम समर्थ हुए, और युगोंके दलितों एवं शोषितोंके जीवनमें नव-आशा एवं रचनाकी गतिशील कर्मठताका सञ्चार कर सके तो निश्चय ही हम स्वर्ग सुख भोगनेके भागी होंगे!"

"ऐसा आपका दृढ़ विश्वास है?—मृणालिनी बोली।"

"अवश्य साम्राज्ञी!"

"तब फिर चलिए! हम सब जनताको नव-युग, नव-उत्कर्ष एवं नवीन रचनाका सन्देश प्रसार करें। इस महान-युगमें हम सब तन, मन, धनसे देशके दरिद्र नारायणकी सेवाका व्रत लें और मानव-जीवनको सफल बनायें।

अजितने अनुभव किया कि मृणालिनी सम्राटकी पुत्री होकर भी, देशकी दरिद्रता एवं दुखदैन्यसे उसी प्रकार पीड़ित है, जैसे राष्ट्रका शोषित एवं दलित वर्ग।

वह बोला—"मेरी महान साम्राज्ञी! राष्ट्रको नये सिरेसे गठित एवं उन्नत बनानेके लिये आवश्यकता है, त्यागमय जीवन व्यतीत करनेकी, जो राष्ट्रकी जनताके लिये अनुकरणीय हो।

"वैसा आदर्श तो आप ही प्रस्तुत कर सकते हैं किन्तु मैं यथा सम्भव प्रयास करूँगी कि अधिकसे अधिक जनताकी उपयोगी बनूँ।"

इसी प्रकार भावी जीवनका काल्पनिक सुख उठाते हुए, अजित एवं साम्राज्ञी नगर-स्थित राज-प्रासादमें पहुँच गये। अजित साम्राज्ञीको अभिवादन कर यशवर्द्धनके निवास-स्थलपर चला गया।

मृणालिनी शीघ्र ही दक्षिणी साम्राज्यका शासन प्रबन्ध सुव्यवस्थित करके राजधानी लौट आयी। दक्षिणी साम्राज्यका अग्रगण्य एवं नेता यशवर्द्धनने राजकीय प्रबन्धकी भलीं-भाँति देख-भाल करना प्रारम्भ कर दी। केन्द्रसे अजित आवश्यक आदेश एवं परामर्श देता रहता था। सारी स्थिति सुधर चुकी थी।

साम्राज्यकी राजधानीमें आवश्यक परिवर्त्तन होने प्रारम्भ हो चुके थे। साम्राज्ञी पञ्चायती प्रजातन्त्रकी घोषणाकर चुकी थी। समूचा राष्ट्र चुनाव-क्षेत्र बन गया था। क्रमानुसार प्रान्तीय सरकारें और अन्तमें केन्द्रीय सरकार भी चुन ली गयी थी। केन्द्रमें मृणालिनी ही समग्र राष्ट्र की वैधानिक प्रमुख, और अजित राष्ट्र भरका प्रधान आमात्य चुना गया। अजितको पाकर मृणालिनीकी शासन सम्बन्धी चिन्ता कम हो चली थी। अजित सचमुच सुयोग्य शासक सिद्ध हुआ था और उसका राजनैतिक प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय हो चला था। अजितने स्वराष्ट्रकी मर्यादा बढ़ा दी। विदेशोंमें अच्छा मान था एवं अजितकी बातें विदेशी सरकारें भी मानती थी। प्रत्येक देशोंके साथ दैत्य सम्बन्ध भी स्थापित हो चुका था।

अपना दैनिक कार्य करते हुए एक प्रकारसे साम्राज्ञी पूर्ण निश्चिन्त बन बैठी थीं। अजितके रहते उन्हें किसी भांति कठिनाईका सामना न करना पड़ता था, किन्तु एक बात विशेष हो चली थी। ज्यों-ज्यों अजित का मान चारों ओर बढ़ रहा था और जनता उसे हृदयसिंहासनमें मुक्त विचारोंके साथ बैठा[illegible] जा रही थी त्यों-त्यों अजितके प्रति मृणालिनीका आकर्षण भी बढ़ता जाता था। अजित, चुपके-चुपके, जाने-अनजाने, मृणालिनीके अन्तर-जगतमें अपना विशेष स्थान बना चुका था। कभी कभी मृणा[illegible]ी अपने एकान्तमें स्वतः पूछ बैठती थी—यह अजित है [illegible]ना कि वह उसका महा-आमात्य है, पर इससे क्या ! वह तो

मेरी श्वास-प्रश्वासमें अपनी स्मृतिका मधुर तन्तु जोड़ता हुआ अन्तरमें समाया जा रहा है। इसकी आवश्यकता ही क्या है ? मैं जो उसे श्रद्धा करती हूँ, उसके प्रत्येक कार्यमें गौरव अनुभव करती हूँ, उसकी वाणीमें सङ्गीत, उसके दर्शनसे आत्म-तुष्टि एवं उसके अलगावमें टीस भरी पीड़ा ! यह सब क्या है ? मेरे जीवनके अङ्गोंसे उसकी एकता कैसी ! उसके बिना सब सूना क्यों ? प्रति-पल उसके दर्शनकी व्यग्र पुकार ! उससे हिल-मिल जानेकी तड़पन भरी लालसा !!

'वह कौन है जो मेरे सूने एकान्तमें द्वन्द्वकी आग जलाने आया है ? वह नेता सही, मसीहा सही, उद्धारक और मुक्तिदाता भी ठीक किन्तु मेरे वैयक्तिक जीवनका क्या ?'

मृणालिनीके जीवनमें यौवनकी उद्दाम लालसाएँ, अनजाने अतिथि की भांति, उसके प्रणय-परिचर्यामें क्षुधित एवं अतृप्त बनकर, प्रवेश करती जा रही थीं। उसे जीवनके पन्नोंमें इस नये अध्यायको जोड़ते हुए कौतूहल सा लग रहा था। जब कभी उसके एकान्तमें राजकाजकी कोई विकट समस्या लेकर अजित पहुँचता, तब साम्राज्ञी समस्याओंका समाधान करते हुए उससे पूर्णतः हिल-मिल जानेकी उक्ति सोचने लगती। किन्तु जब काम पूर्ण होनेपर अजित उसे आदर प्रदान करते हुए जानेकी बात कहता, तब मृणालिनी अनुभव करती, 'जैसे अजित उसकी कोई प्रियवस्तु छीनकर ले जा रहा हो और बदलेमें अनमना-पन, अशान्ति, एवं उद्वेगका बवण्डर और तूफान छोड़े जा रहा हो।'

मृणालिनी चाहती कि अजित उसके एकान्तमें उसे 'साम्राज्ञी' कह कर सम्बोधित न करे। वह तो मृणालिनीका महत्वपूर्ण पद है, किन्तु वह साम्राज्ञीके अतिरिक्त व्यक्ति भी है।

अजित समझता कि राजनैतिक क्षेत्रका वह भी सिपाही है। प्रजाका विश्वास-पात्र और श्रद्धाका पात्र भी। इसीलिए साम्राज्ञी उसे [illegible] महत्वों

एवं शासन-सम्बन्धी सुझावोंको महत्व देती है। उसके व्यक्तित्व का आदर करती है। जहाँ जनता द्वारा अजितको मान-सम्मान प्राप्त होता है, वहाँ साम्राज्ञी अपना महा-आमात्य समझकर, गौरवका अनुभव करती है। किन्तु छुईमुई सा जो रोग बढ़ता जा रहा है उसके सम्बन्धमें अजित अनजान नहीं, किन्तु स्वयं विकारहीन होनेके कारण वह असंयमिल नहीं हो सकता और राष्ट्रीय सेवाका इतना विशाल कार्य उसके सामने है कि वह बिना एक भी क्षण खोये जीवनको महान् उद्देश्योंके लिए बलिदान करना चाहता है।

विचक्षणकी मृत्युके पश्चात् राजमाता—साम्राज्ञीकी माँ बहुत शान्त जीवन व्यतीत करने लगी थीं। सम्राटकी मृत्यु प्रौढ़ावस्थामें हुई थी। वृद्धावस्थाकी ओर पाँव बढ़ानेके पूर्व ही सम्राट अकाल-कालके ग्रास बने थे। किन्तु फिर भी साम्राज्ञी इतने ही जीवन कालमें ऐहिक सुखोंसे विरक्त हो चुकी थीं। जीवन भर पति-परायण स्त्री होनेके नाते कभी कभी उनके हृदयमें मृणालिनीकी चिन्ता विशेष उत्पन्न हो जाती थी। वह चाहती थीं कि उनकी एकमात्र लाड़िली सन्तान मृणालिनी साम्राज्य सेवा करते हुए भी पति वञ्चित न रहतीं। जब कभी वह अपनी चिन्ताका बोझ मृणालिनीपर डालना चाहतीं, मृणालिनी युक्तिसे इस प्रसंगको टाल देती थी। कभी कभी राजमाताको मृणालिनीका यह व्यवहार अखर जाता था और वे स्पष्ट कह देतीं कि पति-हीना स्त्रीका जीवन मरुकी तरह शून्य रहता है।

मृणालिनीका स्वभाव मातासे उत्तर-प्रयुत्तर लेनेवाला न था। वह सीधे माताकी आज्ञापालन करती थी। उसका विचार था कि साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित होकर राष्ट्रसेवाका कार्य करना है किन्तु साथ ही वह विधवा माताकी इकलौती कन्या है और माताके सुखी एवं दुखी बनानेका दायित्व [illegible]पर है। इसी कारणसे अपने विवाहकी चर्चा होनेपर वह [illegible] वैवाहिक जीवन व्यतीत करते ही पतिसेवा मुख्य कर्तव्य बन

जायगा और राष्ट्रीय सेवाका दायित्व गौण हो जायगा अतएव अभी आवश्यकता है राष्ट्रीय जीवनके आर्थिक स्तम्भको ऊँचा बनाने एवं अकाल भुखमरी बेरोजगारी, अशिक्षाको समूल विनाश करते।

एक दिनकी बात। अजित राजमहलोंमें आया। राज-काजके सम्बन्ध में मृणालिनीसे आदेश एवं परामर्श लेना था। मृणालिनी उस दिन अस्वस्थ्य थी। अजितकी भेंट मृणालिनीसे पूर्व राजमातासे हो गयी। अभिवादन एवं कुशल प्रश्नके पश्चात् राजमाताको सम्बोधित करते हुए अजित बोला—'मैं देखता हूँ कि राजमाता इन दिनों किसी विशेष चिन्तासे बोझिल हैं।'

राजमाता—अवश्य महा-आमात्य! मेरी चिन्ता बड़ी है और उससे निश्चिन्त होनेका कोई मार्ग नहीं सूझ पड़ता।

अजित—क्या मैं राजमाताकी चिन्ताको जान सकता हूँ।

'हाँ हाँ महा-आमात्य! मेरी चिन्ता कोई ऐसी गोपनीय नहीं है। प्रत्येक व्यक्तिसे मैं कह भी कैसे सकती हूँ किन्तु तुमसे तो कोई छिपा नहीं है। तुम तो महा-आमात्यके अतिरिक्त मेरी दृष्टिमें मेरे पुत्र तुल्य हो। अजित! आज तो राजवंश तुम्हारा कृतज्ञ है। तुमने इस युगमें भी जब साम्राज्योंका ध्वंस होना प्रारम्भ हो चुका है और सदियोंके पुराने राजवंश अपने परम्परागत अधिकारोंसे च्युत किये जा चुके हैं, तब भी मृणालिनीको साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित करानेवाले तुम हो। हम सब तुम्हारे ऋणसे मुक्त नहीं है।

बात काटते हुए अजितने कहा—'राजमाताके मुखसे मेरी प्रशंसाके गीत नहीं अच्छे लगते। मैंने कुछ किया वह जनताकी सद्भावनाके वशीभूत होकर किया। स्वर्गीय सम्राटके शासनकालमें प्रजाको कष्ट पहुँचानेवाला स्वयं विचक्षण था, सम्राट नहीं। इसी कारण जब सर्वशक्ति सम्पन्न जनताका शासन प्रारम्भ हुआ, तब जनता [illegible] सम्राटकी व्यक्तिगत सेवाओंको भुलाया नहीं। सम्राटका व्यक्तिगत [illegible]

अमूल्य था कि उसकी सहायतासे कोटि कोटि जनताके प्राणोंको मृत्युके पाशसे छुड़ानेमें अभूतपूर्व समफलता मिली और आज भी स्वराष्ट्र निर्माण सम्बन्धी जो योजनाएँ साम्राज्ञी चला रहीं हैं उनकीआर्थिक पृष्ठभूमि सम्राटकी वैभाविक सम्पत्ति है। जनता स्वयंउनकी कृतज्ञ है। इसीलिए वह साम्राज्ञीकी पूर्ण समर्थक है।'

राजमाता बोलीं—अजित ! इतना सब कुछ होते हुए भी प्रजातंत्रके युगमें सम्राटके प्रति जनताका आभारी बनना केवल तुम्हारी वजहसे है। खैर, इस बातको जाने दो। मेरी चिन्ताका मुख्य विषय तो मृणालिनी है। वह अबतक अविवाहित है। मैंने जब कभी इस सम्बन्धमें उसकी राय जाननी चाही, तभी उसने प्रसंग बदलकर दूसरी बातें छेड़ दीं। वास्तवमें मैं उसके हृदयको न टटोल सकी।'

अजित जो स्वयं इस सम्बन्धमें कभी-कभी सोचा करता था, राज-मातासे बोला—'क्या आपने वंश परम्पराके अनुकूल अबतक किसी राजकुमारको चुना है?'

'मेरी दृष्टिमें तो किसी राजवंशमें मृणालिनीके योग्य वर नहीं मिल रहे हैं। मृणालिनीकी शिक्षा-दीक्षा सम्राटके जीवनकालमें इस प्रकार हुई थी, जो बिरले राजवंशोंमें दी जाती है। जहाँ उसे उच्च कोटिके साहित्य, कला, दर्शन, संगीत, खेतीबाड़ी, राजशासन, एवं इतिहास-भूगोलकी शिक्षा दी गयी है वहीं दूसरी ओर सैन्य-संचालन, युद्ध, निशानेबाजी, तैराकी, घोड़सवारी, नीति, चित्रकला एवं पाक-विज्ञानकी भी उच्च कोटिकी दक्षता प्राप्त है। विलासी राजवंशोंमें सर्वगुण सम्पन्न एक भी राजकुमार नहीं मिल रहे हैं। इसी हेतु मृणालिनी अयोग्य राज-कुमारोंकी ओर दृष्टिपात भी नहीं करती। सम्राटने अपने जीवन-कालमें सूर्यवंशीय [illegible] कुमारोंमेंसे दो एकको चुना भी था, किन्तु जब मृणालिनीसे उनकी [illegible] करायी गई और साधारणतः साहित्य एवं दर्शनकी चर्चा

प्रारम्भ हुई तो मृणालिनी उनका ज्ञान देखकर न केवल खीझ उठी वरन् दुबारा उनसे भेंट करना भी अस्वीकारकर दिया ।'

'तब तो सम्राज्ञीके योग्यपात्र निकाल खोजना अवश्य ही कठिनतर कार्य है । मैं तो सारे देशमें घूमता हूँ और राजवंशोंके उत्तराधिकारियोंसे मिलता हूँ, बातें करता हूँ । उनकी विशेष योग्यताओंसे भी परिचित हूँ किन्तु एक साथ साम्राज्ञीके व्यक्तित्वमें जिन गुणोंका समावेश है, वैसी योग्यतावाले, सचमुच, एक भी राजकुमार नहीं है । दूसरे साम्राज्ञी समस्त देशकी प्रमुख शासनाधिकारिणी हैं जब कि राजकुमारोंका शासन क्षेत्र सौवांश भी नहीं ।'

'यही तो विकट-गुत्थी है, अजित ! जिसे मैं नहीं सुलझा पा रही हूँ । तुमसे इस प्रसंगकी यहाँ चर्चा करनेका विशेष कारण, यह भी था कि सम्पूर्ण साम्राज्यमें तुम्हारी गति होनेके कारण, संभव है, किसी ऐसे राजकुमारकी जानकारी होती, जो विद्या, बुद्धि एवं बलमें राजकुमारीकी समानता तो कर पाता....'

बात समाप्त भी न हो पायी थी कि मृणालिनी अपने महा-आमात्यके आनेकी सूचना पाकर स्वयं माताके कमरेसे आ पहुँची और बातोंका जो सिलसिला अजितके साथ चल रहा था उसकी साधारणसी झंकार उसके कानोंमें भी जा पहुँची । उसने चुटकी लेते हुए माता से कहा—'क्या आपकी चिन्ताका निवारण महा-आमात्यकर सकेंगे ?'

बदलेमें माताने मुसकुरा दिया और बेटीको प्रसन्न चित्त देखकर कह उठीं—'मृणालिनी ! यदि तू चाहे तो मेरी चिन्ता शीघ्र ही दूर हो सकती है ।'

'मैं क्यों न चाहूँ माँ ?' बाल-सुलभ क्रीड़ासे मुस्कुराकर मृणालिनी बोली—'किन्तु क्या अजितने भी कोई सुझाव पेश किया ?'

'अजित तो अभी पूरी बात भी न सुन पाये थे कि तू [illegible] गयी ।'

'तो मैं जाऊँ ?'

'नहीं, अब जानेकी क्या आवश्यकता ? यदि मैं छिपाकर कोई बात कहना चाहती तब न ! जब तू जानती है कि मैं अजितसे क्या कह रही थी, तब तुझसे छिपाना ही व्यर्थ है। किन्तु मृणालिनी ! अब मेरे जीवनमें तेरी चिन्ताके अतिरिक्त अन्य कोई चिन्ता हो भी क्या सकती है ! मैं इन आँखोंसे कङ्कनयुक्त तेरे पीले हाथ देखना चाहती हूँ। बोल ! मेरी आशा पूरी करेगी ?

अब तक जो मृणालिनी बाल सुलभ चपलतासे अठखेलियाँ कर रही थी, माताके प्रश्नसे गम्भीर हो गयी। माँने उसके मुँहके परिवर्तित होने वाले भाव देखे। मृणालिनी बोली—'माँ तू कहती है कि मेरे व्याहने-पर तेरी चिन्ता दूर हो सकती है किन्तु मैंने जिसे चुना है, सम्भव है, वह मुझे न चुने।

राजमाता एवं अजित दोनों विस्फारित नेत्रोंसे मृणालिनीके मुखकी ओर देखने लगे। वे दोनों आश्चर्यसे मृणालितीको देख रहे थे और मृणा-लिनी उन दोनोंके मुखपर उभरनेवाले भावों को !

क्षणिक मौनके पश्चात् राजमाता बोलीं—'तो क्या सचमुच तूने अपने योग्य साथीको चुन लिया ?'

'हाँ, चुन लिया है, माँ !

'और वह ऐसा भी है कि तुझसी रमणीको संवरण करनेसे अस्वीकार कर दे।'

'हाँ, बहुत सम्भव है, अस्वीकार भी कर सकता है। आज तक मैंने स्वयं सैकड़ों राजपुरुषोंको अपने उत्तरसे निराश किया है !'

'किन्तु कोई भी पुरुष साम्राज्ञी जैसी रमणीको पाकर वैवाहिक जीवनका अपमान नहीं कर सकता।'—बीच ही में बात काटकर अजित-[illegible]

[illegible] तो मेरा भी विश्वास है'—राजमाता बोलीं।

साम्राज्ञी पुनः पूर्ववत् सहज भावसे मुस्कुराने लगीं। अजित बोला—'राजमाता! अब तो आप अपनी चिन्ता दूर हुई समझिए।'

'और क्या, महा-आमात्य!,—खिलखिलाकर मृणालिनी बोल उठी—

'मेरा विवाह तो जैसे हो चुका! क्यों न!'

'मेरी समझमें तो यही आता है!'

अबकी बार मृणालिनी और जोरसे हँसने लगी। राजमाता अपनी एकमात्र सन्तानको इस प्रकार विनोद मग्न देखकर स्वयं भी हँसने लगीं। अजितके मुखपर हलकी मुस्कान और अरुणिमा दौड़ रही थी।

साम्राज्ञी कहने लगी—'महा-आमात्य! तब तो आप जाइए और दीन दुःखियोंको अन्न-वस्त्र बँटवाइये क्योंकि आपकी साम्राज्ञी वैवाहिक बन्धनमें बँधने जा रही है। ऐसे सुखके क्षण तो सदैव प्राप्त नहीं होते।'

अजितने भी उसी उल्लासमें कहा—'निःसन्देह! मैं तो खुले हाथ खजाना खुलवा दूँगा! और स्वयं अपने लिए भी कोई बड़ा उपहार माँगूँगा!'

'तो ठीक है, आप भी माताजीसे अपना उपहार लेकर जाइए!'

कुछ क्षणोंतक तीनों काल्पनिक विनोदके सुखमें हँसते रहे। अन्तमें अजितने कहा—'मुझे साम्राज्ञीने क्यों बुलाया था?''

'विवाहका प्रबन्ध करनेके लिए!'—पुनः ठहाका मारकर मृणालिनी हँसने लगी। आमोद-प्रमोदमें पुनः कुछ समय व्यतीत होता रहा।

राजमाता बोलीं—'अजित! इसी प्रकार मृणालिनी बातोंको उड़ा दिया करती है। सम्राटका स्वर्गवास हुए चौथा वर्ष बीत रहा है और मृणालिनीको जैसे कोई चिन्ता ही नहीं। अरे, जिसके घर [illegible] न हो उसकी कन्या कुमारी रहे, तो कुछ बात समझमें आती है किन्तु [illegible]

जैसे वैभवका उपभोग करनेवाले सम्राटकी कन्याका अविवाहित रहना कभी कभी कलङ्ककी बात हो जाया करती है।'

हँसीमें ही माताके मुखसे कलङ्क शब्द सुनकर मृणालिनी कुछ अनमनी सी हो गयी किन्तु आन्तरिक भावोंको छिपाते हुए बोली—'माँ! सम्राटकी कन्याका अविवाहित रहना कलंककी बात न होकर यशकी बात है क्योंकि सम्राटकी कन्याका, सांसारिक भोगोंमें विमुख होकर रहना, उसके त्यागमय जीवनका प्रमाण है, उसके कर्त्तव्य-परायण होनेकी साक्षी।

राजमाता बेटीकी वाक् चातुरीसे प्रभावित होते हुए बोलीं—

'तो तूने भी त्याग तपस्या करनेकी ठानी है क्या?'

'त्याग-तपस्या तो नहीं किन्तु क्या वैवाहिक जीवन न होनेपर श्रेष्ठ कर्त्तव्योंसे विमुख हो जाना चाहिए? हमारे प्राचीन साहित्य एवं इतिहासके पन्ने ऐसी आदर्श कथाओंसे भरे पड़े हैं, जब अपने कर्त्तव्योंको पालन करते समय वैवाहिक जीवनको ठुकरा दिया गया है। पिताजीकी इच्छाको पूर्ण करनेके लिए भीष्मने ही विवाह न करनेकी प्रतिज्ञा ठान ली थी इसी प्रकार भीष्मके विमुख होनेपर अम्बालिका तपस्या करने चली गयी थी।'

'किन्तु इन आदर्शोंको यदि तू ग्रहण करेगी, तो मुझे महान् दुःख होगा!

'मैं कब कहती हूँ कि मुझे विवाहसे चिढ़ है। हाँ, तूने महाआमात्यको वर खोजनेके आदेश दिये हैं। अतः मैंने भी आमोद-विनोद द्वारा अपना जी बहला लिया।

बात जहाँकी तहाँ रह गयी किन्तु अजितके मनमें यह बात घर कर गयी कि [illegible]जीने किसी पुरुष-विशेषको अपने हृदयमें स्थान दे दिया है। [illegible] भी तो वह भाग्यशाली कौन है।

[illegible]जी अजितको साथ लेकर उस कमरेमें जा पहुँची, जहाँ बैठकर

वह शासन सम्बन्धी कार्य करती थी। दोनों कमरेमें जाकर कुछ समयतक आवश्यक राजकाज सम्बन्धी कागजोंपर एक दूसरेसे परामर्श करते रहे। अन्तमें पश्चिमी साम्राज्यके प्रमुख शासकके पत्रपर मृणालिनी और अजित बातें करने लगे। पत्र लिखनेवाला अजितका पुराना राजनीतिक साथी और वर्त्तमान समयमें पश्चिमी साम्राज्यका प्रमुख था। उसने साम्राज्ञी एवं महा-आमात्यका ध्यान उस संकटपूर्ण घड़ीकी ओर खींचा था, जब कि विदेशी आक्रामक, समुद्र मार्ग होकर साम्राज्य विस्तृत करनेकी आकांक्षासे एक प्रबल आक्रमण करेंगे, जिन्हें कि स्वदेशमें बसनेवाले पञ्चमाङ्गी अपनी सत्ताके विनाश होनेपर, आमन्त्रण देकर बुलानेका साजिश रच चुके हैं।'

पश्चिमी साम्राज्यके 'प्रमुख'ने यह भी प्रकट किया था कि 'स्वदेशमें बसनेवाले ऐसे पुराने शासक, जो पूर्ण प्रजातन्त्र एवं पञ्चायती शासन प्रबन्धके प्रति अनुदार हैं और जिनका विश्वास है कि बिना सबल एकतन्त्रके राष्ट्रका शासन शासन क्षीण हो जायगा और जो एकतन्त्रकी स्थापनाके लिए ही विदेशी आक्रामकोंकी सहायता चाहते हैं, उनके साथ राष्ट्रव्यापी किसी निश्चित सुस्थिरनीतिकी आवश्यकता है। अन्यथा व शिशु-प्रजातन्त्रकी कमर तोड़ने एवं गला घोंटनेमें कोई कसर न रक्खेंगे और हमारा देश, जो शान्तिका प्रथम गान भी समाप्त नहीं कर पाया है, कुसमय ही विदेशी सत्ता-लोलुपोंकी चंगुलमें फँस जायगा।'

इस पर अजितने भी कहा कि विदेशी सत्ताके ठीकेदार भारत जैसे राजतन्त्रवादी देशको पिछड़ा हुआ बताते हैं। जो भी ही भारतको लूटकर मालोमाल हो जाता है और जिसे मानवताके नाते हितू मानकर भारतीयगण अपने देशका द्वार उनके आतिथ्यके लिए खोल देते हैं, वे ही लोग भारतियोंको पिछड़ा बताते हैं। वे सारे संसारमें हमारे अशिक्षित, गरीब एवं असभ्य होनेका प्रचार करते हैं और बादमें हमारे सुधारक एवं

मार्ग प्रदर्शक बनकर चुपकेसे देशमें घुस आते हैं। बाजारोंपर एकाधिकार स्थापितकर राष्ट्रीय व्यापारको पंगु बना देते हैं और अकाल आदि दोष बताकर, अपने देशका अन्न बेचनेके नाते सारे संसारमें सहायता करनेकी डींग मारते हैं। ऐसे ही विदेशियों-द्वारा राष्ट्रीय हितोंको खतरा है। जहाँ आज हम गृह-युद्धमें फँसते जा रहे हैं, वहीं हमपर विदेशी अधिकारोंका आर्थिक, राजनैतिक एवं वैदेशिक दबाव भी बढ़ता जा रहा है। इस हेतु साम्राज्ञी जहाँ आपने देशी सामन्तवादको पराजित किया है, वहीं विदेशी सामन्तवाद पूँजीवादका चोगा ओढ़कर हमारे देशको आर्थिक फौलादी पञ्जेमें कसनेकी जी तोड़ प्रयत्नमें है।''

''ऐसी परिस्थितिमें हमें क्या करना चाहिए, महा-आमात्य। हमें राष्ट्रीय एकताको सुदृढ़ करना चाहिए।''

अजितने कहा—''वर्गवाद सारे संसारमें घृणा एवं प्रतिशोधकी आग फैलाता जा रहा है और विचारकगण अहिंसक अराजकतावाद''के नामपर कहीं भी सरकारोंके अस्तित्वतककी कल्पना नहीं करते। किन्तु इस आदर्शवादके बहुत उच्च पहलूको बहुत थोड़ेसे समझ पावेंगे और इसका स्वाभाविक परिणाम होगा ''हिंसक अराजकतावाद''। हमें इसीको रोकना होगा और राष्ट्रीय इकाईको सुदृढ़ बनाकर रचना-द्वारा विदेशी आर्थिक पूँजीका बहिष्कार करना पड़ेगा। राष्ट्रीय जीवनकी आवश्यकताएँ, राष्ट्रीय श्रम-द्वारा उत्पादनको बढ़ाकर पूरी करनी होंगी। काहिल अपाहिजों तकको काम मिलेगा। रचना-द्वारा, बेरोजगारी, विदेशोंकी सहायता, एवं राष्ट्रीय फूट एवं वर्गवादके प्रतिशोधात्मक विचार क्षीण होंगे।'

मृणालिनी महा-आमात्यकी बातोंको सुनकर बोल उठी—'अगली लोकसभामें इसी आशयके प्रस्ताव आने चाहिए। मैं सरकारकी ओरसे लोकसभाकी अयपर स्वीकृति प्रदान करा दूँगी।'

'यह तो सब कुछ होता रहेगा किन्तु पश्चिमी साम्राज्यके शासकको क्या प्रत्युत्तर दिया जाय?'

'केवल इतना ही कि आपके सुझावोंपर केन्द्रीय सरकार वैदेशिक सहायता आदि पर विस्तृत विचारकर निश्चित करेगी और निर्णयकी सूचना शीघ्र ही आपतक भेजी जावेगी।'

मृणालिनीकी सहमति प्राप्तकर अजित चलनेको उद्यत हो, खड़ा हो गया साथ ही उसने यह भी 'कहा कि पश्चिमी साम्राज्यका समुद्री-तट विदेशियोंके लिये फाटक तुल्य है इसलिए मुझे वहाँ जाकर समुद्री-तटको सुरक्षित रखनेका प्रबन्ध करना चाहिए। पश्चिमी साम्राज्यके प्रमुखका आमंत्रण भी है।'

'तो आप लम्बे समयके लिए जाना चाहते हैं ?'

'अवश्य ही !'

'यदि मैं भी चलूँ तो क्या कोई आपत्ति है।'

'आपत्ति कैसी साम्राज्ञी ! मैं केवल मार्ग कष्ट सोचकर ही चलनेका आग्रह न कर सका। किन्तु यदि आप भी पधारें तो साम्राज्यकी पश्चिमी प्रजा अपनी नयी साम्राज्ञीका अभिनन्दन कर कृतकृत्य हो जायँगी।'

मृणालिनी समुद्री-तटीय यात्राके सुखकी कल्पनाकर महा-आमात्य के साथ ही जानेको उद्यत हो गयी।

दूसरे ही दिन महा-आमात्य एवं साम्राज्ञी राजधानीका शासकीय प्रबन्धकर, चल पड़े।

मृणालिनीके जीवनमें यह पहला समय था, जब कि वह प्रजा रञ्जन करनेके बहाने, दक्षिणी साम्राज्यके राजधानीकी ओर चल पड़ी। साथमें दास-दासी, राज कर्मचारी, महा-आमात्य एवं दक्षिणी साम्राज्य-के कुछ प्रतिनिधि थे जो एक प्रकारसे साम्राज्ञीको आमन्त्रण देकर बुलाने आये थे।

मृणालिनीके विचारसे यह यात्रा बड़ी सुखद थी। भाँति-भाँतिका जल-वायु और उसका परिवर्त्तन, देशकी शस्य-श्यामला भूमिके पवित्र दर्शन,

भिन्न भाषा-भाषी लोगोंसे बातें करनेका आनन्द, प्रकृतिस्थ स्थानोंका एकांकी सुख आदि अनेक आकर्षणकी बातें थीं, जिनपर साम्राज्ञी सोच-विचारकर राजधानी छोड़ रही थी। अजितकी देख-रेखमें यात्रा करनेकी राजमाता-द्वारा भी स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी।

अधिकसे अधिक मृणालिनीको इस बातका भी सुख हो रहा था कि जबसे उसने शासन-सत्ता सम्हाली है, वह राजधानी छोड़कर एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त न जा सकी थी। दक्षिणी साम्राज्य गयी भी थी, उस समय जब विचक्षणका भूत चैनसे नहीं बैठने देता था, किन्तु इस बार उसका महा-आमात्य षड्यन्त्रकारी न होकर, उसके साम्राज्य एवं जनताका सेवक था।

स्थान-स्थानपर मृणालिनीको देशकी जनता स्वागत एवं अभिनन्दन गानोंसे श्रद्धा एवं आदर-प्रदानकर रही थी। साम्राज्ञी उनके पास जाकर, दैनिक जीवनके सुख-दुःखकी चर्चा करती थी और जहाँ कहीं प्रजाको किञ्चित्-मात्र दुखी पाती, वहीं उसके निवारणकी समुचित व्यवस्था भी करती जाती थी।

धीरे-धीरे मार्गकी अनेक जटिलताओंको सहज बनाते हुए, पश्चिमी साम्राज्यकी समुद्र तट-स्थित राजधानीमें मृणालिनीने प्रवेश किया। वहाँके शासकने मृणालिनीके प्रथम भेंटके समय प्रान्तकी प्रमुख जनता को राजधानीमें ही बुला भेजा था। सबने अन्तर्हृदय खोलकर महान् साम्राज्ञीका अभिनन्दन किया और आतिथ्यपूर्वक साम्राज्ञीकी सेवाएँ होने लगीं।

अजितके साथ ही रहनेके कारण, शासन-सम्बन्धी पहेलियोंसे वह निश्चिन्त थी। प्रातःकाल अश्वारोही बनकर साम्राज्ञी घूमने जाया करने लगी। वह बिना अपनेको साम्राज्ञी सूचित किये ही सर्वसाधारणके बीच जा पहुँचती और उनसे उनके दैनिक जीवनकी चर्चासे लेकर सुख-दुःख,

उन्नति-पतन, सम्पत्ति-विपत्ति, प्रजातन्त्र एवं राजतन्त्र आदिकी चर्चाएँ करने लग जाती और कितनेको अमूल्य सम्मत्ति प्रदानकर यशकी भागिनी बना करती थी।

अजित तो अधिकतर शासन-यन्त्रके प्रति उत्तरदायी शासकों एवं कर्मचारियोंसे उलझा रहता। शासनकी गति-विधियों और सर्वसाधारणकी सम्मतियों-द्वारा वह अपनी अलग राय स्थापित करता था और तब कहीं मृणालिनीको तर्कों-द्वारा सन्तुष्टकर अन्तिम स्वीकृति प्राप्त करता था। उसको अधिकतर ऐसे ही कामोंसे अवकाश न मिलता था।

एक दिन दोनों साम्राज्ञी एवं महा-आमात्य अश्वारोही बनकर एकान्तकी ओर चल पड़े। उनके मन्तव्यसे ज्ञात होता था जैसे वे अहेरी हों और आखेटकी तलाशमें निकले हों। जाते जाते वे घनी बस्तीसे बहुत दूर आगे निकल गये। एक स्थानपर रमणीलता-वितानों-द्वारा कुसुमित कुञ्ज वन था। मृणालिनी प्रकृतिकी अपार शोभापर मुग्ध होकर अश्वसे उतर पड़ी और अजितके साथ क्षणभर बैठकर कुछ बातें करने लग गयी।

उत्तर-प्रत्युत्तर देते समय अजित मृणालिनीको साम्राज्ञी कहकर ही सम्बोधित किया करता था। आज प्रथम बार एकान्तमें—जब कि साम्राज्ञी और महा-आमात्यके सामने निर्जन प्रकृतिका भाँति-भाँतिके लता-वितानों एवं हरे किसलय वाले वृक्षोंका अंचल-सा फैला हुआ था, मृणालिनीने शब्दपर आपत्ति प्रकट की।

मृणालिनीने कहा—अजित! 'साम्राज्ञी' सम्बोधन-द्वारा प्रतिक्षण महानताका इतना भारी बोझ लद जाता है कि साधारण प्राणियोंकी भाँति, वैयक्तिक सुखों एवं व्यवहारोंका, मेरे सामने कोई मूल्य नहीं रह जाता किन्तु तुम्हीं सोचो कि सम्राटकी पुत्रीके रूपमें जन्म लेकर मैंने कोई अपराध किया है कि मुक्त रूपसे मुझसे कोई स्नेह एवं प्रेमका आदान-प्रदान नहीं कर पाता। प्रतिक्षण मेरे सामने बनावटी व्यवहारोंका

प्रदर्शन होता है और मुझे ऐसे पदकी महत्ताका निर्वाह एक नपे तुले व्यवहारकी सीमाके भीतर रहकर करना पड़ता है। जीवनका मुक्त आनन्द मैं नहीं भोग पाती। किसीसे अपने सुख-दुःखकी चर्चा भी नहीं कर सकती।'

झिझक छोड़ते हुए अजित बोला—तो क्या मैं 'मृणालिनी' कहकर गुरुतर अपराधका भागी बना करूँ?'

'काश! तुम मुझे प्रत्येक बार 'मृणालिनी' कहकर ही पुकारा करते और मैं तुम्हें अभिन्न हृदयसे अपना जान पाती!'

मृणालिनीके कहनेका ढंग कुछ ऐसा था कि अजितको ज्ञात हुआ जैसे मृणालिनी जीवनके व्यवहारोंके साथ बनावटी आदर एवं श्रद्धाकी भूखी नहीं, अपितु वह एकान्तमें मुक्त व्यवहारोंकी याचना करती है और सगे स्वजनों जैसे प्रेममय भावोंमें सम्बोधन चाहती है।

प्रकट रूपमें अजित बोला—'पदकी महत्ताका यदि हटते ही मृणालिनीके रूपमें साम्राज्ञीको साधारण मनुष्यों जैसे व्यवहारको स्वेच्छासे स्वीकार करना पड़ेगा और इस तरह परिणाम होगा व्यवहारकी बराबरी।'

'अच्छी बात है। ऐसा करते समय जो भी त्रुटियाँ बन पड़ेंगी, उसका दायित्व अजितपर न पड़कर स्वयं मृणालिनीपर पड़ेगा।'

अजित और मृणालिनी दोनों बातें करते हुए सामने वृक्षपर पक्षियोंके एक जोड़ेको देख रहे थे। वे दोनों वनकी मलयसनी सुरभित वायुके झोंके खाकर, मुक्तवातावरणमें, एकान्त सहवासका सुख भोग रहे थे। प्रकृतिका सारा शृङ्गार मादक था। एक ओर शीतलमन्द-सुगन्ध-युक्त वायु लहरियाँ, हरेभरे वृक्षों, लताओं एवं वन-उपवनमें मुक्त-मुसकान करनेवाले खिले कुसुमदलोंका कोमल-स्पर्शकर, अठखेलियाँकर रही थीं, तो दूसरी ओर फलोंके बोझसे झुकी हुई वृक्षोंकी शाखाएँ मानों प्रियतम वसन्तकी उत्कण्ठामें वियोग-वेदनासे व्यथित होकर काँप

रही थीं। पावसी-मेघ-मालाएँ दिशाओंको स्पर्श करती हुई आँखमिचौनी खेल रही थीं। विकसित-शत-कमलदल प्रियतमकी प्रतीक्षामें व्यग्र हो रहे थे। अभिसारिका नारीकी भाँति, मादापक्षी लज्जाके अवगुन्ठनमें मौन रहकर प्रियतम-पुरुषसे मानों प्रेमकी भीख याचनाकर रही थीं किन्तु पुरुषपक्षी हँस प्रतीक्षामें चुँच-निनिमेष नेत्रोंसे प्रियतमको निरख रहा था कि कब प्रियतमाके संयमका बाँध टूटे और कब वे दोनों प्रेमालिङ्गनमें आबद्ध हो जाँय।

मृणालिनीकी दृष्टि निरन्तर उन्हीं दोनों एकान्त प्रेमी-पक्षियोपर लगी हुई थी, जिन्हें, वह अपना गुरु मानकर, मानों भावी-जीवनके प्रेमाभिनयका पाठ सीखने चली थी। अजित भी मृणालिनीकी दृष्टिके सहारे उन युगल-प्रेमियोंकी एकान्त विहार-लीलाको, उत्सुक दृष्टिसे देखनेका प्रयासकर रहा था, किन्तु मृणालिनीके मनोभावोंको जानते हुए भी अजनान सा बना था।

मादा पक्षीने गर्दन मरोड़कर, अलसभावसे, ऐसी अँगड़ाईली कि पुरुष-पक्षी मानों उसके प्रेम संकेतको समझकर उससे सटा हुआ बैठ गया। मृणालिनीने संकेतद्वारा युगल पक्षियोंके प्रेमालाप एवं प्रेमाभिनयको अजितसे पूछा।

अजितने कहा—'वे दोनों आपके मनोबिनोदमें तल्लीन हैं।'

इसी क्षण पुरुष-पक्षी दूसरी ओर देखने लगा। मादा उड़कर उसीके सामने दूसरी शाखामें जा बैठी, जहाँ अजित और मृणालिनीकी दृष्टि नहीं पहुँच रही थी।

'मृणालिनीने कहा—मादा-पक्षी, क्यों उड़कर दूर जा बैठी?'

इसी समय पुरुष पक्षी भी उड़कर पुनः अपनी प्रियतमाके बगलमें जा बैठा। अजित ने कहा—'वे दोनों इसलिए हमलोगोंकी दृष्टिसे ओझल हो गये हैं ताकि उनके एकान्त प्रेममें हमलोग बाधा न पहुँचायें।'

'बाधा कैसे पहुँचा सकते थे?'

'उनपर प्रहार करके ? उन्हें सन्देह है कि हम दोनों शिकारी हैं और सचमुच बात सही भी है ।'

'क्या उन्हें ज्ञान है कि हमलोग हिंसक हैं ?'

'अवश्य, यदि ऐसा न भी होता तो भी वे अपने जीवनके गोपनीय प्रेम-रहस्यको अन्यपर प्रकट नहीं करना चाहते ।'

अजितने इस बातको मृणालिनीपर टकटकी लगाये हुए कहा—जाने क्यों ! मृणालिनी लज्जित हो गयी और उसके मुखमण्डलपर हलकी अरुणिमा दौड़ गयी ।

अजितने कहा—'मृणालिनी ! सचमुच हमलोग जीवनके स्वास्तविक प्रेम तथ्योंसे कोसों दूर हैं । प्रकृतिने जितनी मुक्त स्वतन्त्रता आकाशमें, वायुके साथ उड़नेवाले इन परिन्दोंको दे रक्खी है, मानव उतना ही बन्धन युक्त है ।'

'प्रेमके नामपर मानव-प्राणी अभागा है । उसे सब कुछ देकर भी प्रकृति और पुरुषने अपने मायविक बन्धनमें इस प्रकार जकड़ रक्खा है कि वह छटपटाता है । आहोंकी उच्छ्वासोंमें साँस लेता है, दर्शनसे तृप्त होनेवाले नेत्रोंमें करुणाकी बूँदे छलछलाकर अवशकी भाँति रोता है, किन्तु मुक्त होकर प्यार नहीं कर सकता । प्रेम-गोपनीय बनकर, जीवनमें छलनाकी भाँति दुःखदायी बन जाता है । अभागा-मानव प्रेमकी शीतल किरणों-द्वारा अपने जीवनको लहलहाते पौधोंकी भाँति सुखकर नहीं बना पाता, वरन् प्रेम एक अभिशाप बनकर जीवनको मरुकी भाँति ज्वलित, उतप्त एवं हाहाकारमय बना देता है । अजित ! क्या तुम बता सकते हो, ऐसा होता क्यों है ?'

'मैं क्या जानूँ मृणालिनी, प्रेमकी विडम्बनामय असङ्गतियोंको ! मेरे लिए तो आँसुओंकी लड़ी पिरोना भाग्यहीनोंका प्रतीक है ! मैंने आजतक किसीको स्नेहकी दृष्टिसे देखनेका दुस्साहस तक नहीं किया है ?'

'क्यों अजित ! ऐसी क्या बात थी ?'

'बात तो कुछ विशेष न थी किन्तु मेरा जन्म ही उस वर्गमें हुआ है, जिन्हें जीवन भर अभावकी गोदमें रहना पड़ता है। जिनका धन ही सम्पन्नोंकी घृणा है, जिनका अस्तित्व ही दासत्वकी निर्दय श्रृङ्खलामें आबद्ध रहता है। जिन्हें स्वच्छन्द वायुमें जीवित रहनेकी प्रेरणा नहीं प्राप्त होती, जो दूसरोंकी सेवाके लिये जीते और मरते हैं! भला प्रेमकी वरदानमयी सौगात, ऐसे प्राणियोंके भाग्य-चक्रके साथ कब बँधती है!'

'सदैव ही जिन्हें समृद्ध लोग तिरस्कृत दृष्टिसे अपमानित करते हैं, उनके लिए करुणामय भगवानकी प्रेम-धारा निरन्तर बहा करती है। वे उसीमें गोते लगाकर जीवनमें कृतार्थ हो जाते हैं। जिन्हें वास्तविक प्रेमकी झाँकी दर्शन करनेको मिली है, उन्होंने दुखी-दलितोंकी करुणामें लहराता हुआ प्रेमका अनन्तसागर पाया है। जो सांसारिक दृष्टिमें महान् समृद्ध एवं यशस्वी बनकर अवतरित हुए, वे अपने अहंकी सरितामें ही डूबे पाये गये। उन्हें करुणा-सागरकी प्रेममयी करुणाकी अजस्र धाराके दर्शन न हो सके। वे अपने आप में ही डूबे मिले। उनके लिए प्रेम स्वप्न-व्यङ्ग-सा सिद्ध हुआ।'

'तो क्या प्रेमकी विशद धारामें, भाग्य-हीनों भरको ही मज्जन-पान करनेका अवकाश मिलता है। यदि ऐसा हो तब तो मुझे भी आशा करनी चाहिए'—व्यङ्गात्मक भावनाके समीक्षणके साथ अजित बोला।

प्रेम जैसे महान-तत्त्वकी पारंगतसी मृणालिनी अजितको समझाने बैठी—वह बोली—'अजित! प्रेम मानव-जीवनकी घृणा, प्रतिहिंसा एवं ईर्षा आदि प्रकृति जन्य-विकारोंसे विजय प्राप्त करनेवाला महान अस्त्र है। किन्तु जिस प्रेमकी शीतल छायामें बैठकर साधक अपनी सिद्धि प्राप्त करता है, ठीक उसी प्रकार सांसारिक-जीवनका प्रेम भी अनेक कर्तव्योंके पालन करनेमें सहायक बनता है। जैसे माँ अपने प्यारे शिशुको प्यार करती है, पत्नी पतिको, भाई-भाईको, कन्या माता-पिता भाई-पति एवं स्वजन सम्बन्धियोंको। आदि-आदि एक प्रकारसे प्रेम,

स्वयं दुःख उठाकर अपने प्रेमीके हित-चिन्तनमें तल्लीन होकर आत्मो-त्सर्गके मार्गपर आ खड़ा हो जाता है। इस स्थितिमें पहुँचते ही प्रेमकी स्वार्थमयी भावनाका विनाश हो जाता है। एक अव्यक्त, शुद्ध एवं सनातन तत्त्वकी भाँति प्रेमका अन्तःकरणमें दर्शन होता है। प्रेम सुख-दुःखकी परिभाषासे ऊँचे उठकर जीवनका महान् दर्शन बन जाता है और विकार-जन्य जीवात्माकी अन्तर-बाह्यकी शुद्धिकर उसे निर्मल बना देता है। किन्तु प्रेमका मार्ग कठोर एवं तलवारकी धारपर दौड़नेके सदृश है। प्रेम बदलेमें कुछ नहीं चाहता, वरन् वह स्वयं आत्माकी पवित्र पुकार बनकर गुत्थियोंसे भरे मानव-जीवनको सुलझा देता है। हाँ, रूपकी उपासनामें, पतिङ्गेकी तरह दीप-शिखामें जल मरनेवालोंके लिए, क्षण-भरका आत्म-समर्पण ही जीवनकी भयानक भूल बनकर, संयोग-वियोगके द्वन्द्वमें जीवात्माको पीसता रहता है। वासनामय प्रेममें शीतल अन्तःस्पर्श नहीं, उलटे आत्म-विकारोंकी ज्वालामें जीवन भर तड़पन एवं रुदनका भयानक व्यापार चलता रहता है। रूपका प्रेम धोका बनकर जीवनको छलता है। प्रेमी, हृदयकी आकांक्षाओंको तड़पन और मूर्च्छनाके दलदलमें फँसाकर, वेदनाओंका आलिङ्गन करता है और प्रियतमके दर्शनके बिना ही जीवनके सुख-सपनोंकी हत्याकर बैठता है।'

बाधा देते हुए बीच हीमें अजित बोल उठा—'उफ, मृणालिनी! प्रेमके सम्बन्धमें तुम्हें अधिक खोज करनेकी, जैसे कोई आवश्यकता नहीं। तुमने अपने अनुभवकी गहराईसे प्रेमकी परिभाषा मन्थन करके ढूँढ़ निकाली है। मुझे तो स्प स्वीकार करना चाहिए कि प्रेमके व्यूहमें फँसनेकी अबतक मुझे कोई राह न दिखाई पड़ी।'

तुनुक मिजाजीके साथ मृणालिनी बोली—अच्छा, जाने भी दो। तुम तो गम्भीर बातोंको व्यङ्गके द्वारा उड़ा देना चाहते हो।

'अजी नहीं—क्षमा करो मृणालिनी! मैंने सचमुच जो कुछ कहा,

वह ठीक है। राजनैतिक जीवनके अन्धड़ और तूफानमें, केवल सरकार के समक्ष प्रतिनिधित्व करने या असहयोग कर देनेके अतिरिक्त सांसारिक जीवनके प्रति विशेष कोई जानकारी नहीं।'

'हिश, झूठे कहींके—भारत जैसे राष्ट्रके अग्रगण्य नेता बनकर जिस भाँति अपने अज्ञानकी सफाई दे रहे हो, वह विश्वासके योग्य नहीं।'

इसी समय वे युगुल पक्षी एक दूसरेको प्रणय-चुम्बनों-द्वारा विह्वल कर रहे थे। मुसकुराते हुए मृणालिनीने अजितको संकेत किया। जैसे ही अजितकी दृष्टि उन दोनोंपर पड़ी, मृणालिनीने कौतूहलके साथ प्रश्न किया—"वे दोनों किस व्यापारमें निमग्न हैं?"

'मैं नहीं बता सकता!'

'तो क्या तुम्हें सृष्टिकी वे बातें भी ज्ञात नहीं, जो प्रारम्भिक-जीवनमें अबोध शिशुकी समझमें आ जाती हैं।'

'ऐसी कोई बात नहीं मृणालिनी! किन्तु पशु-पक्षी जगत्के व्यवहारोंके विशेषज्ञ ही तुम्हारे प्रश्नोंका समुचित उत्तर दे सकते हैं। हम जैसे राजनैतिक सिपाहियोंके जीवनमें ऐसे प्रसङ्ग साधारण गुदगुदी उत्पन्न भी नहीं कर सकते हैं।'

मृणालिनी अपनी ही धुनमें चुप होकर उन युगुल पक्षियोंके प्रेम-परिणयको उत्सुक दृष्टिसे देखने लगी। अजितने अपने अस्त्र-शस्त्र ठीक किये और निशानेबाजीका आनन्द उठानेके लिए चुपचाप मृणालिनीसे कुछ दूर जा बैठा। सामनेसे हिरणोंका एक विशेष झुण्ड दौड़ा हुआ आ रहा था। उनका अगुआ कृष्ण वर्णका पुष्ट हिरण था। अजितने निशाना साधकर तीर चलाया। कृष्ण हिरण दो-चार छलाँग भरकर—अन्तमें—आहत हो गिर पड़ा। इस क्रूर कर्मने उन उन दोनों पक्षियोंका एकान्त मिलन भंगकर दिया। वे दोनों डरे हुएसे,

पंख फड़फड़ाकर उड़ गये और देखते-देखते मृणालिनीकी दृष्टिसे ओझल हो गये।

इधर अजित, उस कृष्ण-वर्णवाले मृगके मांस एवं चर्मका लोलुप बनकर, जहाँ वह गिरा था, उसी ओर चल पड़ा। अजितके इस कार्यसे मृणालिनीकी ध्यान-मुद्रा भी भङ्ग हो गयी। उसने देखा—अजित उस बोझिल मृगको अपनी पुष्ट भुजाओंमें जकड़े हुए लेकर मृणालिनीके पास आ रहा है। हाँफते हुए जैसे ही अजित मृणालिनीके समीप पहुँचा, उसने विरक्तिसे मुँह फेरकर कहा—'अजित! तुम निर्दय प्राणी हो? क्यों तुमने तीर चलाकर इस निरपराध मृगके मुक्त विहारको मृत्युके क्रूर बन्धनसे जकड़ दिया और वह देखो, वे दोनों पक्षी भी तुम्हारे डरसे उड़कर भाग गये। बोलो! तुमने एक साथ इन सबके स्वतंत्र जीवनको, क्यों भयके आतङ्कसे विह्वलकर दिया?

अजितने देखा कि इतना कहते कहते मृणालिनीके दोनों बड़े-बड़े नेत्र, अश्रु बिन्दुओंकी बाढ़से सजल हो उठे। मृणालिनीका गला भर आया और उसके मुखसे एक भी शब्द न निकला। उल्टे घिग्घी बँध गई और वह अजितसे कुछ दूर जाकर चुपचाप रोती रही।

अजितपर मृगकी मृत्यु एवं पक्षियोंके उड़नेका कोई प्रभाव न पड़ा किन्तु वह मृणालिनीकी अन्यमनस्कतासे अधीर हो उठा। पास जाकर मृणालिनीके सिरको स्पर्श करते हुए, पश्चात्ताप भरी वाणीमें बोला—मृणालिनी! क्षमा करो। अनजाने ही मुझसे दोष हो गया। यदि मैं जानता कि पक्षियोंके जोड़े एवं मृगपर तुम्हारा विशेष स्नेह है तो मैं कभी आखेटके लिए उद्यत न होता।

"स्नेहकी बात छोड़ो अजित। यह मानवीय धर्म कि जीवमात्रके साथ हेतु रहित दया हो, तुम्हारे द्वारा क्रूरतापूर्वक कुचला जा रहा है। मानव जैसा सहृदय एवं ज्ञानी जीव होकर, अहिंसक एवं भोले पशु-

पक्षियोंपर हिंसा जैसा निर्दय व्यवहार करना, मनुष्यके राक्षस होनेका चिन्ह है। भला बताओ। पास-पड़ोसके वनमें स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करनेवाले पशु-पक्षियोंने हमें बधिक समझकर कितना दुःख माना होगा। यह माना कि वे मूक हैं, किन्तु मानवके सदय-निर्दय व्यवहार की उनपर गहरी छाप पड़ती है! भला, अब उनके साथी हमपर कैसे विश्वास करेंगे।

अजितको मृणालिनीने तिरस्कृत दृष्टिसे देखकर मुँह फेर लिया। वह स्वतः बुदबुदाने लगी—"ऐसे प्राणी प्रेमके पात्र नहीं होते! वे अपने क्षणिक आनन्दके लिए, निरीह प्राणियोंकी हत्या कर बैठते हैं भला, कोई हिन्सक जीव होता तो और बात थी। किन्तु, मृग जैसा मन-हर निरपराध पशु! अपने चमड़ेकी सुन्दरताके कारण, बधिकोंकी हिन्सक वृत्तिका शिकार बन जाता है और ये विधाताकी सुन्दर सृष्टिका विनाश करनेवाले प्राणी मानव वेशमें दानव बनकर जीते हैं।"

अजित मृणालिनीके दया-द्रवित उद्गारोंको सुन रहा था किन्तु उसे भान हुआ जैसे व्यक्तिगत उसीको कटाक्ष करके मृणालिनी सब कुछ बड़बड़ा रही हो। उसने पश्चात्ताप मिश्रित वाणीमें कहा 'छिः, मेरे व्यवहार द्वारा तुम्हें इतना दुःख होगा, इसे मैं न जानता था, अन्यथा, मृगयाके सम्बन्धमें कोई चर्चा ही न चलाता और कमसे कम तुम्हारी दृष्टिके सामने हिंसा करनेका दुस्साहस न करता।'

विरक्ति और घृणा मिश्रित भावोंको व्यक्त करती हुई मृणालिनी कह उठी—यह भी कोई चलनकी बात है—तुम हिंसक हो। मेरे सामने न सही किन्तु अपने सामने तुमने अवश्य हिंसा की होती।

क्षणभर चुप रहनेके पश्चात् निर्निमेष दृष्टिसे सूने आकाशकी ओर देखती हुई मृणालिनी स्वगत बोली—"उफ़, मुझसे भयानक भूल हुई। बाह्य वेश देखकर ही मैंने अपने जीवनमें स्थान दिया। सचमुच, अन्तर बाह्य

की जानकारी किये बिना बहिरङ्ग वेश द्वारा किसीको पहचानना या परखना अति कठिन है ।'

अजितसे चुप न रहा गया। वह बोल उठा—'मेरी अच्छी साम्राज्ञी! एक बार तो मुझे क्षमा करो! मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे सदय-हृदय पर ऐसा आघात लगेगा!'

''आघात लगेगा!'' वाक्य दुहराकर मृणालिनी चुप हो गयी और धीरे-धीरे उस स्थानसे चल पड़ी। आगे-आगे चुपचाप मृणालिनी जा रही थी और पीछे-पीछे मृत हिरणको कन्धेपर टाँगे हुए अजित। मृणालिनीने एक भी बार अजितकी ओर मुड़करतक न देखा। वह चुपचाप उस स्थलतक चली आयी, जहाँ उसके सेवक राजसी महायानके साथ प्रतीक्षा कर रहे थे।

सेवकोंने साम्राज्ञीको अभिवादन किया किन्तु वह मौन ही रही और अपने महायानपर चढ़कर समुद्रतटीय निवास-स्थलकी ओर चल पड़ी।

पीछे ही पीछे अजित भी आया किन्तु साहसकर वह मृणालिनी के साथ न जा सका। बचे खुचे भृत्योंको साथ लेकर अनमना-सा वास-स्थलकी ओर लौटा।

साथमें जानेवाले भृत्य आपसमें काना-फूसी कर रहे थे। 'लो देखो। महा-आमात्यने मृगकी हत्याकर, साम्राज्ञीको कुपितकर दिया। तभी तो वह बिना कुछ कहे, अकेले ही राजप्रासाद चली गयी हैं।

मृणालिनी मृगया-स्थलसे अर्धविक्षिप्त-सी लौटी और आते ही अपने शयन-कक्षमें घुसकर दीवालके सहारे लगी हुई अजितकी तसवीर-को टुकड़े-टुकड़े कर दिया। एकाध छाया चित्र भी टँगे थे, जिन्हें किसी दिन आनन्दातिरकसे भरकर, स्वयं मृणालिनीने अपने हाथों निर्मित किया था और बहुमूल्य तैल रंगादि द्वारा चित्रको सौन्दर्यको बढ़ानेमें, अपने हाथोंसे तूलिकाओं द्वारा सँवारा था—आज क्रोध और

घृणासे दीवालके सहारे पटक दिया। बहुमूल्य गजदन्तोंपर सँवारे हुए वे चित्र, संसारकी सबसे अधिक घृणित वस्तुकी तरह नष्ट कर दिये गये। अजित जो छायाकी तरह मृणालिनीके पीछे ही पीछे आया था, छिपकर किसी झरोखेसे झाँकने लगा।

अजितने देखा कि सुगन्धित तैल एवम् सुमन गुच्छोंसे सँवारे हुए रति जैसे केश, क्रोधके आवावेशमें बिखर गये हैं। क्षण भर पूर्व जिन घुँघराले केशोंमें प्रेमी हृदयके आकर्षणका मौन निमन्त्रण था, इस समय उन्हीं केशोंकी अस्तव्यस्ततामें, काली नागिनकी भयानक फुंकार जैसा भय टपक रहा था। रतिरम्भासे कोमल अरुणिम होठोंकी धड़कनमें बिजुली कौंध रही थी। मनहर नेत्रोंकी स्नेह एवम् ममतामयी दृष्टिमें अग्नि ज्वालाएँ नाच रही थीं।

मृणालिनी तैलके चित्रोंके अवशेषको पादप्रहार द्वारा कुचलकर रुँधे गलेसे स्वगत कह उठी—"उफ़, जिन्हें मैंने कोमल फूल समझा था, वे वज्रकी तरह कठोर निकले। इन हृदयोंका क्या विश्वास? इनके स्वभावकी बाह्य कोमलता, समाजके हृदयको धोखा देनेवाली है। इनके अन्तरङ्गका सही दर्शन तब होता है, जब वे अपने सहज स्वभावसे अना-यास ही दूसरोंके जीवनको कुचलकर अट्टहास करते हैं।

आह! इन्हें मैंने जो श्रद्धाके फूल चढ़ाये हैं, वे अपावन हो चुके। मेरी सारी पूजा दूषित है। मैंने दानवको प्राप्त करनेके लिए, अपने अन्तरके मानवको उसकी शरणमें पटक दिया था! वरदानके बदले मिला घृणित अभिशाप! यही वह अजित है, जो दीन-दुःखियोंके लिए अपना सर्वस्व उत्सर्ग करता है? किन्तु जो मूक हैं, शब्दोंमें अपनी घृणा व्यक्त नहीं कर सकते, वे ही सहृदय देवताके क्षणिक मन बहलानेके लिए अपने जीवनकी बलि देते हैं।

'अच्छा है, निर्दयकी स्मृति-वल्लरीको हृदय-पिण्डसे उखाड़कर फेंक रही हूँ जिससे फिर कभी जीवन मायाविक-प्रेमकी छलनामें पड़कर

चीत्कार न कर उठे !! मैं नेत्र मूँदकर ऐसे देवताके दर्शनसे अपनेको वञ्चित कर लूँगी। मैं अपने पिछले प्रेम एवम् श्रद्धाके लिए पश्चात्ताप-की आग सुलगाऊँगी और उसीमें उन भावनाओंको भस्म करूँगी, जिनके बलपर मैं प्रेमोपासनाकी भावभरी उमङ्गोंका सृजन किया करती थी।

मृणालिनीकी सहसा उत्तेजनामयी वाणी रुक गयी। उसके माथेपरसे श्रम बिन्दु टपकने लगे! वह निराशा-सी, थकी-सी, कुचली-मसली-सी, निष्प्रभ होकर बैठ गयी।

अजितको प्रथम बार ज्ञात हुआ कि साम्राज्ञी उसे अन्तःकरणसे प्यार करती है। यद्यपि उसने कभी भी प्रेम प्रदर्शित नहीं किया और कभी नहीं चाहा कि बदलेमें अजित भी उसे उसी तरह प्यार करने लगे। गोपनीय प्रेमकी आराधना करते हुए मृणालिनीने देवत्व प्रदान करनेवाले मानवीय गुणोंको प्यार किया था, किन्तु जब उसकी भावनाओंको क्रूर ठेस पहुँची, तब उसने विपरीत भावनावाले प्रेमिकको हृदय प्रदेशसे बलात् निर्वासित कर दिया।

शोक और चिन्तामग्न होकर मृणालिनी, अबोध बालिकाकी तरह फूट फूटकर ठीक वैसे ही रोने लगी, जैसे, क्षणिक अस्तित्ववाले मिट्टीके घरौंदोंके बिगड़ जानेपर, ममताके आँसुओंमें बालक रोने लगते हैं।

अजितने यह, सब कुछ अपनी आँखों देखा। उसके पश्चात्तापकी कोई सीमा न रही। जब मृणालिनी उसे अपने सर्वान्तःकरणसे प्यार करती है और अजितके दर्शन न होनेपर अश्रु-बिन्दुओंको पलक-अञ्ज-लियोंमें भरकर, प्रेमअर्घ्य प्रदान करती है, तब अजितको इस गोपनीय प्रेम-रहस्यका किञ्चितमात्र भी ज्ञान न था। किन्तु जब अजितको ज्ञान हुआ, तब मृणालिनी अपने पिछले प्रेम-व्यापारपर पश्चात्ताप करती हुई, अजितके प्रति अपने हृदयमें बलवती घृणाको जन्म दे रही थी।

अजित प्रवेश द्वारके सामने आकर, कक्षकी कुन्डी खटखटाने लगा, किंतु मृणालिनीने भीतरसे ही डाँटकर चले जानेका आदेश दिया। अजितने पुकारकर अपना नाम बताया किन्तु मृणालिनीने खेदपूर्वक मिलनेसे अस्वीकार कर दिया।

प्रणयिनी द्वारा तिरस्कृत होकर अजित अशान्त हो उठा। उसका जाग्रत स्वाभिमान फटकाकर अन्तर्वाणीसे बोला—"छिः एक नारीके सामने गिड़गिड़ाते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आती। खेद है कि सम्राटों, राजा-महाराजाओं एवम् बड़े प्रभावशाली लक्ष्मी-सम्पन्नोंके सामने, जिसका व्यक्तित्व तिल भर न झुका, वही पुरुष, एक नारीके प्रेम-पात्रके स्थानपर, घृणा पात्र बनकर भी पश्चात्ताप करते हुए अपनेको छोटा बना रहा है।'

अजित चुपचाप लौटकर हारे हुए जुआरीकी भांति अपने शयन-कक्षमें जाकर लेट रहा। पश्चिमी साम्राज्यका गवर्नर तथा अनेक राज-नैतिक साथी राज-काजके सम्बन्धमें अजितसे परामर्श करने आये किन्तु अपने मनोभावोंको गोपनीय बनाते हुए, उसने अस्वस्थ्यता प्रकट कर सबको बिदा कर दिया।

अजितके सामने एक प्रमुख प्रश्न यह खड़ा हुआ कि यदि मृणा-लिनीसे उसका प्रेम और सहयोग न स्थापित हो सका, जिसकी अब कोई आशा नहीं है, तब वह मृणालिनीके साम्राज्य बने रहनेकी स्थितिमें अपने महा-आमात्य पदका दायित्व कैसे सम्हालेगा? उसे विवश होकर राज-काजके प्रसङ्गमें, मृणालिनीसे अवश्य मिलना होगा, उस स्थितिमें मृणा-लिनीके खिंचे रहने पर तनाव ही बढ़ेगा और वैयक्तिक कर्तव्योंका निभाना असम्भव हो जायगा।

कुछ भी हो, थोड़े दिनों पश्चिमी साम्राज्यमें और रहकर यहाँका शासनप्रबन्ध और जनताकी जीवनोपयोगी आवश्यकताएँ पूरी कर राज-

धानी लौटना चाहिए और राजधानी पहुँच कर, मृणालिनीसे सब प्रकार-का सम्बन्ध विच्छेद करना चाहिये।

दूसरे दिनसे ही अजित पूर्ण मनोयोग द्वारा कार्य समाप्तिके लिए प्रयत्नशील हो गया। जहाँ उसकी दिनचर्यामें दैनिक आमोद-प्रमोद हँसी खेल, सैर-सपाटेका कार्यक्रम जुड़ा रहता था, वहाँ उसने सारा समय शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कार्योंमें बिताना प्रारम्भ किया। माह भरका कार्य-क्रम केवल एक सप्ताहकी अवधिमें ही समाप्त हो गया।

साम्राज्ञीने भी यही मार्ग ग्रहण किया। कानोंकान किसीको दोनोंके बीच हुई अनबनका पता तक न लगा। केवल दो चार दास-दासियाँ, जो प्रत्येक क्षण इन दोनोंकी परिचर्या एवम् टहलमें रहते थे, इतना समझ सके कि हिरन मारनेसे साम्राज्ञी अजितसे असन्तुष्ट है, किन्तु इससे अधिक वे लोग भी न समझ पाये कि दोनोंका सम्बन्ध इतना तीव्र विषाक्त बन गया है!

साम्राज्ञी अपने कामोंमें कार्यव्यस्त थी। दूसरी ओर अजित अपने कार्योंमें।

अजितने पश्चिमी साम्राज्यके गवर्नरको बुलाकर अपने राजधानी लौटनेका मन्तव्य प्रकट किया। उसने दो चार दिन रुककर आतिथ्य स्वीकार करने और पुराने राजनीतिक कार्यकर्ताओं एवम् साथियोंसे मिल-जुलकर अनेक जटिल समस्याओंका समाधान करनेकी प्रार्थना की किन्तु अजितने उसे स्वीकार नहीं किया।

अजित बोला—'समझने योग्य जटिल समस्याएँ विशेष समय चाहती हैं किन्तु राजधानी सूनी है। साम्राज्ञी और महा-आमात्य दोनों ही राज-धानीसे बहुत दूर हैं। नवीन शासन पुराने राजकाज चलानेके लिए एक नवीन समस्या है। इसलिए जबतक केन्द्रमें सारी व्यवस्था समुचित ढंगसे क्रियान्वित नहीं की जाती, तबतब अनेक त्रुटियोंका होना सम्भव है, अतः मेरे लौटनेका कल ही प्रबन्ध हो।

दूसरे दिन, विशेष समारोहके पश्चात्, अजित राजधानीके लिए लौट चला। हाँ, साम्राज्ञीने अबतक अपना कोई मन्तव्य नहीं प्रकट किया था, अस्तु वह पश्चिमी साम्राज्यके प्रमुखका आतिथ्य ग्रहण करनेके लिए रुकी रही।

अजितके जानेके पश्चात् दिनपर दिन व्यतीत होते गये—धीरे-धीरे माह दो माह और तीन माह व्यतीत हो गये। मृणालिनी पश्चिमी साम्राज्यकी राजधानीमें ही रुकी रही। बीच बीचमें वह देशके अनेक भागोंमें, जहाँकी जनताने उसका आह्वान किया, शासन-सम्बन्धी समुचित व्यवस्थाओंके स्थापनार्थ आती जाती रही और जनतासे मिलकर अपना सीधा सम्पर्क भी स्थापित करती रही। साम्राज्ञी जनताके बीच इस प्रकार घुलमिल गयी कि जनताने घरके प्राणीकी भाँति, साम्राज्ञीका सम्बन्ध स्वीकार किया।

मृणालिनीके पश्चिमी साम्राज्यमें दीर्घकालतक रहनेका एक विशेष लाभ यह हुआ कि राष्ट्रको समुन्नत एवं समृद्धिके मार्गपर चलनेके लिए, जो राष्ट्रव्यापी योजनाएँ लागू थीं, उनमें गतिशीलता आ गयी। वर्षोंमें समाप्त होनेवाली योजनाएँ, महीनोंमें समाप्त होती हुई दिखाई पड़ीं। साम्राज्ञी स्वयं मेहनतकश श्रमिककी भाँति, कार्य करते हुए दीख पड़ती थी। अतएव शारीरिक श्रमदानके प्रति जो बड़ी सामाजिक उपेक्षा थी, वह कम हो चली और जनता में, अपने हाथों अपना कार्य करनेकी प्रेरणा चारों ओर फैल गयी। शारीरिक श्रम-दानके प्रति अनादर एवं उपेक्षाके भाव क्षीण पड़ने लगे। चारों ओर नव-चेतना एवं नवीन निर्माण कार्य दीख पड़ने लगे। जो कलतक दूसरोंको श्रम करते देख, उसे छोटा कहनेमें कोई संकोच न करते थे, वे ही श्रम-दान करनेवालोंको कीर्ति-गाथा गाने लगे। सम्पूर्ण साम्राज्यके चार विशेष भागों—उत्तर, दक्षिण, पूर्व एवं पश्चिमकी योजनाओंका विवरण देखते

हुए स्पष्ट था कि पश्चिमी साम्राज्यकी योजनाएँ विद्युत-वेगसे समाप्त हो रही थीं।

अजित राजधानीमें पहुँचते ही कार्यमें जुट गया। उसकी अनुपस्थिति के कारण जो कार्य करना बाकी रह गया था, पहले उसने उसे पूरा किया। पश्चात् दैनिक कार्योंको करते हुए दो मासतक निरन्तर, साम्राज्ञीके राजधानी लौटनेकी प्रतीक्षामें वह काम चलाता गया। आवश्यक राज-काज सम्बन्धी पत्रादिकोंको साम्राज्ञीके समीप भेजकर आदेश प्राप्त करता रहा किन्तु जब पूरे दो मास व्यतीत हो गये और साम्राज्ञीका लौटना अनिश्चित जैसा ज्ञात हुआ, तब दक्षिणी साम्राज्यके अपने अति योग्य साथी यशवर्द्धनको उसने राजधानी बुला भेजा उसके राजधानी पहुँचते ही सारे देशके शासकोंमें केन्द्र-द्वारा विशेष परिवर्तन प्रारम्भ हुआ।

अजित, जो, जनता द्वारा चुना हुआ, महा-आमात्यके पदपर प्रतिष्ठित था साम्राज्ञीकी सरकारकी सेवामें अपना विशेष प्रार्थना पत्र प्रेषितकर, स्वास्थ्य लाभ एवं वैदेशिक विभागोंके कार्यकी देख-भालके लिये विदेश जाना आवश्यक उल्लेख कर, दीर्घकालके लिए महा-आमात्यके पदसे अवकाश ग्रहण करना चाहा।

चूँकि अभी इस समय सम्पूर्ण देशके चुनावकी अवधि भविष्यके गर्भमें छिपी थी और सारा मन्त्रिमण्डल अजित-द्वारा ही घोषित किया गया था। अतएव जबतक दूसरी चुनी हुई सरकार बन न जाती, तबतक महाआमात्यके पदसे हटने या त्याग-पत्र देनेका अधिकार अजितको भी न था। क्योंकि राष्ट्रकी समग्र जनताका प्रगाढ़ विश्वास अजितपर ही था। अतएव परिस्थिति विशेषके कारण ही अजितने अपना त्यागपत्र देकर शासन-प्रबन्धमें अपनी इच्छानुकूल आवश्यक हेर-फेरकर डाला। अपना स्थानापन्न उत्तराधिकारी यशवर्द्धनको नियुक्त किया और यशवर्द्धनके स्थानपर किसी दूसरे विश्वस्त साथीको। इस प्रकार अजितके महा-

आमात्यके पदसे हटते ही, केन्द्रसे लेकर प्रान्तों और साम्राज्यके चारों विभागोंमें विशेष परिवर्तन हुए। इस प्रकार शासन-सम्बन्धी सारी व्यवस्था उचित ढंगसे समाप्त कर महा-आमात्यने सम्पूर्ण विवरण साम्राज्ञीके समीप भेज दिया।

क्षण भरके लिए, विवरण पढ़ते ही, मृणालिनीको क्रोध आया और उसने मन-ही-मन सोचा कि क्या यह सब अजितको ऐसे ही समय में करना था, जब कि मैं उनके विश्वासपर राजधानीसे इतनी दूर पड़ी हुई हूँ किन्तु दूसरे ही क्षण उसके हृदयमें अनेक भावनाएँ आकर टकराने लगी और वह विषाद-मग्न हो गयी। यद्यपि शासन-प्रबन्धके सम्बन्धमें वह यशवर्द्धनकी योग्यताओंसे परिचित थी और जानती थी कि यशवर्द्धन अजितका अनुगामी होते हुए भी, किसी प्रकार अजितसे घटिया न सिद्ध होगा किन्तु क्या अजितको मेरी स्वीकृति एवं आदेशको प्राप्त किये बिना ऐसा करना उचित था? कुछ भी हो, जब आवश्यक उलट-फेर अजितने कर ही डाला था, तब अजितकी इच्छाके अनुकूल ही आदेश देनेमें साम्राज्ञीको कोई आपत्ति न थी क्योंकि इतनी बात तो स्पष्ट थी कि मृणालिनी अजितको अपना महा-आमात्य भर ही नहीं, वरन् अपने परिवारका सच्चा सेवक तथा अग्रगण्य नेता मानती थी। व्यक्तिगत अजितको हिंसककी भाँति घृणा करते हुए भी, मृणालिनीको पूर्ण जानकारी थी कि यदि अजित चाहता तो विचक्षणकी सरकार उल-टते समय, उसके अनुगामियों एवं साथियों-द्वारा, जिस प्रकार राष्ट्र द्वारा अहिंसक वैधानिक प्रणाली अपनायी गयी थी, उसी प्रकार घृणित हिंसा द्वारा, सम्पूर्ण राष्ट्र रक्तसे लथपथ हो जाता। किन्तु विचक्षणकी सरकार-द्वारा, चरमसीमातक दमन एवं निहत्थे नागरिकों एवं दीन कृषकों, श्रमिकोंकी निर्मम हत्या तथा हिंसा होते हुए भी, अजितका विप्लव शक्ति एवं सामर्थ्यके बलपर न होकर दृढ़ संगठन शक्ति एवं अनुशासित निय-न्त्रणके भीतर, अहिंसाका आधार लेकर सफल हुआ था। अतएव इच्छा

न होते हुए भी अजित-द्वारा की गई व्यवस्था, एवं महा-आमात्यके पदसे लेकर अन्य पदोंके परिवर्तनको, अपनी स्वीकृति प्रदानकर दी।

आदेश भेजवा देनेके उपरान्त, स्वयं साम्राज्ञीने राजधानी लौट चलनेका आदेश दिया। बातकी बातमें सारा प्रबन्धकर दिया गया और यह सूचना नागरिकोंके बीच क्षण भरमें विद्युत वेगसे फैल गयी। कृतज्ञ जतना जो साम्राज्ञीके दीर्घकालतक निवास करनेके कारण, बड़ी सुखी और समृद्ध पथपर अग्रसर हो रही थी, साम्राज्ञीके वियोगमें बालकोंकी भाँति अश्रु-धारा प्रवाहित करने लगी। मृणालिनीको भी जनता इतना घनिष्ठ प्रेम हो गया था, जिन्हें छोड़कर जाते समय भास हो रहा था जैसे अपने सगे स्वजनोंसे विलग होकर वह कहीं दूर जा रही हो।

यात्राकी शुभ घड़ी आते ही जनताने एक स्वरसे साम्राज्ञीके नामका 'जय घोष' किया। साम्राज्ञीने जनता-द्वारा प्रदान किये गये आदर अभिनन्दनका प्रत्युत्तर कर-बद्ध शीश झुकाकर प्रकट किया। साम्राज्ञी चल पड़ी और सारी जनता एक बार उसके अभावमें हिचकियाँ लेकर रो पड़ी।

इधर राजधानी लौटनेपर सारी जनताने स्वागत-साज सजाया। द्वार-द्वारपर तोरण, बन्दनवारें, मङ्गलकलश एवं सुमुखी-सुन्दरी रमणियों-द्वारा मधुर मङ्गल गीत।

जनता कोसों आगे चलकर साम्राज्ञीके शुभ दर्शनकी प्रतीक्षामें जा बैठी। लौटती हुई साम्राज्ञी, कमल-दलसे लोहित ओष्ठ-पल्लवोंपर खिले हुए कुसुमों जैसी मुसकुराहट सजाकर जनताका अभिवादन स्वीकार करते हुए राजप्रासादमें प्रविष्ठ हुई। जयजयकार एवं जयघोष नाद, सारे रमणीय भवनोंके शिखरोंसे टकराकर, सम्पूर्ण नगरमें प्रतिध्वनित होने लगा। इस अपूर्व स्वागतका प्रबन्धकार यशवर्द्धन था, जो साम्राज्ञीके महा-आमात्यके रूपमें सारा आयोजन करके, साम्राज्ञीके पीछे पीछे चल रहा था। उसी दिन रात्रिके समय, साम्राज्ञीकी उपस्थितिमें संगीत, नृत्य

एवं कला-प्रदर्शनका अभूत-पूर्व समारोह मनाया गया। नागरिकोंके घरोंसे बच्चे, बूढ़े, युवक-युवतियाँ सभी मिलकर वियोगजन्य पीड़ासे मुक्ति पाकर, साम्राज्ञीके सहयोगका सुख उठाने आये थे।

सारा दृश्य अभूतपूर्व था। असंख्य दीपकोंकी बहुरंगी शोभामें सुख समृद्धि एवं सम्पन्नता मानों नाच रही थी। सम्पूर्ण नागरिक जनता इस अवसरपर उपस्थित थी। मृणालिनी अन्नपूर्णा-सी अपनी जनताके मध्य विराज रही थी। एक-एक करके नागरिक अभिनन्दन-वन्दन करने साम्राज्ञीके समीपतक जा रहे थे। मृणालिनी चिरपरिचित-सी सभी लोगोंसे कुशल क्षेमके प्रश्न करती जाती थी। धीरे-धीरे साम्राज्ञीकी दृष्टिसे परिचित-अपरिचित सभी तरहके नागरिक मिल चुके। किन्तु साम्राज्ञीकी दृष्टि जिसे खोज रही थी, अकेला वही भर इस महोत्सवके समय अनुपस्थित था। वह साम्राज्ञीका महा-आमात्य अजीत! जनताके जीवनका रक्षक एच उद्धारक।

साम्राज्ञी अन्ततक, अजितको एक दृष्टि देख पानेकी प्रतीक्षामें थी। उसकी अशान्ति, उसे चुपचाप व्यथितकर रही थी किन्तु ऊपरसे जनताके बीच, भव्य मुस्कुराहट-द्वारा एक आकर्षण बनाये हुई थी। जनता ठगी-सी उर्वशी जैसी साम्राज्ञीको, लुब्ध-दृष्टिसे देख रही थी।

धीरे-धीरे उस रात्रिके सारे आयोजन समाप्त हो गये। संगीत, नृत्य, एवं कला-प्रदर्शन द्वारा सबको विशेष मनो-विनोद प्राप्त हुआ। साम्राज्ञी राजप्रासाद लौटनेको उद्यत हो महायानपर आ आसीन हुई। सारी सभा उठकर अपने-अपने गृह चली गयी।

साम्राज्ञी कुछ समयके लिए राजामातासे मिलने और महीनोंके दुखों-सुखोंकी चर्चा करनेके निमित्त, माताके पास ही जा बैठी। साम्राज्ञीने माता-द्वारा मन्त्रिमण्डलके परिवर्तनके सम्बन्धमें विशेष जानकारी प्राप्त की। अजितका एकाएक, इस प्रकार राष्ट्रके शासनसे हाथ खींच लेना विशेष महत्त्व रखता था। वही तो जीवटवाला व्यक्ति था, जिसकी

स्वराष्ट्रवासियोंके अतिरिक्त, विदेशी जनतासे भी पटती थी। बाहरके नेता लोग अजितका नेतृत्व स्वीकार करते थे। अन्तर्राष्ट्रीय विषयोंपर तो अजितको प्रायः आमन्त्रण मिलते रहते थे।

राजमाताने स्वयं इस घटनापर आश्चर्य प्रकट किया और वह मृणालिनीसे बोलीं—"मेरा विश्वास था कि जो कुछ अजित कर रहा है, कमसे कम, उसकी मौखिक स्वीकृति तुमसे प्राप्त कर ली होगी। किन्तु अफ़सोस है कि तुम्हें भी कोई कारण ज्ञात नहीं।"

'पर अजित है कहाँ, माँ?'

'नहीं जानती।'

'क्या करता है, इन दिनों?'

'पता नहीं।'

मृणालिनी चुपचाप माताको अभिवादनकर, अपने प्रशासकीय कक्षमें जाकर बैठ गयी। उसके देखने और आदेश देनेवाले कागजों एवं पत्र-पत्रिकाओंका ढेर-सा लगा हुआ था किन्तु मृणालिनीका ध्यान उन पत्रोंपर गया, जो राजधानीके बाहर साम्राज्ञीके नाम प्रेषित किये जाते थे।

अन्तमें साम्राज्ञीको जिस वस्तुकी तलाश थी, वह उसे प्राप्त हो गयी। व्यक्तिगत मृणालिनीके नामका एक पत्र था जो समुद्र तटवर्तीय क्षेत्रसे आया था। प्रेषक था अजित। साम्राज्ञीने शीघ्रता-पूर्वक लिफाफा फाड़ डाला। वह पत्र पढ़ने लगी। उसमें लिखा था—

महान साम्राज्ञी!

सादर अभिवादन!

मैं स्वदेश छोड़कर विदेशको जा रहा हूँ। वास्तवमें मैं अस्वस्थ्य हूँ। मेरे चिकित्सकोंकी राय है कि मैं एक लम्बे समयतक ठंढे प्रदेशोंकी पहाड़ियोंमें एकान्त निवास करूँ और जहाँतक संभव हो, गुत्थियोंसे भरे

पेंचीदे राजनैतिक सवालोंपर विशेष मानसिक परिश्रम न करूँ। इसके अतिरिक्त विदेशी सरकारों द्वारा आमंत्रण भी प्राप्त हुए हैं जिनमें स्वराष्ट्र-का प्रतिनिधित्व करने मैं स्वयं जा रहा हूँ। सचमुच, जाना भी मुझे ही चाहिए था। क्योंकि वैदेशिक विभागका दायित्व मैंने ही ले रक्खा है। मुझे भारतके दृष्टिकोणको अन्य देशोंकी सरकारोंके समक्ष रखते हुए, अपने देशमें प्रजातांत्रिक समाजवादकी स्थापनाके सम्बन्धमें भी दो चार शब्द कहना है।

विदेशी सरकारें भारतीय जीवनकी बहुमुखी क्रान्तिको सतर्क दृष्टिसे देख रही हैं। अहिंसक अराजकता द्वारा जिस प्रकार सम्राटकी सरकार बदलकर, जनताकी पञ्चायती सरकार स्थापित की गयी है, यह प्रयोग भी शक्ति-उपासक राष्ट्रोंकी सरकारोंके लिए, एक नया ऐतिहासिक अनुभव एवं परीक्षण बन गया है। भारतके उदार दृष्टिकोणको समझनेके लिए विश्वकी सरकारें लालायित हैं। इस प्रयोगकी ऐतिहासिक आवश्यकताको यदि मैं समझा सका, तो भारतका नाम विदेशोंमें सम्मानपूर्वक लिया जावेगा और सारे संसारकी सरकारोंके समक्ष हिंसक क्रान्तियों एवं परिवर्तनों द्वारा सरकार स्थापित रखनेकी प्रणालियोंमें कोई विश्वास न रह जायगा।

मैंने साम्राज्ञीकी अनुपस्थितिमें जो कुछ किया है, वह राष्ट्रके हितके सामने रखकर ही। विदेशोंसे लौटनेके पश्चात् मैं अपनी सेवाएँ पूर्ववत् समर्पित करूँगा। भूलोंके लिए क्षमा।

आपका ही

अजित

देशकी पवित्र धूलिको स्पर्शकर एक दिन अजित चल पड़ा, समुद्र पार—स्वदेशकी मान-प्रतिष्ठा बढ़ाने और विश्वकी जनतासे भारतका मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने।

उसकी दृष्टिमें प्रज्वलित हो रही थी वह आग, जो निकट भविष्यमें,

राष्ट्रोंकी विद्वेषाग्नि द्वारा एक दूसरेके प्रति उत्पन्न होगी। जन-धन-सभ्यताका विनाश होगा। वह आग सब कुछ भस्म कर देगी। अवशेष बचेगी एक कहानी जिसे इतिहासकार लिखेंगे—"सारा मानव समाज एक कटुम्ब न बनकर, परस्पर ईषा, द्वेष, वैर, विरोध, शोषण, उत्पीड़न-की राखसे झुलस गया। मानव-भाई न बनकर, परस्पर दानवी सम्पदासे युक्त हो दम्भ, दर्द, अभिमान, क्रोध, कठोर-वचन एवं अज्ञान द्वारा एक दूसरेका अकल्याण कर रहे थे। मित्रके नामपर शत्रु बन रहे थे।"

"जीवनकी हर आवश्यकताओंकी शर्तमें प्रत्येक परिवारका आर्थिक दोहन हो रहा था। करोड़-पन्थकी चक्करमें पड़कर राष्ट्र एक विश्वके पूँजीपति, सारे मानव-समाजका आर्थिक-स्रोत सुखा चुके थे। मँहगाईके नामपर विश्वका मानव बिक चुका था। इस प्रकार विश्वकी सारी सञ्चित सम्पत्ति, मुट्ठी भर धन-कुबेरोंकी तिजोड़ियोंमें एकत्रित थी। धन कुबेरोंने व्यापारकी धार बहनेवाले आर्थिक स्रोतको सामाजिक उपकार एवं कल्याण करनेवाले क्षेत्रसे खींच लिया। इस प्रकार अभाव एवं शोषण द्वारा सारी सामाजिक आर्थिकरचना ही बिगड़ गयी। कोई लोक-कल्याणकारी व्यवस्था न रह गयी।"

"परिवर्तनकी क्रूर घड़ी आ उपस्थित हुई। विश्वके पूँजीपतियोंने संसारकी नकेल हाथमें लेकर, सारी सञ्चित पूँजी द्वारा युद्धोपकरणोंका कोष सञ्चित किया। जन-जीवन धन-हीन बनकर भिक्षुक-सा, राष्ट्र भरमें द्वार-द्वार जाकर याचनाने करने लगा।"

"विश्वको कंगाल बनाकर भी, पूँजीपतियोंकी महत्वाकांक्षाएँ अधूरी रहीं। उन्हें युद्ध द्वारा, देशोंको दास बनाने एवं उपनिवेशवाद-द्वारा पुनर्विनाशकी रचना करनेके घातक खेल खेलने पड़े। आर्थिक सहायता-की डोरी द्वारा गरीब देश फाँस लिये गये थे और पूँजीपति देशोंके ऋण द्वारा कर्जदार देश लूटा जा रहा था।"

"परिवर्तनकी विकट घड़ी आ गयी। अभागा मानव न जागा तो उसे अपनी जातिके प्रति किये गये यशस्वी कार्योंका गौरव भागी नहीं होना होगा। पेटकी ज्वालासे ज्वलित प्राणी प्रतिक्षण मृत्युका ग्रास है। वह किसी क्षण अपनी दुर्बल हड्डियोंसे, अनाचारोंकी समाधि बना देगा—बदल जाना होगा। दुनिया सुधरे हुए लोगोंकी बसायी जायगी किन्तु दूसरी ओर पूँजीवादी सरकारोंके सामने, उपनिवेशों-की जनताके बलपर, शान्तिका नारा देते हुए साम्राज्य-विस्तारकी महत्वा-कांक्षाको पूरा करना, एवं विश्वके दरिद्र नारायणको हिंसक युद्धमें सिपाही बनाकर खड़ाकर देनेका ही प्रश्न था!"

"पूँजीवादी समाज मुट्ठी भर होते हुए भी, विश्वकी शान्तिका भयानक खतरा सिद्ध हुआ। सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्तोंकी आड़में प्रमुख सत्तावादी शक्तियाँ, विश्वके प्राङ्गणको रक्तसे रञ्जित करने लगीं। दीन, दुखी, असहायोंको असीम कष्टोंका सामना करना पड़ा।"

"अहिंसक जनता बिगड़ गयी। विश्वकी सरकारोंने कारतूस भरी बन्दूकें उठा लीं। जनताने असहयोग एवं अहिंसक आन्दोलनों द्वारा पूँजीवादी शोषक सरकारोंका अन्त कर डाला। बन्दूकें पड़ी रह गयीं। उनके चलानेवाले न मिले।"

"शक्तिशालियोंकी हिंसाने, विश्वकी सुन्दर रचनाका इतना विनाश किया कि जीवित रहनेवालोंके समक्ष एक सूना जीवन है, महाकाल-सा अभाव दिख रहा है। उसके भयानक जबड़े दुनियाकी अवशेष मानवी-सृष्टिको निगल जानेवाले हैं।"

किन्तु हाँ, एक ऐसा देश है, जो भारत है। जहाँ जीवनके छोटेसे व्यापारोंसे लेकर बड़े-बड़े परिवर्तन अहिंसाकी पृष्ठभूमि लेकर हुए हैं। जहाँ सर्व-मुक्तिकी दाता अहिंसा है जो राष्ट्रकी नीति बनकर विश्वके थके, उत्पीड़ित एवं अशांत मनुष्योंको नव-मार्ग प्रदर्शित करने आयी है।

अहिंसा ही विश्वप्रेमकी आधारशिला है। अहिंसा द्वारा ही युद्धोमुखी देशोंको शान्ति एवं समृद्धि प्राप्त होगी। अहिंसाकी पराजय कभी नहीं है।"

अजितने विदेशोंकी भूमिपर पाँव रक्खा। भारतके आध्यात्मिक एवं अहिंसक दृष्टिकोण द्वारा राजनीतिकी सफलताओंके बारेमें अजितने प्रत्येक देशोंकी जनताके समक्ष एक विस्तृत वर्णन किया। भारतके अनेक महा-मानवीय सिद्धान्तोंका प्रतिनिधित्व करते हुए अजितने विश्वके अनेक देशोंकी जनताके सद्भाव अपने पक्षमें कर लिये। जहाँ कहीं अजित पहुँचा, वहीं युद्धसे थकी जनताके समूहने उसे घेर लिया और अहिंसक आन्दोलनों द्वारा भारतकी अपूर्व सफलता देखकर अन्य देशोंकी जनताने विस्मय प्रकट किया।

अजितने निरन्तर अन्य देशोंके शासकोंसे मिलकर भारत द्वारा दिये गये सन्देशको विश्वके कोने कोनेमें फैलाते हुए मानव जातिके प्रति विशाल मैत्रीका वातावरण उपस्थित कर दिया। विश्वकी अनेक सर-कारोंने सर्वनाशी-हिंसक युद्धको सदाके लिए त्याग कर, आपसमें दृढ़ मैत्री सम्बन्ध स्थापित किये। एक अन्तर्राष्ट्रीय सभामें जहाँ विश्वके लगभग सभी देशोंके प्रतिनिधियोंने भाग लिया था, अजितकी बातोंको ध्यानपूर्वक सुना और भारतके प्रति अपना समादर एवम् अभिनन्दन प्रकट करनेके लिए अजितको शान्ति-सम्मेलनका अगुआ चुन लिया।

तय यह पाया गया कि विश्वकी सभी आर्थिक राजनीतिक एवम् सामाजिक जटिलताओंको अहिंसा-सिद्धान्तके द्वारा ही सुलझाया जायगा। युद्धकी धमकियोंसे भरे हुए बयान सम्मेलनमें न दिये जायँगे। सभी प्रकारके आपसी झगड़ोंको निपटाते समय पूर्ण सौहार्द्रका वातावरण स्थापित रखा जायगा।

इतना ही नहीं, भारतीयोंके प्रति अपने सद्भावको व्यक्त करनेके

लिए विदेशी सरकारोंने बहुमूल्य उपहार भेंट किये। संक्षेपमें अजितको प्रत्येक देशोंकी सरकारोंने आमन्त्रण पत्र भेज-भेजकर बुलाया और विशाल जनताकी उपस्थितिमें, भारतकी मानवके प्रति दार्शनिक-दृष्टिको ग्रहण किया। अजित, सब कुछ भूलकर, स्वदेशके कीर्तिस्तम्भ को ऊँचा उठाये हुए, भारतके प्रति खोये हुए सम्मानको पुनः प्राप्त करने लगा।

अजित अन्य देशोंकी सरकारों एवं जनता द्वारा प्रदान किये गये अभिनन्दन पत्रों एवं उपहारोंको मृणालिनीके समीप भेजा करता था और मृणालिनी सम्पूर्ण वस्तुओंको जनताके प्रतिनिधियोंके बीच उपस्थित कर स्वदेशकी बढ़ती हुई गौरव गरिमासे पुलकित हो, अजितके सफल नेतृत्व की चर्चामें तल्लीन हो जाती थी। ठीक उसी समय, हिंसक अजित-के प्रति किये गये दुर्व्यवहारोंकी स्मृति, मृणालिनीके हृदयमें उठ पड़ा करती थी और मृणालिनी सूनी दृष्टिसे, अन्तरिक्षमें कुछ खोजने लगती थी।

अजित पत्र व्यवहार द्वारा शासन सम्बन्धी सभी सूचनाएँ इकत्रित करता था और जहाँ कहीं उससे राय माँगी जाती, वहाँ वह शीघ्र ही अपनी सहमति भेज देता था।

अजितके साथ स्वदेशसे जानेवाले उसके चार भृत्य थे। वे ही अजितके परिवार बन गये थे। स्वदेश सम्बन्धी अनेक चर्चाएँ उन्हीं लोगोंसे करके अजितके अन्तर हृदयमें एक आग प्रज्वलित हो चुकी थी, वह स्वदेश छोड़नेके दिनसे बराबर उसे जलाया करती थी और अजितका हृदय कुम्हारका अवाँ बन चुका था, जिसकी निज्वलित दहक अजितका सब कुछ भस्म कर रही थीं। विदेश जाकर वियोगकी भयानक प्रेम-पीड़ा अजितको कुछका कुछ बना चुकी थीं।

अजित अपने छोटेसे जीवनमें संसारके अनेक उथल-पुथल, चढ़ाव उतार, निर्माण-नाश, युद्ध-सन्धि एवं आशा-निराशाओंका घात-प्रति-

घातको देख सुन चुका था। अजितके स्वयं जीवनसे सम्बन्धित कोई न था, यद्यपि जिस परिवारमें उसने जन्म लिया था, अकेले वहीं छोटे बड़े मिलाकर ६० जन होते थे। बहु-कुटुम्बीवाला होकर भी अजित अपनेको अकेला मानता था और भारतसे विदेशोंको प्रस्थान करनेसे ही वह निराशावादी हो चुका था।

जाने क्यों उस जैसा सन्तुलित जीवन बितानेवाला व्यक्ति भी अस्त-व्यस्त सा हो गया था। रह-रहकर अजितके मनमें अपने जीवनके प्रति कोई आकर्षण न रह गया था। कई बार तो वह अनेक अशान्तियोंसे घबड़ाकर मृत्युका आवाहन करने लगता था। इधर निरन्तर लगभग दो महीनोंसे मृणालिनीकी अस्वस्थताके पत्र आ रहे थे। यहाँ तक कि एक दिन उसे राजधानीके प्रमुख चिकित्सकका पत्र मिला जो साम्राज्ञीका उपचार कर रहा था।

चिकित्सकने छिपे रूपमें अजितके वापस लौटनेका आग्रह किया था क्योंकि चिकित्सककी रायमें साम्राज्ञीको बाह्य रोगोंके अतिरिक्त, मानसिक रोगका दौरा भी आता था, जब कि कभी-कभी साम्राज्ञी अचेतन अवस्था तक पहुँच जाती थी और उनके मुखसे अस्फुट शब्दोंकी बुद-बुदाहट निकलती हुई सुनाई पड़ती थी। कभी-कभी साम्राज्ञी दौरेके समय ही जोर जोरसे अजितका नाम लेते हुए संज्ञा-शून्य हो जाया करती थी किन्तु अधिक कोई बात समझमें नहीं आती थी। इसी कारण चिकित्सककी राय थी कि अजित साम्राज्ञीके समीप रहें। सम्भव है उनकी उपस्थितिसे मानसिक आशक्तियोंका कोई हल निकल सके।

इन्हीं दिनों यशवर्द्धनका भी पत्र मिला, जो चिकित्सक महोदयके पत्रके पश्चात् लिखा गया था। इस पत्रमें यशवर्धनने लिखा था कि साम्राज्ञी मरणासन्न हैं और उनकी माताका कहना है कि आप विदेशोंसे शीघ्र लौट आवें। जिन दिनों अजित स्वयं लौटनेकी बातपर विचार कर ही रहा था एक दिन सन्ध्याको एक विशेष

पत्र मिला। लिखावट देखते ही अजितने पहचान लिया कि वह पत्र साम्राज्ञी द्वारा लिखा गया है। चिर प्रतीक्षाके पश्चात् यह प्रथम पत्र था जो मृणालिनीने अजितको लिखा था। बहुतसे पत्रादिक या आदेशपत्र आते रहते थे जिनपर साम्राज्यकी मुहर अथवा हस्ताक्षर भी बने रहते थे किन्तु पत्रके नामपर मृणालिनीकी लिखावट द्वारा लिखा गया वह प्रथम पत्र ही था जो इस प्रकार था।

प्रिय साथी !

हृदयालिङ्गन !

जीवन प्रदीप बुझने ही वाला है। शायद, कुछ क्षणों और जले, टिमटिमाये फिर सदाके लिए बुझ जाये। श्वास-प्रश्वासोंके अविरल प्रवाहमें कब अवरोध उत्पन्न हो जाये और फिर समग्र जीवन धराशायी हो जाये, कौन जानता है ! मानवकी माया प्रच्छन्न, प्रबल महत्वाकांक्षाएँ, चाहे तो उसे अरमानोंके नन्दन-काननसे ढकेलकर, मरु-आशा की उत्तप्त रजतभूमि पर लड़खड़ाते हुए घसीटती रहे ? कौन जानता है, समग्र जीवन महत्वाकांक्षाओंकी बलिवेदीपर कुम्भीपाक नर्ककी प्रज्वलित पीड़ाओंसे टकराता रहे ? और मानव-हृदय प्रसुप्त महत्वाकांक्षाओंकी चिता-भस्मोंपर अवसादकी बूँदें बरसाये और अपने साथ करोड़ों निरीह प्राणियोंकी सुख-शान्ति एवं समृद्धिको, छलनाके आकर्षणपटसे ढँककर कुचल डाले ! उफ़ ये अग्रगण्य ! ये नेता !! ये महान छलनाकी अभिशाप मूर्तियाँ !!! अपने स्वार्थोंकी ओटमें, किस प्रकार दधीचिकी आत्माके ओजको ललकार देते हैं और आदर्शों नैतिकताओं एवं सिद्धान्तोंके व्यूहमें जनताको फँसाकर स्वयं दधीचिका ही बलिदान कर देते हैं ?

हाय रे कृतघ्न देश ! करोड़ों प्राणियोंको मुक्ति-माल पहनानेवालेके पवित्र-रक्तसे होली ? धाँय-धाँयकर फूलसे भी कोमल हृदयको चिताकी प्रज्वलित ज्वालाओंसे जलानेका भीषण कुचक्र !!

यह दधीचि कौन ? मेरे पिता ! यह नेता कौन ? विचक्षण एवं उनका प्रबल समर्थक सामन्त एवं पूँजीपति वर्ग ! यह देश ऐसे महात्मा की हत्याके पापसे कलङ्कित है। मसीहा शूलीपर चढ़ चिर-शान्तिकी चदरिया ढककर सो गये !

किन्तु अधिकांश राष्ट्र आज भी दाने-दानेके भिखारी हैं। नेतृत्व, नैतिकतासे पतित होकर शोषकों एवं जालिमोंकी थैलियोंकी ओर सतृष्ण दृष्टिसे देख रहा है। सब कुछ लुट चुका है। मुट्ठी भर धन-कुबेरोंके शोषक-पञ्जोंमें छटपटाता हुआ विश्व, अपनी दम तोड़ रहा है। एक ओर दानवीयता अति संग्रहकी विषम ज्वालामें, सारी सृष्टिको जलाये जा रही है, तो दूसरी ओर, देवत्वकी निर्मम हत्यासे वायु, यम, अग्नि एवं शशाङ्क प्रजापतियोंके साथ इस आसुरी सृष्टिसे रुष्ट हैं। चारों ओर अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, अग्निकाण्ड, हत्या, सतियोंका अपमान विधवाओंका करुण क्रन्दन, अमर्यादित वेश्याओंका निर्लज्ज गान, जैसी अनहोनी घटनाएँ राष्ट्रोंके प्राङ्गणमें हो रही हैं। मानवकी हथेली मानव रक्तसे रञ्जित है। नङ्गों एवं भूखोंके हाहाकारसे सारे विश्वका वातावरण क्षुब्ध है। ऐसी अभागी घड़ीमें दले मसले शोषितोंके साथ नेताओंका विश्वासघात, एक अक्षम्य अपराध है !

जानते हो अजित ! जनता नेतापर अपना सहसा विश्वास प्रकटकर कृतकृत्य हो जाती है। विश्वके नेता सिखाते हैं, पूँजीपति समाजके शत्रु हैं। यह जनतासे पूँजीपतियोंके स्वार्थोंके विपरीत आन्दोलन करने की बात है। जनता उनका साथ देती है। नेतागण करोड़ पन्थके विपरीत सामूहिक घृणाकी उत्तेजना दे उन्हीं करोड़-पन्थियोंकी थैली पर बिक जाते हैं। आन्दोलन, परिवर्तन एवं क्रान्तिमें गतिरोध उत्पन्न हो जाता है। नेताओंके विश्वासघातके कारण जनता निस्तेज एवं निर्वीर्य बन जाती है। वह स्तम्भित-सी, अपने नेताको अपने स्वार्थोंके बीच खड़ा नहीं पाती। पूँजीवादके प्रतिनिधियों-द्वारा जनताका गला निर्ममता

से काटा जाता है। नेतृत्वहीन जनता नेताओंके विश्वासघातसे बहु-पन्थी विचारोंके जालमें फँस जाती है। पूँजीपति ठहाका मारकर मुनाफे की बेदर्द छुरीकी धारको पैनी करता है और जनताकी इकाईको भङ्ग होते देख, समाजकी गर्दनपर सवार हो जाता है।

तुम्हें अपने जीवनके अवसान-कालमें यह पत्र लिखनेका मुख्य अर्थ है, कि तुम आज विश्वमें, नेतृत्वकी वाणीमें बोल रहे हो ? तुमने अपने देशको उपरोक्त दोषोंसे मुक्त करके जन-जीवनके कल्याणका शान्तिपाठ सुनाया है। तुम्हें चाहिए कि विश्वमें फैले हुए उपरोक्त दोष, तुम्हारे राष्ट्रकी धरतीपर पुनः न फैलें। अपने शान्ति आन्दोलनों द्वारा, जिस प्रकार रक्तकी प्यासी सत्ताको जन-जीवनकी बलि चढ़ाकर सर्वदाके लिये बिदा कर दिया, उसी प्रकार समृद्ध किन्तु हिंसक राष्ट्रोंको उपदेश दो कि वे अहिंसाका मूल्य समझें। विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों एवं सैन्य-बलपर राष्ट्रका सञ्चित धन न व्यय करें। भारतका मार्ग अनु-सरणकर महायुद्धोंको सदाके लिए विश्वसे विदा कर दें।

भौतिक विज्ञानके समृद्ध प्रकरणपर विश्वास करनेवाले क्या यह बता सकेंगे, कि विज्ञान एवं वैज्ञानिक दोनोंने, मिलकर अपनी रचना-द्वारा, अधिकतर संहारक अस्त्रों एवं भौतिक उन्नतिकी चमक-दमक एवं आकर्षकसे स्वरूप दिखाकर, वास्तवमें सर्व-साधारणकी सुख-सुविधाके लिए भी कुछ किया है ?

वह दुनिया अधिक सुन्दर एवं रहने योग्य थी, जिसमें, वैज्ञानिक साधनों द्वारा उत्पादन नहीं होता था। मानवकी सम्पूर्ण रचना मानव शक्तिपर निर्भर थी और इसी कारण उत्पादनके क्षेत्रमें प्रतियोगिता एवं एकाधिकार जैसे विनाशकारी द्वन्द्वोंका कोई बाहुल्य न था। अपनी शक्ति भर काम पूरा करके मनुष्य जो कुछ उपार्जन करता था, उससे न केवल उसकी वरन उसके सम्पूर्ण परिवारके उदर-पोषणकी समस्या हल हो जाती थी, और परस्पर मानवकी उत्तरोत्तर उपासनामें, आज जैसी घृणा,

ईर्षा, द्वेष, कलह, वैर-विरोध, शोषण तथा उत्पीड़नकी विभीषिकामय सृष्टि न थी। भौतिक विज्ञान-द्वारा मानवकी दानवीय पशुता एवं अहङ्कार भरा दर्प बढ़ा है। संसार अनीश्वरवादिताके पथपर अग्रसर होकर, दया, धर्म, त्याग, तपस्या, संयम एवं इन्द्रिय-दमन आदि सद्‌गुणोंको तिरस्कृत कर चुका है। आजके संसारके सामने इन सद्‌गुणोंकी चर्चा करना भी अपराध जैसा सिद्ध हुआ है, किन्तु इसीका घातक परिणाम सारे विश्वको भोगना पड़ रहा है।

अजित! भूलना नहीं। विदेशोंमें भारतके इस दृष्टिकोणको निर्भय होकर व्यक्त करना। भौतिक विज्ञानको चरमोन्नतिका भयावह परिणाम उन्हीं देशोंको अधिक भुगतना पड़ा है, जिन्होंने चार्वाकके मार्ग "खाओ, पियो, मौज करो"—का अनुसरण किया है। जिनकी दृष्टि स्थूल एवं दृश्य-जगतसे ऊँचे उठकर, सूक्ष्म एवं अदृश्य जगतकी ओर नहीं है।

मैं प्रत्येक क्षण आसन्न मृत्युको निकट बुला रही हूँ। यदि कहीं तुम्हारे साथ विदेशोंमें जाती तो मैं अवश्य ही भारतकी उस आध्यात्मिक-विद्याकी चर्चा करती, जिसकी उपासना करते समय भारत गौरवके सर्वोच्च शिखरपर स्थित था, किन्तु जैसे ही भारतका वैदेशिक सम्बन्ध बढ़ा, वैसे ही भारतकी संस्कृति एवं सभ्यतामें संकरत्वके दोष भी प्रवेशकर गये और पतनका सूत्रपात हुआ।"

भारतके नेता! हो सके तो एक बार मेरी मृत्युसे पूर्व मुझसे मिल लेना। तुम्हारे मिलनकी आशामें, जीवनतन्तुको, मृत्युके झटकोंसे टूटते हुए बचानेका प्रयास करूँगी। सम्भवतः मिल सकूँ—संभवतः नहीं।

तुम्हारी
मृणालिनी

पत्र पढ़ते ही अजितको चक्कर आने लगा। उसकी दृष्टिमें तीव्र निराशा एक अन्धकार बनकर छा गयी। किन्तु दूसरे ही क्षण वह साम्राज्ञी

से मिलनेकी सुखद आशामें, देश-विदेशके वैदेशिक कार्यालयोंको भारत लौटनेकी सूचना देकर, समुद्रीयात्रा सम्बन्धी अनेक आयोजनोंमें लग गया।

कहना नहीं होगा कि अजितको जो सम्मान विदेशी सरकारों द्वारा प्राप्त हो चुका था, उसीके परिणामस्वरूप उसकी यात्राका शीघ्र ही प्रबन्ध भी हो गया और विदेशी सरकारों द्वारा, साम्राज्ञीकी अस्वस्थताके कारण, अनेक समवेदना पत्र भी प्राप्त हो गये।

अजित एक विशाल जलपोतमें स्वदेशके लिए प्रस्थान कर दिया। समुद्री मार्गमें, गरजती हुई विशाल जलतरङ्गोंके संघर्षण एवं प्लावनके दृश्य देखते हुए, कभी-कभी अपने जीवनकी समता इन्हीं विप्लवी एवं विस्फोटक तरङ्गोंसे करता और सोचता कि अन्धड़ और तूफानके सदृश ही, उसे भी जीवन संग्राममें, भयावह विप्लवी तरङ्गोंके साथ बहना पड़ा है।

ज्यों-त्यों करके समुद्री-यात्रा भी समाप्त हुई और एक सौभाग्य-शाली दिनमें, अजितने मातृभूमिकी पावन रेणुको स्पर्श किया। अजितके वापस लौटनेकी तिथि ज्ञात थी ही। अस्तु स्वागत साज-सजाकर पश्चिमी साम्राज्यके प्रमुखने विशाल जन-समूहके साथ उसकी अगुआनी ली। एक सफल नेताके रूपमें जनताने अजितके नामके जयघोष उच्चारण किये और अजित अपने पुराने साथियों एवं नागरिकोंसे मिलकर सारा दुःख भूल गया।

अजितने अपने साथी प्रमुखसे जो पहली बात ज्ञात की—वह थी साम्राज्ञीके जीवनके सम्बन्ध की। प्रमुखने बताया कि हालत आशा जनक नहीं। साम्राज्ञी तुम्हारे जानेके पश्चात् निरन्तर एक वर्षसे मृत्युसे लड़ती आ रही हैं। बीमारीका प्रथम आक्रमण ही इतना भयानक था कि कई बार सारे साम्राज्यमें शोकके बादलसे घिर जाते थे, किन्तु ईश्वरेच्छा

एवं जनताकी शुभकामना द्वारा साम्राज्ञीको जीवन प्राप्त होता आया है।

उसी दिन अजित उत्तरी साम्राज्य—राजधानीकी ओर चल पड़ा और शीघ्र ही साम्राज्ञीके सामने उपस्थित हुआ।

साम्राज्ञी और महाअामात्य दोनों दीर्घकाल पश्चात् एक दूसरेसे मिल रहे थे किन्तु पन्द्रह मासकी अवधिके अनन्तर ही दोनोंमें इतना परिवर्तन हो चुका था कि वे एक दूसरेके लिए नव परिचितसे दीख पड़ते थे।

साम्राज्ञी तो हड्डियोंकी कंकालमात्र रह गई थी। रम्भाको लज्जित करनेवाला, विद्युत्-शिखा जैसा मनहर स्वरूप, न जाने किस दुर्भाग्यसे सूखकर काँटा जैसा हो गया था। वह एक डरावने चित्रसी रुग्णशैय्यापर पड़ी जीवनके अन्तिम दिन गिन रही थी। नेत्र कोटरोंमें धँस गये थे! गतिहीन नेत्रकी पुतलियाँ यौवनकी सारी चञ्चलता खोकर वृद्धाकी भाँति स्थिर हो गई थी। जिधर मृणालिनी देखती, वहाँ से दुबारा उसकी दृष्टि शीघ्र ही नहीं हटती थी। वाणीका संगति जैसा सारा माधुर्य खो गया था और उसके स्थानपर सुनायी पड़ती थी एक अति-दीन-क्षीण स्वर-लहरी-बहुत धुँधली—अस्पष्ट सी।

मृणालिनीको बताया गया था कि अजित आनेवाला है किन्तु पश्चिमी साम्राज्यमें उसके आ पहुँचनेकी सूचना पाकर भी मृणालिनीको आशा नहीं थी कि वह इतनी शीघ्र उसके समक्ष आ पहुँचेगा।

अजितने आते ही सर्व-प्रथम राज-माताको अभिवादन किया। ऐसी घोर निराशामें अजितके पहुँचते ही नव-आशा-सी दिखायी पड़ी। बड़े-बड़े गण्यमान चिकित्सक, राज-दरबारी एवं मुसाहिबोंसे अन्तःपुरके बाहरका हिस्सा भरा हुआ था। अजितको देखते ही, सबने उठकर हार्दिक अभिवादन किया। सभीको हृदय एवं गलेसे लगाते हुए अजित अन्तःपुरके उस भागमें पहुँचा, जहाँ मृणालिनीकी परिचर्या एवं मनोविनोद करनेवाली उसकी दासियाँ तथा सखियाँ थीं। अभी-अभी क्षण

भर पहले मृणालिनीको अजितके राज-प्रासादमें आ पहुँचनेकी खबर बतायी गयी थी।

मृणालिनीने रुग्णशैयापर पड़े-पड़े ही, महीनों पश्चात्, एक शुष्क मुसकुराहट द्वारा, अजितके शुभागमनपर, अपनी आन्तरिक प्रसन्नता प्रकट की और स्वयं मसनदके सहारे अर्ध-लेटी हो गयी।

मृणालिनीके सम्मुख आकर, अजितने करबद्ध प्रणाम किया और इसके पश्चात् मृणालिनीके मस्तिष्क एवं मस्तकका स्पर्श कर समीप बैठ गया।

अति मृदुल, किन्तु धीमी वाणीमें, प्रसन्न चित्त हो, मृणालिनी बोली—"आखिर तुम आ ही गये? क्यों?"

मृणालिनी इतना बोलते ही हाँफने लगी। अपने हाथसे पंखा झलते हुए अजित बोला—"क्यों न आता? साम्राज्ञीका आदेश जो मिल चुका था!"

'हूँ'—कहकर व्यङ्ग मुस्कुराहट द्वारा साम्राज्ञी चुप हो गई।

उसी दिन मृणालिनीकी सारी परिचर्याका भार अजितने अपने जिम्मे ले लिया और राज-माताको इस प्रकार आधा निश्चिन्त कर दिया।

सचमुच, चिकित्सकोंके मतानुसार अजितके आगमनने मृणालिनी एवं देशका बड़ा उपकार किया। धीरे-धीरे मृणालिनीकी अवस्थामें शुभ परिवर्तनके लक्षण दीख पड़ने लगे। अजित सारा काम भुलाकर, केवल मृणालिनीकी परिचर्या एवं देख-भालपर ही अपना दिन-रात बिताने लगा। एक ओर अजितकी परिचर्या द्वारा किसी भी तरह की चिन्ता अथवा सन्देह न रह गये। क्योंकि राज-माताको अपनी इकलौती सन्तानके जीवनका प्रत्येक क्षण भय बना रहता था। विशेषकर उन लोगोंसे जो परिचर्याके समय ही घात-प्रतिघात कर सकते थे। द्वितीय यह कि अजित अकेला ऐसा व्यक्ति था, जो अपने ज्ञान भाण्डार द्वारा मृणा-

लिनी जैसी विदुषी एवं सर्वगुण सम्पन्न रमणीका मनोविनोद कर सकता था।

माह दो माह व्यतीत हो गये। मृणालिनी स्वतः उठने बैठने एवं अपनी दिनचर्याके सारे काम करने लगी। अजितकी सेवाने मृणालिनीको जीवन-प्रदान किया। एक दिन बातों ही बातोंमें राजमाता एवं साम्राज्ञी, दोनोंने अजितके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित की। अजित कुछ न बोला क्योंकि अपनी सेवा द्वारा जीत लेना, उसके जीवनका आकर्षक कार्य था। मृणालिनी भर ही क्या, अजितकी सेवाओं द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्र उसका कृतज्ञ था। राज-परिवारको तो एक बार नहीं, वरन् अनेक बार अपना कृतज्ञ बना चुका था।

अजित तो मृणालिनीके उस सौन्दर्य-दर्शनका लालायित था जिस, स्वरूपमें उसे छोड़कर उसने विदेशोंकी यात्रा की थी। वह समय भी आ ही गया—चिर-प्रतीक्षाके बाद—जब कि मृणालिनी पूर्ववत् स्वस्थ होकर, त्रिभुवन मोहिनी जैसी सौन्दर्य-श्री बिखेरने लगी।

एक दिन दोनों, खुले मैदानोंकी ओर, अश्वार नढ़ होकर जा रहे थे। मार्गमें मृणालिनीने कहा—"यदि तुम विदेशोंकी ओर न गये होते तो सम्भवतः मुझे मरण-शैय्यापर महीनों न लेटे रहना पड़ता।"

'तो क्या मैं छिपकर गया था?'

'नहीं! खीझकर, रूठकर।'

'यह कैसी बात?'

'सच है!'

अजित निर्निमेष नेत्रोंसे मृणालिनीको देखने लगा।

'क्यों! मुझे इस प्रकार घूरकर क्यों देख रहे हो, जिससे मुझे नज़र लग जाय?'

अच्छा ! सच बताओ ! क्या देख रहे हो !

'क्या देख रहा हूँ ? देखता हूँ कि जो लोग भोले-भाले होते हैं, उनमें क्रूरता स्वाभाविकतः भरी हुई होती है । क्या मैं पूछ सकता हूँ कि पश्चिमी-साम्राज्यसे लौटकर जब मैं राजधानीमें रहने लगा था, तब तुम्हें किसने वहाँ आनेसे रोका था ? राजधानीकी सम्पूर्ण जनता अपने साम्राज्ञीके शुभ-दर्शनके लिये व्यग्र थी, किन्तु सच बात तो यह थी कि राजधानी आनेपर मुझ जैसे हिंसकको भी, शरद-ज्योत्स्नाको लज्जित करनेवाले स्वरूपके दर्शनका अवकाश मिल जाता ! और सच बात यह थी कि यही तुम्हें पसन्द न था । तुम कब चाहती थी कि मैं भी तुम्हें देख पाऊँ ? इसीलिये मैंने सोचा कि मेरी वजहसे राजधानीकी जनता भी तुम्हारे दर्शनसे वञ्चित रह जाती है और जबतक मैं राजधानीमें रहूँ, सम्भवतः तबतकके लिए तुमने न आनेकी कोई सौगन्ध खा ली हो अथवा प्रतिज्ञा ही इस प्रकार हो ? ''मैं विवश था ! विदेशोंके अति-रिक्त तुम्हारी दृष्टिसे दूर रहनेका मुझे कोई मार्ग ही न सूझा । इसी कारण मैं अपना दायित्व यशवर्द्धन को सम्हालकर चलता बना ।''

'और उस चल बननेकी अवस्थाने मुझे मृत्यु-शैय्यापर पड़े रहनेका अभिशाप भी दे डाला था ! क्यों ठीक है न !''

''बिल्कुल झूठ ! मुझे तो यह ज्ञात होता है कि मैं विदेशोंमें भी शान्तिसे न बैठ सकूँ । इस हेतु ऐसी बीमारीको प्रश्रय दिया गया था ?''

'तो क्या मैं जान-बूझकर बीमार हुई थी ?'

'अवश्य ! यदि तनिक भी सावधानी बरती गई होती, तो इस अवस्था तक दुःख उठाने और स्वस्थ शरीरको विनष्टकर देनेकी कोई मजबूरी ही सामने न आती ! जिस तरह सालों पश्चात् मुझे भयानक बीमारीकी सूचना दी गयी थी, क्या उसी तरह इसके पूर्व नहीं लिखा जा सकता

था ! क्या वर्ष भरसे ऊपर दिन व्यतीत हो चुके थे, मुझे एक साधारण पत्रतकसे नहीं वञ्चित रक्खा गया ! सचाई तो यह है कि मेरे साथ इतना उदार-व्यवहार ही क्यों किया जाता है ? मनसे तो मुझ जैसे हिंसकके प्रति घृणा उत्पन्न हो चुकी थी ।'

व्यङ्ग मुस्कुराहटके साथ मृणालिनी बोली—"मैं तो सचमुच हिंसकों-को देखना तक नहीं चाहती ! किन्तु अवशता तो इस बातकी थी कि तुम जैसे हिंसक ही मेरी जीवन-रक्षाके योग्य थे !"

'तो एक काम करो न ! इतने बड़े देशकी महामहिमा एवं शक्ति-सम्पन्ना साम्राज्ञी तो तुम्हीं हो । आदेश पत्र निकालो कि हिंसकोंको इस राष्ट्रमें कोई स्थान नहीं है । अपने आप बेचारे या तो हिंसाका परित्याग करेंगे अथवा राष्ट्रीय सीमाओंको लाँघकर किसी बिराने देशमें जा बसेंगे ।'

'अच्छी बात है । मैं प्रधान-आमात्यको ऐसी कार्यवाही करनेकी अनुमति देती हूँ ।'

दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े । अजितने कहा—'यदि इस आदेशका कठोरतापूर्वक पालन किया गया, तब तो स्वयं साम्राज्ञीको भी लेनेके देने पड़ेंगे ।'

'क्यों ! साम्राज्ञी तो कोई हिंसा नहीं करती ?'

'सचमुच ?'

'हाँ, सचमुच !'

'तो चलो, मैं दिखाऊँगी कि बिना घातक अस्त्रोंके प्रयोगके ही, कितने अधमरे प्राणी तुम्हारे दावागीर हैं ! माना कि तुमने उन्हें मारनेका कोई प्रयास नहीं किया किन्तु......

'किन्तु क्या ! रहने भी दो, इस वकालतको ! इस प्रकार तो तुमपर भी मेरे अतिरिक्त कितनी ही........'

'किन्तु मैं घोषित हिंसक हूँ जब कि साम्राज्ञी अहिंसाकी आधार-शिला बनकर सारे साम्राज्यमें अपना कीर्ति-स्तम्भ ऊँचा किये हैं।'

इसी प्रकार मनोविनोदकी बातें करते-करते वे दोनों राजधानीकी सीमासे काफी आगे निकल आये। दोनोंने देखा कि सामने ही एक बड़ा मैदान है—हरी-भरी घास एवं साँवले दूर्वादलसे युक्त। सन्ध्या एवं रात्रिकी अभिसन्धि कालमें झाँकता हुआ दिखायी पड़ा चाँद—क्षितिज के कोनेमें प्राची दिशिमें शरद ऋतुके महीने थे। सारा आसमान शुभ्र एवं स्वच्छ था।

प्रकृतिकी नीरव मुस्कान, उस मैदानमें जैसे दोनोंको आकर्षणयुक्त आमन्त्रण द्वारा बुला रही हो।

इसी क्षण शीतल एवं सुरभि युक्तवायु बहने लगी। दोनों अपने-अपने अश्वसे उतरे वृक्षकी शाखाओंके सहारे उन्हें बाँध दिया। मृणालिनी अजितके हाथका सहारा लेकर चलने लगी। दोनोंने देखा कि मैदानके बीचोबीच सङ्गमरमरका एक गोलाकार सुडौल पत्थर पड़ा हुआ है, जैसे साम्राज्ञीके आनेकी बात ज्ञात रही हो और किसीने आसनके योग्य इसी गोल पाषाणको चुना हो।

दोनों जाकर उसी श्वेत सङ्गमरमरपर बैठ गये। मृणालिनीने अपने पाससे सुरभि-युक्त फूलों—बेला, चमेली एवं मौलश्रीसे गुँथा हुआ हार निकालकर अजितके गलेमें पहना दिया।

अजित फूलोंकी सुरभिसे प्रसन्न होकर बोला—''धन्य मेरे भाग्य हैं, जो इन हाथोंसे गुँथे हारको पहननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ।''

मृणालिनी लजवन्ती-सी क्षण भरके लिये सिकुड़ गयी किन्तु दूसरे ही क्षण विनोदयुक्त वाणीमें बोली—''हाँ अजित! अवश्य तुम्हारे भाग्य हैं अन्यथा मुझे कभी हार गूँथनेका जी नहीं होता।''

''तभी तो मैं अपनेको भाग्यशाली मान रहा हूँ।''

'भाग्यशाली क्यों ? क्या अबसे पहले कभी तुमने फूलोंका हार नहीं पहना था ?'

'पहना था किन्तु किसी साम्राज्ञीके हाथका बनाया हुआ नहीं।'

'किन्तु मैं तुम्हारे लिए कोई साम्राज्ञी नहीं हूँ !'

''फिर क्या हो ?''

वह अपने आप अचम्भेमें पड़ गयी। सचमुच ! यदि वह अजितकी साम्राज्ञी नहीं, तब क्या ?

किन्तु दूसरे ही क्षण सम्हलकर बोली—''मैं मृणालिनी हूँ, तुम्हारे लिए।''

''किन्तु साम्राज्ञी भी तो मृणालिनी ही हैं।'' अजीतने कहा।

''हुआ करे ! इससे क्या ? मैं अपनेको प्रत्येक क्षण साम्राज्ञी नहीं मान सकती। अजित, ! उफ, मानव जीवनके परस्पर स्नेहयुक्त सम्बन्धोंसे मुझे बड़ा प्यार है। उन्हें सम्राज्ञीके नामपर मुझसे मत छीनो। अति एकान्तमें, जहाँ अपने पहचाननेवाले न हों, कमसे कम उतने समयतक तो मुझे एक अति मानवी नारीकी तरह मानो। वैसे ही व्यवहार करो। यदि पदकी महत्ताद्वारा मेरे प्रकृतिस्थ अधिकार छीन लिए गए, तब मुझमें मानव जीवनके प्रति क्या मोह एवं आकर्षण होगा ?

मृणालिनीके नेत्र उत्तर देते-देते छलछला आये। अजितने अनुभव किया कि राजैश्वर्ययुक्त होनेपर भी मृणालिनीको जो ब्रह्मकी प्रकृति है, एक अति साधारण मानवकी तरह मानवी सम्बन्धों एवं मानवी-आकांक्षाओंके प्रति सहज ही प्रेम है, आकर्षण है और मृणालिनी साम्राज्ञी बनकर भी, मानवी सम्बन्धों एवं मानवी आकांक्षाओंका निर्वाह चाहती है।

प्रकट रूपमें अजित बोला—'लाओ देखें तुम्हारा हाथ !'

हाथ अजितके हाथमें देते हुए मृणालिनी बोली—'क्या ज्योतिषी भी हो, तुम ?'

'हाँ मैं ऐसा ज्योतिषी हूँ कि केवल भाग्य ही भरकी बात नहीं वरन् हृदयमें उत्पन्न होनेवाली भावनाओंको भी जान लेता हूँ।'

'अच्छा!—कहकर मृणालिनी मुसकुराने लगी और वे क्षणभर पूर्व छलछलाये हुए आँसू भी नेत्र कोरोंमें छिप गये। कुछ देरतक, ध्यान पूर्वक अजित उसका हाथ देखता रहा और फिर मृणालिनीको देखते हुए बोला—"मैं तुम्हें एक सुखकर सूचना देना चाहता हूँ।"

'क्या है वह?'

'तुम्हारे विवाहका शुभ मुहूर्त!'

और कोई बात होती तो मृणालिनी ठहाका मारकर हँस पड़ती किन्तु विवाहका नाम सुनते ही वह उदास हो गयी और उसके प्रसन्न मुख पर वेदनाकी बदली छा गयी। उसने कष्टसे कहा—'यह क्या कहते हो, अजित! जब मैं छोटी थी और किसी ऐसे घरके लड़कीके शादी की बात सुनती, जिनका व्यवहार हमारे राजघर एवं राज-कुलसे रहा हो, तो मैं उस विवाह-मण्डपमें अवश्य जाती और अपने मनमें विचार करती कि जब मेरे विवाहकी बात आवेगी, तो मैं अमुक किस्मका पति खोजूँगी किन्तु जिस घड़ीसे मैं भारतीय साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित हुई हूँ, उसी क्षणसे विवाह करनेकी बात भुला चुकी हूँ!'

अजितको ज्ञात हुआ जैसे उसने मनोविनोदके धोखे किसी अप्रिय प्रसङ्गको उठा दिया हो। किन्तु अब हो क्या? अजितके मनमें जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि मृणालिनी जैसी स्वेच्छा-चारिणी नारी शक्ति, सम्पत्ति एवं सौन्दर्यसे विभूषित होते हुए भी विवाह न करनेकी धारणा अपने मनमें सृजनकर चुकी है, इसका कारण क्या है? क्या कोई इसके जीवनकी प्रेमधारा, किसी अनिच्छित प्रेममयी निराशाकी मरूभूमिमें सूख तो नहीं गयी? अथवा, जिसे इसने प्रेम किया हो या आत्म-समर्पण, उसीने इसके प्रेमको तिरस्कृतकर ठुकरा दिया हो? अथवा इसकी इच्छानुकूल कोई पुरुष-प्रेमी न मिला हो?

अजित यह जानकर भी, कि मृणालिनी 'विवाह' शब्द सुनते ही अनमनी-सी हो गयी है, अन्ततः पूछ ही बैठा—"क्या कारण है, मृणालिनी! कि तुम्हें विवाह शब्दके सुनते ही कष्ट-सा होने लगा?"

'अगर इस भेदको तुम न जानोगे तो क्या कोई हानि होगी?'

'अवश्य!'

'कैसी हानि?'

'जनता की शुभ सम्मति!'

'क्यों?'

'इसलिए कि दीर्घ-कालसे जनता ऐसे व्यक्तियों द्वारा शक्तिशाली होती आयी थी, जिन्होंने धर्मपूर्वक गृहस्थ जीवन व्यतीतकर 'चतुराश्रम धर्म' का पालन किया था और मुक्ति मार्गी बने थे। उनके इन्द्रिय-दमनकी कथाएँ कही जाती थीं। वे लोक-हितैषी बनकर, जीवनकी प्रत्येक अवस्थाको भोगते हुए निर्वाह और चलनका आदर्श उपस्थित करते थे!'

'ठीक बात है, मैं भी अपने पूर्वजोंके सुयशको अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए, जनताके राज-सिंहासनको, व्रत एवं नियमों-द्वारा जीवनकी शुद्धि करते हुए, पवित्र बना रक्खूँगी। मैं यह सिद्ध करूँगी कि जनता-की दृष्टिमें पूज्य एवं पवित्र बने रहनेके लिए आवश्यक है कि हमारा समग्र जीवन समर्पित रहे और हमारे सर्वस्व समर्पणको सारा राष्ट्र ग्रहण करे।'

आज अब तक अजितको ज्ञात हुआ, जैसे वह अबतक कोई मधुर स्वप्न देख रहा हो, किन्तु मृणालिनीके प्रत्युत्तरने उसकी नींद खोल दी है और वह जाग्रत अवस्थामें सुन रहा है कि जन-रंजनके लिये मृणा-लिनी प्रेमके नामपर अपना जीवन न बेचेगी। अबतक वह अजित-के कानोंमें मधुर रागिनी-सी बोलते हुए, चुपचाप मौन सन्देशों द्वारा जो सूचना दिया करती थी, वह मानो अजितके जीवनमें, एक विश्वास बन-

कर किसी भावी शक्तिकी प्रेरणा द्वारा, अन्तर्हृदयमें छिपी हुई अतृप्त-सुप्त भावनाओंको जागृत करा दिया करती थी।

तो क्या, सचमुच, मृणालिनी अजितके जीवनमें एक छलना बनकर तो प्रवेश न करेगी?

अजित भी किसी भावी निराशासे मौन—अवरुद्ध होकर, मानो मृणालिनीकी दृष्टिसे पूछ रहा था कि अबतक जो एक मूक व्यापार-सा हृदयके सन्देशोंसे भरा हुआ, हम दोनों हृदयोंमें, एक दूसरेके प्रति प्रगाढ़ बन्धन-सा, जकड़ रहा था, वह सब क्या किसी नट या जादूगरका झूठा खेल था अथवा दो हृदयोंकी मिली-जुली भाषामें कोई प्रगाढ़ सम्बन्ध था, जो जन्म-जन्मान्तरका साक्षी बनकर नेत्रोंकी खारी-धारामें तैरने लगता था?'

मृणालिनीने शान्ति भङ्ग की। किन्तु आजकी मृणालिनी उन सब दिनोंसे अधिक गम्भीर, अधिक भावमयी थी, जिन दिनोंमें पहले अजित ने उसे देखा था।

वह बोली—'अजित! एक मर्यादायुक्त भोगमय जीवन व्यतीत करनेके लिए विवाहकी आवश्यकता होती है। मैं यह नहीं कहती कि भोगके अतिरिक्त विवाहका कोई मूल्य नहीं। विवाह तो एक प्रकारका धर्ममय बन्धन है, जहाँ नारी-पुरुष एक दूसरेको परस्पर सर्वस्व समर्पण कर देते हैं। दो शरीर और एक जीव जैसा दोनोंका निर्वाह दीख पड़ता है। सृष्टि उत्पादनका कार्य भी नारी-पुरुषको जीवन-धर्म समझकर करना पड़ता है। दोनों एक दूसरेके जीवनसङ्गी एवं जीवनपूरक हैं। इसी कारण लौकिक मर्यादाओंका धर्मपूर्वक पालन करना भी विवाहित जीवनसे सम्बन्धित है और लोक-परलोक दोनोंमें नारी-पुरुषका सहयोग रहता है। किन्तु हर स्त्री और हर पुरुषके लिए आवश्यक नहीं कि विवाहके ही जटिल बन्धनमें फँसें और जीवनमें सम्मीहित होनेवाले महत्वपूर्ण कर्तव्योंसे केवल इसलिए वञ्चित रहें कि वह विवाहित है!'

'हाँ मैं मानता हूँ मृणालिनी कि तुम वैवाहिक जीवन बिताते समय पतिकी सेवामें तत्पर रहोगी अर्थात् स्पष्ट सेवासे दूर हो जाओगी किन्तु मानवी जीवनमें वैवाहिक जीवनका महत्व इसलिए भी है कि यदि हम साधु-पुरुषों जैसे कठोर एवं इन्द्रिय दमनकारी न बन पाये क्योंकि प्रकृति को जीतना एक दुस्तर कार्य है। नरसे नारायण बनने जैसा और तब हमारा पतन निश्चित है। उस समय हमारे द्वारा सामाजिक नियमोंकी कठोर शृंखलाका तोड़ना भी भयप्रद होगा। इसलिए भी विवाह आवश्यक है किन्तु जो सबसे पेंचीदी बात है, वह तो मानो प्रकृति द्वारा स्वयं उत्पन्न होती है। वह है नारी-पुरुषका स्वाभाविक आकर्षण, जो मोहका संसार खड़ाकर देता है। इसे तुम कैसे तोड़ोगी! मृणालिनी!'

'मैं नहीं जानती, स्वाभाविक आकर्षणका तोड़ना क्या है? अजित! इस बलासे मैं भी हार गयी हूँ किन्तु आकर्षण एवं प्रेमके मधुर बन्धनमें बँधी हुई भी मैं अपने राजकीय कर्तव्योंकी कभी भी अवहेलना न करूँगी और न्यायका पालन करनेके लिए मैं जीवनकी बाजी लगाऊँगी। इसीलिए आवश्यक है कि मैं स्वतंत्र रहूँ। दूसरोंके हाथ अपने जीवनको न बेचूँ।

'बस, इतना सा ही कुल कारण! नहीं मृणालिनी! अभी भी उन कारणोंको छिपा रही हो, जो मेरे नेत्रोंने अभी-अभी तुम्हारे मुख पर अंकित होनेवाले भावों द्वारा देखा था! सत्यपर परदा क्यों?'

'कभी-कभी नग्न सत्य कुरूप एवं अहितकर भी हो जाता है, अजित। [illegible]म सत्यके उद्घाटन द्वारा अनेक विपत्तियाँ उठ खड़ी होती हैं अतएव सत्यको छिपाये रखनेके लिए गोपनीय हृदयकी आवश्यकता होती है।

अजित जितना ही, मृणालिनीके अन्तर हृदयको कुरेदता जाता था उतनी ही गोपनीय मृणालिनी इस प्रसङ्गको बनाती जा रही थी। अजित

डर रहा था कि कहीं अधिक जानकारी करनेकी प्रवृत्ति द्वारा किसी प्रकारका मनोमालिन्य न उपस्थित हो जाय। अन्तमें उसने निराश स्वरमें कहा—'जाने भी दो, साम्राज्ञी! जब तुम्हें यह विषय ही अरुचिकर प्रतीत होता है तो बहुत संभव है कि अधिक गुदगुदानेपर रुलाई न आ जाय।'

मृणालिनीने देखा कि ऐसा कहते-कहते एकाएक अजितका मुख मलिन पड़ गया। मृणालिनी उसकी भावना ताड़ गयी। वह प्रिय शब्दोंमें बोली—'अजित! तुम इस विषयमें विशेष आग्रह क्यों करते हो?'

'क्योंकि राजमाता कई बार रोककर, मुझसे तुम्हारा मन्तव्य जानने की इच्छा प्रकटकर चुकी हैं।'

'बस, इतनी ही बात!'

'हाँ।'

'तो सुनो जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूँ, मेरा विवाह तभी संभव है, जब जनताकी सेवाका व्रत अक्षुण्ण बना रहे।'

अजितके मुखपर आशाकी बिजली-सी कौंध उठी। उसने कहा—'यह तो ठीक है। जब तुम स्वयं साम्राज्ञी पदपर प्रतिष्ठित हो, तब तुम्हें जनताकी सेवा करनेसे रोक कौन सकता है?'

'मेरा भावी पति!'

'वह कैसे?'

'बड़ी स्वाभाविकतासे! जो मेरा भावी पति बनेगा, कमसे कम उसे मेरे सहयोग एवं सहवासकी आकांक्षा तो करनी ही पड़ेगी, किन्तु तुम सोच सकते हो कि आज जब राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भर ही नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक परिस्थितियाँ अधिक जटिल, अशान्तमयी एवं गृह-युद्धों तथा विश्व-युद्धकी धमकियोंसे भरी पड़ी हैं, तब दाम्पत्य जीवनका निर्वाह करना कठोरतम कर्तव्य होगा!'

'छिः तुम कैसी लड़कपनकी बातें करती हो ! आजका युग वह युग है, जब नारी समानताका नारा लगाती हुई, राष्ट्र-रक्षा करनेमें, पतिसे एक पग पीछे न रहेगी। स्त्रियाँ आज रणक्षेत्रमें पुरुषोंकी वीरतासे लोहा लेती दिखायी पड़ती हैं। रणक्षेत्रमें कंगन बँधते हैं और पुरुषकी भाँति ही रमणी भी सोहागरातकी प्रतीक्षा न कर शत्रु पर आक्रमण करनेकी योजनामें संलग्न रहती हैं।

'क्या ऐसे एक भी उदाहरण दे सकते हो ?'

'अनगिनती ! सारा पाश्चात्य जगत रण-लिप्साकी अभूतपूर्व कथाओं से भरा पड़ा है। वहाँ नारी मोहमयी बनकर पुरुषके पावोंकी बेड़ी नहीं बनती, बल्कि केकयीका आदर्श उपस्थित करती है। वह आगे बढ़कर पतिको शस्त्रास्त्रों एवं रक्षा कवच द्वारा अजेय बनाती है। वह राष्ट्रपर सर्वस्व उत्सर्ग करनेकी प्रेरणा देती है। यह है आजकी नारीका सम्मानित एवं गौरवपूर्ण महत्व !'

मृणालिनी मुसकुरा पड़ी और मीठे व्यङ्ग भरे शब्दोंमें बोली—"ओहो ! आज तो तुम स्त्रियोंके चारण बन रहे हो। ज्ञात होता है कि तुम्हारे हृदयमें नारीकी उत्कट आकांक्षा जाग्रत हो चुकी है।"

अजित सचमुच कुछ झेंप-सा गया किन्तु उड़ती भाषामें बोल उठा—'अवश्य मृणालिनी ! मुझे नारीकी प्रशंसा करनेमें आत्मिक आनन्दका अनुभव होता है। शर्त यह है कि ऐसी शुभ-लक्षण सम्पन्ना नारीका सहवास प्राप्त हो !'

'कैसी ?'

'जैसी तुम हो !—बिजुलीकी चमक-सी बात निकल गयी।'

मृणालिनीने रम्भा जैसी मोहक दृष्टि अजितपर डाल दी। अजित बिक गया, लुट गया।

जिस बातको वह वर्षोंसे मुँहके बाहर निकलने नहीं देना चाहता था, वह आज सहसा, अलि एकान्तमें, शिकारीके तीर जैसी निकल पड़ी।

दूसरे ही क्षण अजितने अपनी जीभ काट ली, किन्तु अब क्या हो सकता था !

मृणालिनी अब भी अपनी मादकदृष्टिसे अजितको मदहोश करती जा रही थी। अजितका चकोरचित्त अचञ्चल दृष्टिसे, मृणालिनीका रूप-रस, भ्रमर-नेत्रों द्वारा पी रहा था। वह पिलाये जा रही थी, अजितको विस्मृत किये हुए।

मुखरित वाणी मौन हो चुकी थी। दोनों निर्निमेष थे ! हृदयके अन्तरालसे उठ रही थी उद्वेलित लालसा तरङ्गे ! हृदयकी दूरी, अन्तर-मिलन द्वारा शून्य थी। वे युग-युगके प्यासे, अनमोल प्यारकी मादक लहरियोंपर, चिर-अतृप्तिके गीत गाते तैर रहे थे। उन मूल्यवान क्षणोंमें अमित प्यारकी सौगात बँट रही थी। वे झोली भर रहे थे तन्मय होकर !

उसी क्षण आम्रकुञ्जोंसे कूक उठी, कोयल ! मानों, वह युगुल प्रेमियोंकी चिरदूती-सी प्रणय-साक्षी बनकर, प्रकृतिको सर्वस्व-समर्पणका सन्देश दे रही थी।

दोनोंकी प्रणय-समाधिको, कोकिलने भङ्गकर दिया। दिवारात्रिके उस अभिसन्धि कालमें, कम्पित स्वरसे मृणालिनी बोल उठी—'अजित ! आजके ये कोमल क्षण कितने मधुमय, कितने मादक हैं !'

'क्यों न हों मृणालिनी ! हम दोनोंके जीवनमें चुपचाप, अनजाने ही प्रेम-देवता अपनी वरद मधुरिमा प्रदान करने आये हैं न !'

'और साथ ही अजितको पराजित करने !'—मधुर व्यङ्गमें मृणा-लिनी बोली—

'किन्तु इस पराजयमें भी तुम जैसी प्रियाको प्रदान करने।'

अजितने मृणालिनीके कोमल-कर-पल्लवोंको थाम लिया और प्रेमसे चूमते हुए बोला—'चलो साम्राज्ञी ! हम दोनों राजमाताके समीप चलें।'

अजितका सहारा लेकर उठते हुए मृणालिनी बोली—

'कहीं आजकी भाव-भङ्गिमाद्वारा, माताजीको भेदका पता न लग जावे !'

'तो इसमें डरनेकी क्या बात ! वे तो चिर-प्रतीक्षाद्वारा अनायास ही व्यग्र एवं व्यथित रहा करती थीं। आज यदि उन्हें साधारण सन्देह भी हो जावे, तो उनके आनन्दकी सीमा न रहेगी।'

दोनों उठकर राज-महलकी ओर चल पड़े। दोनों ही अभूतपूर्व प्रेमोन्मादमें समाधिस्थसे राज-मार्गपर चल रहे थे। कभी किसी बातपर अचानक 'हाँ' 'ना' के अतिरिक्त और कुछ कहना आत्मीय अनुभूत सुखके साथ घात करनेजैसा था।

चलते-चलते दोनों राजप्रासादके प्रवेशद्वारके भीतर घुसे। साम्राज्ञी एवं प्रधान आमात्य जनता एवं राजकीय कर्मचारियोंका अभिवादन स्वीकार करते हुए सीधे राजमाताके समीप जा पहुँचे। मृणालिनीको प्रसन्नमुद्रामें पाकर राजमाता अति आनन्दित हो उठीं। शायद आज जैसी प्रसन्न मुखमुद्रा राजमाताने वर्षों पूर्व देखी हो किन्तु इधर निरन्तर मृणालिनी अति गम्भीर मुद्रामें दिखलायी पड़ा करती थी।

राजमाताने महा-आमात्यको सम्बोधित करते हुए कहा—

'आज तो तुम्हारे सहवासमें मृणालिनी मुझे उस तरह दीख पड़ी जैसी साम्राज्ञी होनेके पूर्व, महाराजके जीवन-कालमें, अल्हड़पनके साथ प्रसन्न रहा करती थी।'

'हाँ, राजमाता ! आज साम्राज्ञीने अपने बीते शैशव एवं किशोरावस्थाके समान वही अतीतकालकी निश्चिन्त सुख-मुद्रा प्राप्त कर ली है।'

'और तुम्हें भी सम्भव वे दिन याद आ रहे हों, जब विद्यार्थी बनकर ज्ञानार्जन करने जाया करते थे।'

'अवश्य साम्राज्ञी ! आज उन दिनोंकी बीती यादगारें वही प्रसन्नता

एवं सुख प्रदान करती हैं। जी में लगता है कि बड़े-बड़े दायित्वोंका ध्यान न करूँ।'

राजमाता दोनोंको इस प्रकार पूर्ण-प्रसन्न देखकर खिल उठीं। दोनोंके लिए जलपान मँगाया और स्वयं अपने हाथों उन्हें परोसकर खिलाने लगीं। बातोंका सिलसिला चलता रहा। राजमाता बोलीं—'मृणालिनी! आज मेरा कहना मान!'

''क्या कहना''—विनोद युक्त बनावटी क्रोध दिखाकर मृणालिनी बोली—

''यही कि तू विवाह कर ले!''

'अच्छा कर लिया।'....खूब खिलखिलाकर मृणालिनी कह उठी। अजित मुसकुराते हुए मृणालिनीको देखता रहा और राजमाताकी आन्तरिक इच्छा जानकर वह बोला—'राजमाता! साम्राज्ञीने सचमुच, विवाह स्वीकारकर लिया है किन्तु........'

अजित बात पूरी भी न कर पाया था कि मृणालिनीने एक उड़ता हुआ छोटा सा कीड़ा पकड़कर अजितके ऊपर फेंक दिया और बोली—किन्तु की जगह लो यह 'जन्तु'।'

अजितकी बात गम्भीर होकर भी मनोविनोद द्वारा उड़ा दी गई। किसने उड़ाया? उसी साम्राज्ञी एवं अजितकी पूर्व परिचित मृणालिनी ने।

हास-परिहासके बीच दोनोंको मनोविनोद करता हुआ छोड़कर राजमाता अपने शयन कक्षमें पहुँचीं और दूसरे ही क्षण चित्रोंका एक बड़ा सा 'संग्रह' लिये हुए लौट आयीं।

मृणालिनी तो राजमाताके मनोभावोंसे परिचित थी, अतः वह मुसकराती हुई चुप बैठी रही, किन्तु अजितने उत्सुकतापूर्वक वह ''संग्रह

अपने हाथमें ले लिया और चित्रोंको पलटते हुए अनेक राजवंशोंके राजकुमारोंके सपरिचय-चित्र देखने लगा।

राजमाताने कहा—'तुम देख सकते हो, इस चित्रावलीमें देश-विदेशके राजकुमारोंके चित्र, आयु एवं वंश परिचय आदि सभी अङ्कित हैं। मैं उक्त चित्रावली कितनी ही बार राजकुमारीको दिखा चुकी हूँ किन्तु राजकुमारी राजकुमारोंपर व्यंग आक्षेप करनेके अतिरिक्त कभी अपनी स्वीकृति नहीं प्रदान कर सकी। पता नहीं, वह इन राजकुमारोंमेंसे किसीके साथ विवाह करना स्वीकार करेगी भी या नहीं।'

अजित मृणालिनीके उत्तरकी प्रतीक्षामें उसीका मुख देखने लगा किन्तु मृणालिनीने राजमाताको सम्बोधित करते हुए कहा—'माँ! इन राजकुमारोंका चित्र तू हर किसीको दिखाया करती है, किन्तु एक बार नहीं, अनेक बार मैं इन्हें फूँटी आँख देखना भी अपना अपमान समझती हूँ। वंश प्रतिष्ठाको स्थापित रखनेके लिए आवश्यक है कि मैं विवाह करूँ और विवाहमें पति-देवताके रूपमें यह निकम्मे एवं भ्रष्ट राजकुमार हैं, जिन्होंने प्रारम्भिक जीवनसे ही विलासिताकी उपासनामें आत्म-पतन एवं आत्म-विनाशकर डाला है। इन प्रत्येक राजकुमारोंके स्वभाव एवं आचरण आदिके सम्बन्धमें जो सूचनाएँ मैंने एकत्रित की हैं, उनकी जानकारी रखते हुए, कोई भी स्त्री इन्हें अपना पति नहीं संवरणकर सकती और मैंने तो इनके प्रेम-पाशमें बँधनेसे अधिक उपयुक्त मार्ग चुना है, मृत्युके पाशमें बँधकर जीवनको आत्मसात् कर देना।'

राजकुमारीने चित्र 'संग्रह' की ओरसे अपनी दृष्टि फेर ली। अवश्य ही मृणालिनीके नेत्रोंमें चमक उठी, घृणा एवं विरक्ति। अजितने वह मनोभाव देखे, जिसमें अवशता छटपटा रही थी।

राजमाता क्रुद्ध स्वरमें कह उठीं—'मृणालिनी! यदि तेरा यह निर्णय रहा, तब तू अपने जीवनमें कभी सुखी न रह सकेगी।'

'माँ न सही सुख, किन्तु मेरे मनका घना दुख भी तो कोई छीन नही सकता।'

'अवश्य! तेरे भाग्यमें दुख ही दुख बदा है। इन राजकुमारोंमें कई तो इन्द्रके समान सुन्दर, प्रभावशाली एवं शक्ति सम्पन्न हैं किन्तु ज्ञात होता है जैसे तेरी रुचिके योग्य विधाताने पुरुषकी सृष्टि ही नहीं की।'

अजितको ज्ञात हुआ, जैसे राजकुमारोंके साथ विवाह करनेके लिए राजमाता दृढ़ संकल्प किये बैठी हों और मृणालिनी? वह ठीक राज-माताके निर्णयके विपरीत हो।

राजमाताने बल देकर अजितसे कहा—'महा-आमात्य! यह तुम्हारा कर्तव्य है कि स्वर्गीय सम्राटकी कीर्ति अक्षुण्ण बनी रहे। मुझे कभी-कभी डर लगता है जैसे मृणालिनी वंश-परम्पराके विपरीत आचरणकर रही है। सगे-स्वजनोंद्वारा प्रत्येक वर्ष अनेक सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनमें प्रायः मृणालिनीके विवाहादिके सम्बन्धमें चिन्ताएँ प्रकट की जाती हैं किन्तु मृणालिनी इस विषयपर कभी कोई बात नहीं करती। प्रसंग आनेपर सारा दायित्व मुझपर छोड़ देती है। मैं किसी सगे-स्वजनको मृणालिनीकी इच्छा ज्ञात नहीं होने देती, किन्तु प्रश्न यह है कि मैं छिपा-ऊँगी कबतक?'

'छिपानेकी बात ही क्या है?' गम्भीरतापूर्वक मृणालिनी बोली—'वंश परम्पराके अनुकूल मेरा विवाह उन राजघरानोंमें होना चाहिए, जहाँ अतीतकालमें मेरे वंशकी राजकुमारियाँ ही गयी हैं, किन्तु मैं अपना जीवन उन बहुपत्नी सेत्रियोंके हाथ नहीं बेचना चाहती। आज उन राज-वंशोंकी एक ओर तो शासन-सत्ता छीनी जा चुकी है। दूसरी ओर सर्व-साधारणमें उनकी कोई प्रतिष्ठा नहीं है। भले ही अतिसंग्रहके पापके कारण वे लोग कुबेर जैसे कोषके स्वामी हों, किन्तु केवल धन या उच्च

कुलका अहंकार भरा हो तो गौरव नहीं है, राजवंशोंके गौरवकी बात थी, धर्मद्वारा प्रजा रञ्जन। किन्तु ऐसा अनुकरणीय आदर्श शासन तो पौराणिक कथाओंकी चर्चाका विषय बन गया है और राजपरिवार निकम्मे भ्रष्ट एवं शोषक बन गये हैं इसी कारण एक ओर आदर्श शासन, दूसरी ओर चारित्रिक पवित्रताका व्रत ही मेरे जीवनका सर्वस्व बनकर रहेगा। मैं विषयी राजकुमारोंकी अंकशायिनी बनकर, अपना जीवन कलंकित करना नहीं चाहती।

बीच ही में बात काटते हुए राजमाता बोल उठी—'किन्तु क्या अविवाहित जीवन बिताकर, तू अपनेको निष्कलंक बनाये रख सकेगी?'

'अवश्य! कलंक स्वीकार करनेके स्थानपर अपनी मृत्यु अलबत्ता स्वीकार करूँगी।'

माता-पुत्रीमें अप्रिय विवाद उठ खड़ा होनेके कारण राजमाता रुष्ट होकर चली गयीं। घण्टे भर पूर्वकी प्रसन्नता अजित और मृणालिनी, दोनोंके हृदयोंसे विदा हो गयी।

आज प्रथम बार अजितने अनुभव किया कि क्यों मृणालिनी विवाह-सम्बन्धी वार्तासे खिन्न हो जाया करती थी। प्रसन्नताका स्थान विषाद ले लेता था। मृणालिनी आज द्वादश वर्षीय ऐसी बालिका नहीं जो कौमार्यावस्था छोड़ते हुए यौवन पथपर पदार्पण करती है बल्कि मृणालिनी उन बहुतसी स्त्रियोंमेंसे अकेली है जो यौवन वसन्तके आनेपर ही व्यथामग्न हो जाती है। मृणालिनी उद्दाम-वासनाकी परितृप्तिके लिए विवाह नहीं चाहती। वह तो वासनाकी ज्वालाको संयम की प्रखर-धारा में शान्त करती है। वह ऐसी नारी नहीं, जो यौवन पाते ही पतिपरायणा बनती हैं। वह ऐसी नारी भी नहीं, जो गुरुजनोंकी कृपा भाजन बननेके लिए चुपचाप आत्म समर्पणकर देती है वह तो ऐसी नारी है, जो जीवन को गौरवान्वित करनेके लिए वैयक्तिक एवं शारीरिक सुखोंपर लात मारती है। वह आदर्शकी उपासनामें जीवनकी बलि देना चाहती है। वह

पतिको समष्टिकी सेवा व्रतमें आरूढ़ देखना चाहती है। क्योंकि राजवंशोंको गौरवान्वित करनेवाले राजकुमार, आज विषय-सुखोंकी परितृप्तिमें ही अपने जीवनकी महत्ताका अनुभव करने लगे हैं और ऊँचे भोग-विलासोंमें तल्लीन रहना ही उनकी दिलचस्पी है। इस कारणसे भी मृणालिनीको राजपुरुषोंमें कोई आकर्षण नहीं, प्रत्युत घृणा है। वह साधारण जन-सेवकको राजपुरुषसे अधिक महत्व देती है। लाखों-करोड़ों व्यक्तियोंके हितचिन्तनमें लगा हुआ अजित जैसा व्यक्ति, इन्द्रके समकक्ष विलासितामें पगे राजकुमारसे अधिक महत्वशाली है। हाँ, मृणालिनी यदि माताके इच्छाओंकी उपेक्षा करती है, तो अपनी भी उपेक्षा करती है। यदि वह माताकी इच्छानुकूल पतिका संवरण नहीं करना चाहती तो स्वेच्छासे भी वह किसीको अपना पति संवरण न कर सकेगी।

अजितने माँ बेटीके विचारोंको एक दूसरेके विपरीत पाया और अनुभव किया कि राजमाताके कारण ही मृणालिनीको जीवन संगीके सहयोगका सुख न प्राप्त हो सकेगा, किन्तु वह जो स्वयं मृणालिनीके जीवनमें अपनी अमिट छाप अंकितकर सका है, वह भी एक विभीषिका है। प्रेमके नामपर आत्म-प्रतारणा जैसा कठिन क्लेश है। जिसे चुपचाप सहना होगा। ऐसे प्रेमका प्रकाशन तो मृत्युको आमन्त्रण देनेके समान है और सम्भवतः मृणालिनी इसी कारणसे आत्म-प्रेमको इतना गोपनीय बनाये हुए है कि वह कृपणके धनकी भाँति दुर्भेद्य मनोभावोंके अन्तरालमें छिपा हुआ अपनी शून्यताका परिचय देता है। प्रेम मानव जीवनकी दुर्बलताकी भाँति विरासतमें देना, अपार वेदनाओंकी टीस ऽलन, अनिवार्य उद्भ्रान्ति, उत्पीड़न एवं अपलक चर्म-चक्षुओंमें प्रियतम प्रतीक्षाकी आकुल-दर्शनोत्सुकता।

आज जिन बातोंको भूलसे भी मृणालिनीने न प्रकट किया, वे आग्रहद्वारा अपने-आप ज्ञात हो गयीं। मृणालिनीकी गम्भीरता और आज

तक एक परदा पड़ा था, वह वंश-परम्परागत रूढ़ियोंके कठोरपाश द्वारा अपने-आप प्रकट हो गया।

मन ही मन अजितने मृणालिनीके साहसकी प्रशंसा की। मृणालिनी अब भी चुप थी। होठोंमें हलकी-हलकी मुसकुराहट और नेत्रोंमें नारी-सुलभ लज्जाकी अचञ्चल छाया किन्तु अन्तरतममें मन्थन हो रहा था। अभी-अभी जिन कोमल कामना व्यक्तियोंमें नव आशाकी कलियाँ खिलनेवाली थीं, वे राजमाताकी दृढ़ निश्चय भरी परम्परागत वैवाहिक प्रणालीद्वारा, मानों, निदाघकी लू की थपेड़ खाकर झुलस रही थीं, किन्तु अन्तर्द्वन्द्वके चलते हुए भी मृणालिनीके मानसकी दृढ़ता अक्षुण्ण थी।

तीनों, राजमाता, अजित एवं मृणालिनी मौन थे, किन्तु तीनोंके हृदयमें एक हलचल मची हुई थी; ठीक उस ज्वालामुखीकी भाँति, जो अपने उद्गारोंको रोके हुए अन्दर ही अन्दर जलता रहता है पृथ्वीके गर्भमें विशाल-शिला खण्डों एवं पर्वतीय-शृंगमालाओंको भस्मकर डालता है।

अजित एकाएक जानेको उद्यतसा हो गया। उसने राज-माताको कर-बद्ध अभिवादन किया। राजमाता अजितको जाते हुये देखकर बोल उठीं—"अजित! मैं तो समझाते समझाते थक गयी हूँ किन्तु इतनेपर भी राजकुमारी अपनी ज़िद्दपर चट्टान-सी अटल है। यह एक मर्यादाका प्रश्न है। इसे सुलझना ही चाहिए और गुरुजनोंद्वारा किया गया निर्णय मृणालिनीको मान्य होना ही चाहिए।"

अजित राजमाताके मुखसे निकले हुए वाक्योंको चुपचाप सुनता रहा—उसने जाते समय केवल इतना ही कहा—'साम्राज्ञी स्वयं ज्ञान सम्पन्ना हैं। जो दायित्व आज उनपर डाला गया है, उसकी यथार्थताका बोध स्वयं उन्हें है। यदि वे इस सम्बन्धमें कुछ भी विचारोंका आदान-प्रदान करेंगी तो, मैं सहर्ष अपना मन्तव्य प्रकट करूँगा।'

अजित राजप्रासादसे लौटकर राजकाजमें लग गया। मृणालिनी

चुपचाप शयन कक्षमें जाकर लेट गयी। बड़ी कठिनाईके पश्चात् अजितकी सेवा एवं सहवासने मृणालिनीको स्वास्थ्य प्रदान किया था किन्तु माताकी जिद घुनकी तरह पुनः मृणालिनीके हृदयमें एक रोग और एक प्रतिज्ञा बनकर घरकर गयी। वह धीरे धीरे जिस रोग-शय्यासे मुक्ति पाकर स्वास्थ्य लाभ करने चली थी, वह सब मानों पुनः एक आपत्ति बनकर, चुपचाप मृणालिनीके जीवनमें प्रवेश करने लगे।

३

अजितका जीवन राष्ट्रसेवा जैसे महान् उद्देश्योंके लिए समर्पित हो चुका था। विद्यार्थी-जीवनसे सफलताओंके साथ बिलग होते समय अजितको भान हो चुका था कि भारत जैसे युगोंसे पद दलित देशकी समुन्नतिके लिए भारतकी कोटि-कोटि सन्तानोंको एक व्रतके साथ पिल पड़ना होगा और तब रचनात्मक-सेवाओं द्वारा ही समृद्धिका मार्ग प्रशस्त बनेगा।

एक सफल राजनीतिज्ञ की भाँति, अजितने वर्ग-संगठन द्वारा, राष्ट्रके शासनकी बागडोर प्रतिक्रियावादी हाथोंसे छीनकर, जनसाधारणके हाथों सौंप दी। जहाँ उसने वर्ग संगठन किया, वहीं दूसरी ओर वर्ग-विद्वेषकी हिंसक आँधीको भी राष्ट्रके प्राङ्गणसे निर्मूलकर दिया। अन्य देशोंकी भाँति वर्ग विद्वेषकी विनाशकारी ज्वालामें सर्वस्व होम जाता किन्तु अजितने सामूहिक हिंसाको उत्तेजन न देकर सामूहिक रचनाको विकसित किया और सम्पूर्ण राष्ट्रको श्रमिक शक्ति द्वारा, हो, राष्ट्रकी नवोदित सत्ताकी रक्षा करते हुए, प्रति-क्रियावादको पराजितकर दिया और जब अन्य राष्ट्रोंने 'तू तू, मैं मैं' की आँधीमें बहना प्रारम्भ किया, तब अजितने राष्ट्रकी समग्र-शक्तिको

एकता सूत्रमें पिरोकर, नव-रचना द्वारा जर्जर राष्ट्रकी काया पलटना प्रारम्भ कर दिया।

यह सब कुछ जब ठीक-ठीक चलने लगा, जब राष्ट्रकी पञ्चायती सरकारें जनताके जीवनसे हिल-मिलकर दुःख-दैन्यको भगाने लगीं और अजितको अनेक अशान्तियोंसे मुक्ति मिली। तब अजितका ध्यान राष्ट्र सेवा करते हुए भी, अपने जीवनकी ओर मुड़ा। स्नेह-प्रेमका भूखा जीवन, अपनी अनेक विपत्तियाँ भूलकर, किसी ऐसे आश्रयकी खोजमें भटकता रहा, जिसके सहारे वह क्षण भर चिरशान्तिकी उलझन भरी जटिलताओंसे अवकाश पाकर सुखकी नींद सो सके। उसने सच्ची सेवाओं द्वारा मृणालिनीको एक साथीके रूपमें पाकर शान्तिकी श्वाँस ली किन्तु चूँकि अजित मध्यम-वित्त वर्गीय परिवारमें जन्म पाकर भी, निम्न वर्ग-वालोंकी भाँति सदैव जीवन-सम्बन्धी अनेक अभावोंकी प्रतारणामें अपनेको घसीटता रहा। इसलिए मृणालिनीके सुखद सहवासके अतिरिक्त उसे और कुछ पाना अरुचिकर था। हाँ, राजमाता मृणालिनी और उसकी नव-आकांक्षाओंके समक्ष याचक बनकर खड़ी थीं। दोनोंकी संयोगके क्षणोंमें वियोगकी भावी आशङ्काकी मृग-मरिचिका तरस उठी—जलने लगी।

कभी-कभी रह-रहकर अजितको याद आता था, अपना अतीत, जिसमें एक निष्फल जीवनकी जी-तोड़ झाँकी थी। निराशा-अवसाद था और बन-बन बिगड़नेवाली भाग्यकी असफल रोमांचकारी कहानी। पक्षीके नीड़की भाँति, ललककर रहनेके लिए मिट्टीके घरौंदोमें सर्वनाशी पागल प्रहार करनेवाले तूफानकी अनिश्चित आशङ्का!'

प्रायः अजित सोचा करता—उफ, मानव! तू अपने सुखके लिए क्या नहीं करता! अपनी अट्टालिका सजाकर, करोड़ों झोपड़ियोंको बावले तैमूरकी तरह अग्नि ज्वालाओंकी भेंट चढ़ा देता है। अपनी औलादको

इन्द्र जैसा सुखी बनानेके लिए करोड़ों मरभुखोंकी सन्तानको, मृत्युकी विभीषिकाका क्रूर दर्शन करनेके लिए सर्वनाशका चल-चित्र दिखलाता है। धँसी हुई आँखें, उभरी हुई हड्डियाँ, झूलती हुई रक्तहीन-घिनौनी मांसकी तसवीरें दिखाकर अति संग्रहके पापकी गाथाको सामने प्रस्तुत कर देता है।

और तब ?—इस पापका प्रायश्चित्त करनेके लिये समग्र राष्ट्र सचेतन होकर, मूल्यवान बलिदान द्वारा नव-व्यवस्था स्थापित करता है, जिसका प्रमाण यही युग और इसी युगके शोषित निवासी हैं किन्तु मुट्ठी भर स्वार्थी धनलोलुपों द्वारा सर्वनाशका आमन्त्रण कितना हृदय-हीन व्यापार है ! कितना निर्दय !

जहाँ एक ओर अजित व्यक्तिगत दुःख-दैन्यका चिरभोगी होते हुए, समग्र-राष्ट्रके दुःख-दैन्यको नव-रचना द्वारा दूर भगानेके नव-प्रयत्नमें तल्लीन था, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रकी आर्थिक विषमताओंको नये विधान द्वारा उलटकर, समाज और राष्ट्रमें आर्थिक सन्तुलन स्थापितकर रहा था। सारे क्रान्तिकारी परिवर्तन इस प्रकार अपनी अमिट छाप राष्ट्रपर डाल रहे थे कि सर्व-साधारणसे लेकर स्थापित स्वार्थोंवाले व्यक्ति भी इच्छानुकूल उलट-फेर स्वीकार करते जा रहे थे। अजितके नेतृत्वकी विशेषता थी कि घृणा, द्वेष एवं हिंसाको प्रोत्साहन न देकर, राष्ट्र-प्रेम, राष्ट्र-सेवाके व्रतको लेकर ही सारे सम्भव परिवर्तन किये जा रहे थे। कभी-कभी अजितको बोध होता था जैसे यन्त्र चालित सा समग्र राष्ट्र उसके सुधारों एवं योजनाओंको अपनाये हुए, बहुमुखी उन्नतिमें तल्लीन है। केवल मुट्ठी भर शोषकवर्ग, जो अपने फौलादी पञ्जोंसे समग्र राष्ट्रकी आर्थिक व्यवस्थाको जकड़े हुए, अजितके घोर विरोधी बने हुए थे, उन्हें भी अजितकी निःस्वार्थ सेवापर विश्वास हो चला था और राष्ट्रकी गरीबी बढ़ानेके पापका प्रतिकार करने चल पड़े थे। जिस प्रकार उन धनिकोंने अतीतकालमें राष्ट्रीय आर्थिक स्रोतोंपर

व्यक्तिगत स्वामित्वकी छाप लगी ही थी, उसी प्रकार आज वे अनेक योजनाओंके सर्वाङ्गीण विकासमें पानीकी भांति धन बहा रहे थे। संक्षेपमें अजितको कहीं भी विरोधका सामना न करना पड़ता था। राष्ट्रके एक छोरसे लेकर दूसरे छोरतक सहयोगकी लहरें फैल चुकी थीं।

मृणालिनी अजित जैसे व्यक्ति को महाआमात्यके पदपर प्रतिष्ठित कर अनायास ही अक्षुण्ण कीर्तिको प्राप्त कर रही थी। उसके जीवनमें क्रमशः सन्तोष आदि सद्गुणोंका समावेश होकर एक प्रकारका ऐसा भाव बढ़ रहा था कि वह वीतरागीकी भांति राजकीय दायित्वसे अपनेको हटाकर एकान्तसेवी जीवन व्यतीत करे।

उसने अपनी इस इच्छाको कार्य रूपमें परिणित करना चाहा। उसने अपने मन्त्रिमण्डलको अपना त्याग-पत्र देते हुए यह इच्छा प्रकट की कि आजकी भारतीय जनता प्रभु-सत्ता सम्पन्न स्वयं राष्ट्रकी सर्वेसर्वा है। साम्राज्ञी पद तो उसे पिताकी सेवाओंके परिणामस्वरूप प्रदान किया गया था इसलिए वह भारतीय-जनताकी कृतज्ञ होते हुए भी सम्मानपूर्वक अपनी पद-महत्ताका दान जनताको देती है।

मन्त्रिमण्डलमें इस त्यागपत्रको लेकर बड़ी बहस हुई किन्तु मृणालिनी किसी भी तरह अपना त्यागपत्र न लौटा सकी। अन्तमें बड़े क्षोभके साथ उसका त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया और साम्राज्ञी पदके स्थानपर राष्ट्रपतिका पद नियुक्त किया गया जिसकी नियुक्ति चुनाव द्वारा हुआ करे।

मृणालिनीने चारों ओरसे अपना जीवनके अनेक दायित्वोंसे मुक्ति प्राप्त कर, ऋषियों द्वारा निर्णीत त्यागमय जीवन व्यतीत करनेके सङ्कल्पको स्वीकार किया।

राजमाता और अजित इस विशेष परिवर्तनसे चिन्तित हो उठे किंतु मृणालिनीके सामने किसी की एक न चली।

उसने स्पष्ट उत्तर दे दिया कि मैं अपनी अन्तरात्माकी इच्छाके

विपरीत कोई आचरण नहीं कर सकती। यह युग राजतन्त्रको चुनौती दे कर आया है। प्रभावहीन राजकुमारोंके जीवनसे मुझे कोई आकर्षण नहीं, इसलिए गार्हस्थ्य-जीवन व्यतीत करनेसे अधिक उपयुक्त है वीतरागी जीवन व्यतीत करना।

राजमाता और अजितने अनुभव किया कि यदि राजकुमारीको वंश परम्पराके नामपर विवाह करनेके लिए विवश न किया जाता तो सम्भवतः राजकुमारी अपने जीवनके लिए ऐसा कठोर निर्णय न करती।

राजमाताके नेत्रोंके सामने अँधेरा छा गया किन्तु वह कर भी क्या सकती थीं। मृणालिनी कोई छोटी सी बालिका न थी कि उसपर जबरन निर्णय लादा जाता। वह एक उच्चकोटिकी विचारशील विदुषी थी, जिसने राजसिंहासनोंको नवयुगकी आँधीमें उलटते-पलटते देखा। जो घटनाएँ सहस्राब्दियों पश्चात् घटित हुई थीं, उसमें नवयुग एवं नव-व्यवस्थाका स्पष्ट-विचार था। युगके परिवर्तनोंकी ओर पीठ देकर चलना राजकुमारीके प्रकृतिके विपरीत था।

अजित राज-काज एवं राष्ट्र-सेवामें व्यस्त था और मृणालिनी कोलाहलमय जीवनसे दूर भागती हुई दीख पड़ रही थी। एक ओर असन्तुष्ट यौवनकी उद्दाम लालसाएँ इन्द्रियजन्य सुखोंके आकर्षणकी मौन अभिव्यक्ति द्वारा मृणालिनीके अन्तरको झकझोर रही थीं तो दूसरी ओर कठोर-संयमकी साधनाको प्रशस्त करके आत्मोद्धारके मार्गपर चलने के लिए मृणालिनीकी आत्मा छटपटा रही थी। जिन भौतिक सुख-साधनोंकी रंग-रंगीनियोंपर, संसारके इतर-प्राणी अपनेको भूले हुए, स्वप्न जगत्में विचरण करते हैं, वे सारे सुख साधन मृणालिनीके चरणों में लोटते हुए भी उसे अनायास ही वैराग्य-पथपर अग्रसर होनेकी प्रेरणा देकर अपनी निस्सारितापर मौन व्यङ्ग कस रहे थे।

लोक-सेवा एवं महान आदर्शोंसे प्रेरित होकर, मृणालिनीके अन्तर-

तमसे एक ऐसी मोहक स्वर लहरी मुखरित हो रही थी, जिसके परिणाम स्वरूप मृणालिनीको भौतिक जीवनके प्रति प्रतिक्षण विराग होता जा रहा था। गोपनीय हृदयके अन्तरालमें अजितकी एक तीव्र वासना कुछ समय पूर्व अवश्य उत्पन्न हुई थी और आज भी सावधानीसे हृदय टटोलनेपर छिपी हुई अजितकी स्मृति मिल सकती थी किन्तु मृणालिनी, प्रखर वैराग्यकी दीप्तिमय-ज्योतिमें सारे सांसारिक सम्बन्धोंको छिन्न विच्छिन्न कर आत्मबोधकी दुरूह साधनामें बहुत गहरे पैठ रही थी।

राजमाताकी बात कि क्या अविवाहित जीवन बिताकर वह अपनेको निष्कलंक बनाये रख सकेगी ? मृणालिनीके अन्तरतममें गड़ रही थी। उसने माताके इस सन्देहको चुनौतीके रूपमें स्वीकार किया था और मृणालिनीके जीवनमें एक ही धुन थी कि वह निष्कलंक बने रहनेके लिए विवाह न करेगी। आत्मपतनसे बचनेके लिए पुरुष-जातिके प्रति उत्पन्न होनेवाले सहज नारी-प्रेमके गलेको वह घोट देगी। वह पुरुषोंके प्रति उत्पन्न होनेवाले समादर एवं श्रद्धाको अपने हृदयके समीप फटकने न देगी। वह पुरुष जातिकी दृष्टिसे बचनेके लिए यदि आवश्यक समझेगी तो अपने नेत्रोंमें पट्टी बाँध लेगी। नहीं, वह पुरुष-जातिपर कदाई दृष्टिपात न करेगी।

जैसे कछुआ अपने सर्वाङ्गको समेट कर खोपड़ीके भीतर घुसा रहता है, उसी भांति मृणालिनी अपने जीवनके व्यापारोंको एक नियमित परिधिके भीतर रोककर चुपचाप एकाकी जीवन व्यतीत करने लगी। वह बहुधा बाहरका आना जाना बन्दकर राज-प्रासादके एक अलग कमरेमें रहने लगी। अधिकांश दास-दासियोंको भी उसने अपने समीप आने जानेसे रोक दिया। खान-पानमें भी विशेष कमी कर दी। वह योगीकी भांति युक्ताहार-विहार द्वारा अपनेको दृढ़-संयमनके भीतर रखकर उपनिषद एवं वैदिक ग्रंथोंके अध्ययनमें विशेष समय व्यतीत करनेमें लग गई।

हाँ, जब कभी जनताकी भीड़ उसके दर्शनार्थ आती, तब वह अवश्य राजप्रासादके बाहर निकलती थी और जनताके दुःख दर्दोंकी जानकारी प्राप्त कर लेनेपर अपनी ओरसे आवश्यक सहायता प्रदान करती थी। यदि कोई ऐसी सहायता प्राप्त करना चाहता, जो राज-सत्ता द्वारा ही संभव होती, तब वह महाआमात्यको पत्र लिखकर उस कष्ट निवारणकी प्रार्थना करती थी।

राजमाताको अपनी भूलपर पछतावा हो रहा था। वह अपनी इकलौती सन्तानको असमयमें ही वैराग्य-पथपर बढ़ते देख काँप उठी थी। उन्होंने स्वतः और अजितके द्वारा भी प्रयत्न करना चाहा कि वह अपनी इच्छानुसार ही अपना जीवन-संगी चुन ले, किन्तु मृणालिनीको इस विषयपर चर्चा करना भी अखरता था। उसने स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया था, जो संकल्प वह एक बार कर चुकी है उसे तोड़नेका कोई विशेष कारण नहीं है।

मृणालिनी प्रखर वैराग्य अग्नि प्रदीप्तकर स्वेच्छासे एकाकी जीवन व्यतीत करने लगी। उसे एक प्रकारसे शान्ति मिल गई थी। क्योंकि वह कोलाहलमय राजनीतिक जीवनसे अलग एकरस शून्यताका बोध कर रही थी। भौतिक दृष्टिसे राजशासन द्वारा वह जो कुछ जनताका कल्याण कर सकती थी, उसने अब कहीं अधिक, शून्य जगहमें बैठकर वह चिन्तन करती थी—'क्या अब विश्वके प्राणी इसी भांति युद्धोंके आतङ्क से डरे अनेक अभावोंका बाहुल्य अनुभव करते हुए, बेकारीके शिकार बनकर जीवनके सुखमय उपभोगोंसे वञ्चित रहेंगे? क्या करुणामय भगवान्‌की सारी सृष्टि ही आसुरी गुणोंसे विभूषित हो विश्व शान्तिके लिए पाप सिद्ध होगी? भगवान! क्या होगा? पेटकी ज्वालासे जलती हुई अन्न-वस्त्रहीन जनता किस तरह होठोंपर मुसकुराहटकी बिजली चमका देगी?

'क्या शान्ति और अहिंसाका त्याग सारे मानव-समूहके बीच कलहके

बीज न बो देगा ? उफ्, ये दुनिया जलती दिखलाई पड़ेगी, घृणा-प्रति-हिंसासे ! मानवका शत्रु मानव होगा ! मानवके रक्तका प्यासा मानव ! संहारक अस्त्र-घातक प्रहार आर्थिक शोषण तो सारे मानव समाजको दरिद्रताकी प्रखर ज्वालामें झोंक देगा। जहाँ सारा समाज रोटियोंके टुकड़े पर अपनी औलाद बेचेगा—स्त्री अपनी अस्मत बेचेगी। रौरवकी विपुल—दाहमयी नर्क-पीड़ा जनजीवनमें प्रकट होकर सारी शान्ति सोख लेगी।

फिर आजकी इस सुन्दर दुनियाका क्या होगा स्वरूप ! विनाशका कलंक टीका लगाकर यह विश्व ही थोड़ेसे धन कुबेरोंका क्रीड़ा-स्थल बना रहेगा। मानवका अगम हनन होगा। अब शेष दरिद्र मानव जाति मध्यम युगीन सामन्तवादी सत्ताधारियों द्वारा, सतायी जायगी, लूटी जायगी, अपमानित होगी। पूँजीवादकी प्रमुख भेंट दरिद्रता जन-जीवनमें फैली मिलेगी !

राजकुमारी ! उठ ! मानव जातिकी कलंक न बन ! तू स्वयं मुक्त हो और दूसरोंके लिए मुक्ति-दात्री बन। हर झोपड़ीसे व्यथाकी आह बह रही है। चल, शील भरे शान्ति पूर्ण उपदेशों द्वारा दिलोंमें मरहमकी पट्टी लगा। तुझे कुछ भी भौतिक वस्तु पाना बाकी नहीं रहा। तू अप्राप्यकी सिद्धिमें लग ! भौतिक सुख साधन क्षण-भंगुर हैं। तू आत्मा का उद्धारक बनकर भूलोंको राह दिखा ! तुझे युगकी आँधी सामने ढकेल रही है ! आ बुराइयोंके लिए संहारक शक्ति बनकर आ !!!

आत्मोद्धार पथपर चलनेका संकल्प करते ही मृणालिनी जीवनको नव-आदर्शोंसे अनुप्राणित कर जैसे देवी बन गयी थी। सौन्दर्यकी रूप-शिखा इस प्रकार जगमगा रही थी, जैसे अखण्ड ब्रह्मचर्यका देवता उसे भुवनमोहिनीका वरदान देकर गया हो।

राजकुमारीके सूनेपनमें कभी-कभी अजित आ टपकता था। जीवन-

के अतिथिकी भांति मृणालिनी उसका सत्कार करती थी। प्रसङ्गवशात् वह राजकाजके सम्बन्धमें अपनी सम्मति भी प्रदान करती थी। अजित भी अपनेको भूलकर मृणालिनीके घड़ी दो घड़ीके सहवासमें, मानों कुबेर-की अमूल्य निधि पा लेता था। वह आत्मविस्मृत-सा, ठगा सा राज-कुमारीको देखता रह जाता था। मृणालिनी उसकी आसक्त-दृष्टिकी मौन वाणीमें अपनेपनका मधुर सन्देश सुन पाती थी। वे एक दूसरेको जीवन का पूरक जैसा समझ लेते थे।

एक दिन अजित महीनों पश्चात् मृणालिनीके समीप पहुँचा। वह अजितको बैठनेका आग्रह करके पक्षियोंके पिंजड़ोंमें दाना-चारा डालने लगी। अजित मृणालिनीसे दर्शनका सा निर्निमेष दृष्टिसे उसे ही देखता रहा। मृणालिनी अपनी धुनमें लगी हुई अजितको भी पक्षियोंकी सेवा-टहल दखानेके लिए पास बुला लिया दोनोंमें बातें होने लगी। मृणा-लिनीने पक्षियोंको प्यारसे थपथपाते हुए—कहा—''तुम कौन हो अजित मेरे शान्त जीवनमें हलचल मचानेवाले।'

'यदि यही प्रश्न मैं तुमसे पूछूँ, राजकुमारी!''

'तुम कैसे पूछ सकते हो? शिकायत है, तो मुझे है। जब तुम मेरे समीप महीनों नहीं आते, तब मुझे कोई चिन्ता नहीं होती, किन्तु जब तुम घड़ी दो घड़ी आकर सुख दुःखकी चर्चा करते हो, चले जाते हो, उसके पश्चात् अपनी व्याकुल प्रतीक्षा छोड़ जाते हो, तब जानते हो? तुम्हारी ममता मेरे वैराग्यको पिघलाकर रुला देती है। मैं फिर अशान्त हो जाती हूँ। इसलिये पूछती हूँ कि तुम किसीके जीवनमें हठात् अपनी स्मृति क्यों छोड़ जाते हो? यही अपराध है? यही आत्म-छलना है।''

अजित कुछ ठगा सा—कुछ आत्म विस्मृत सा देख रहा था, मृणा-लिनीकी ओर उसकी निश्छल सहज-प्रतिमाको, जिसमें प्रेमकी अलख

जगानेकी धुन है—जो भौतिक जगत्में रहते हुए भी इस लोककी कोई चिन्ता नहीं करती।

आह ! ये हरे-भरे सावन उसे कोई मोह नहीं उत्पन्न करते। यह नाचती हुई प्रकृति नारी अपने सम्मोहनों द्वारा मृणालिनीको नहीं रिझा पाती। उसे ग्रीष्मकी झञ्झामें भी कोई जलन नहीं अनुभव होती ?

अजित सोचता भी गया कि इतने दिनों पश्चात् निर्भय होकर मृणालिनी अपने सहज-प्रेमकी अभिव्यक्ति कर बैठी है। उफ् ! उसकी वाणीमें संगीत है। ममताके इन बोलोंमें वह पहले कभी नहीं बोली। आज परदा नहीं है। कोई छिपाव या दुराव भी नहीं। अजित स्वयं सोचता रहा कि क्या मृणालिनीके अन्तरमें ज्वार-भाटा नहीं उठता। क्या वह उसकी यादमें छटपटाती नहीं ?

प्रकटमें वह बोला, "राजकुमारी ! शिकायत कैसी ! जब दोनों ओर एक ही समान दीदारकी मचली हुई तड़पन, जीवनमें अठखेलियाँ करती हैं, तब किसीको क्या शिकायत है ? जब मैं राज-काजमें व्यस्त अनेकों काम करता हूँ, तब मेरी दृष्टिमें जो मोहनी तसवीर उभरकर क्षण-भरके लिए उन्मत्त बना देती है, तो उसकी शिकायत करूँ, तो किससे करूँ ?

"मैं क्या जानूँ ?" मुसकुराती हुई मृणालिनी बोली—"मुझे तो केवल आपसे प्रश्नका उत्तर चाहिए !"

'तो सीधा-सा प्रत्युत्तर है कि अपनेको सम्पूर्ण इन्द्रियों द्वारा वशमें करना ! किसी फूलकी मनहर शोभा यदि दृष्टिदोष'के कारण आसक्ति उत्पन्न करती है और आगे चलकर उसे प्राप्त करनेकी दुराशा भी उत्पन्न कर देती है, तभी जीवन छला जाता है। तभी उसके प्राप्तिकी वासना तीव्र हो उठती है और तभी प्रिय-पुष्पके अभावमें सारा जीवन पीड़ाओं का घर बन जाता है। इसलिए"—मुस्कुरा कर अजितने कहा—

किसीकी स्मृतिके सहारे जीवन-तन्तु बँधते ही अनायासका साराका
सुख लुट जाता है ।

"'देखो''—मृणालिनीने पिंजड़ेमें बन्द एक जोड़े मनहर पक्षी दिख,
और फिर बोली—'अजित ! पक्षियोंको मैंने अपना साथी बनाया है ।
इनसे हँस बोल लेती हूँ—शुक मैनाकी बातें सुनकर जी बहल जाता है
जब ये जोड़े रहते हैं, तब विनोदके साथ पिंजड़ेके अन्दर ही फुदकते
रहते हैं—प्रेमके सहज सुखमें परवशताकी पीड़ा भूलकर आत्मविभोर हो
उठते हैं, किन्तु जब मैं इनके जोड़ोंको अलग अलग पिंजड़ोंमें एक दूसरे-
की दृष्टिसे ओझल रहती हूँ तब वे निरानन्द बनकर निश्चल हो जाते हैं ।
दाना-पानी तक नहीं ग्रहण करते । तब मैं अनुभव करती हूँ कि क्षणिक
वियोग ही इन्हें कितना दुःखदायी है ! इसी तरह अजित ! मानव जीवन
भी छटपटा उठता है ।"

"किन्तु राजकुमारी ! वैराग्य पथपर अग्रसर होकर, कैसे इन मोह-
मयी मानवी भावनाओंसे व्याकुल हो उठती हो ? मेरी बात छोड़ो । मैं
निर्बल पुरुष दुरूह साधनाओंकी बात क्या जानूँ ? किन्तु तुम्हारी वृत्ति तो
कठोर त्यागकी निर्मम वेदीपर आत्माहुति देनेके समान है ! तुम ममता
को अपने जीवनमें क्यों फटकने देती हो ?

'अवश हूँ, अजित ! शरीरपर मेरा पूर्ण अधिकार है, किन्तु नेत्र
और मनपर मेरा नहीं । वे जिसे चाहते हैं, उसे अपना प्रिय अतिथि
बना लेते हैं । सेवा-सत्कार करते हैं और उसीकी धुनमें अपनत्व भुला
बैठते हैं । अभी मैं कोई साधना कर भी नहीं सकी ।"

"तो तुम्हारे जीवनमें जिस वैराग्यका तूफानी अन्धड़ बह रहा है,
वह ममताका दमन करनेमें असमर्थ है क्या ? मुझे तो यही आश्चर्य है"
कि सरस सुखमय वासन्ती क्षणोंमें यह पावस कैसा—यह नेत्रोंसे अश्रु-
प्रवाह क्यों ? किन्तु तुम्हारी एक बात भी मैं समझ नहीं पाता ।'

'क्या बात है जो नहीं समझमें आ रही ! मैं कहती तो हूँ कि ज्यों-ज्यों प्रखर वैराग्यकी अलख जगेगी त्यों-त्यों ममताकी कड़ियाँ कड़कड़ा कर टूटेंगी। न जाने कितने प्रिय सम्बन्ध-विच्छेद होंगे। और क्या-क्या होगा, यह तो समय ही बताएगा किन्तु एक बात कहती हूँ, अजित ! इसपर विचार करना। मैं तो एक नारी हूँ, प्रकृतिसे ही चञ्चल। मेरे लिये साधना-सिद्धि कितनी गूढ़ है। सहज ही मायविक आकर्षणोंसे पिण्ड नहीं छूटता। मैं तुच्छ होते हुए, कैसे अपनी साधना पर अहङ्कार करूँ। हाँ, मार्ग मैंने चुना है। उसपर चलनेको उद्यत हो, चल रही हूँ। भगवान जानें, सफलतापूर्वक चल सकूँ अथवा कहीं फिसल पड़ूँ और सारी यात्रा व्यङ्ग बन जाय।

बातें करते-करते जाने क्या सोचकर मृणालिनी कुछ क्षणों तक शून्य आकाशकी ओर देखती रही किन्तु शीघ्र ही वह पुनः बोली—"अजित ! यदि तुमने मेरी साधनाको प्रशस्त करना चाहा, तब तो बेड़ा पार है। क्योंकि सारे आकर्षणोंके तुम्हीं आकर्षण हो। यह बात आज मैं बहुत स्पष्ट कहती हूँ। तुमपर ही सारी ममता टूटकर केन्द्रित हो रही है। तुम्हारी स्मृति जीवन पटलपर अमिट छाप लगा चुकी है। तुम्हीं चाहोगे, तब मैं तुम्हारे आदर्शोंकी खोजमें तुम्हें भूल जाऊँगी। मेरी मुक्ति मुझे प्राप्त हो जायगी।"

अजितके नेत्र चमक उठे। वह बोला—"राजकुमार ! जब तुम सम्पूर्ण ऐश्वर्य त्यागकर बुद्धकी भिक्षुणी बनने जा रही हो, तब मैं तुम्हारे उद्धार-पथपर वासनाके गीत न गाऊँगा। अब मैं तुम्हारे दृष्टिपथसे दूर भागूँगा। शुभे ! तुम कल्याण मार्गी बनो। अन्धकार-दुःखदैन्य, शोषण एवं शक्ति-पिपासाने मानवके आदर्शोंको चलनी कर दिया है, उसे पुनः आदर्शोंकी उपासनामें विजयी बनानेके लिए, निर्ममताको सदाके लिये संवरणकर लो। आगे-आगे चलो और दूसरोंको भी उस पथपर चल पड़नेकी प्रेरणा दो। मानव जागे, देश जागे और जागे

सारा विश्व ! तुम्हारी धवल कीर्ति पताका जन-मनमें गड़ जावे। तुम्हारी तपस्या जीवनमें उत्तप्त एवं पीड़ित मानवको शान्ति-सुखका सन्देश दे।

राष्ट्रसेवाकी अलख जगानेवाला, मातृ-भूमिका सपूत प्रेम व्यापारमें कहीं भी अपना मूल्य चुकानेको तत्पर था। यदि उसकी उपस्थितिका सुख प्राप्त करते हुए राष्ट्रकी जनता आशीर्वादका अमूल्य निधि प्रदान कर रही थी तो अजित प्रेमकी देहलीपर अपना सम्पूर्ण बलिदान करनेको उद्यत था। उसे सुख बोध होता था कि वह व्यष्टिके प्रेममें मतवाला होकर समष्टिके प्रेमसागरमें डूब गया। हाँ, उसमें भी आशङ्का थी कि मृणालिनीकी तरह वह भी उसकी आत्म-विभोर करनेवाली पागल स्मृतिको एक ही झटकेमें न तोड़ सकेगा किन्तु वह मृणालिनीकी मुक्तिके लिये अवश्य भूल जानेका प्रयास करेगा।

उफ्, साधारण बातोंमें हृदयकी गहराईमें पैठकर दोनों एक दूसरेसे दूर रहनेके सङ्कल्पको ले लिया। वे कैसे वियोगकी पीड़ाको हँस-हँसकर सहन करेंगे—जहाँ दोनोंने दीवार सदृश बनकर, दो शरीर एक प्राणकी कहावत चरितार्थ की थी। सचमुच, अजित और मृणालिनी मानव-जीवनके अमूल्य कर्त्तव्योंको निभानेके लिये एक दूसरेकी स्वीकृति प्राप्तकर, निर्ममता पूर्वक अलग होनेके वचनोंसे बँध गये।

वे दोनों जो कुछ सङ्कल्पकर चुके थे, उनमें उसे पूरा करनेकी शक्ति तो थी ही; किन्तु दुर्बल मानवका मोह तो बड़ा ही भयानक होता है। दुनिया जानती है कि जब मानवकी सारी इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं, अस्थियोंका प्रेम त्यागकर सिकुड़ी हुई जर्जर खलरी झूलने लगती है। आँख देखना, कान सुनना, नाक गन्धको ग्रहण करनातक भूल जाता है, फिर भी रौरव जैसी बुढ़ापेकी पीड़ा भोगकर भी मनुष्य मृत्यु आलि-ङ्गन करनेको तत्पर नहीं होता। मृत्यु अपनी विभीषिकाका सहज दर्शन

करा देता है फिर भी वह ममताका प्राणी सड़ा, गला, अशक्त शरीर लिये अमरत्वकी भावनाकी तृष्णाको जीवनमें बसाये रहता है।

मृणालिनी और अजित एक दूसरेके प्रेम बन्धनमें जकड़े हुए भी, एक दूसरेको उद्धार-मार्गपर बढ़ते देखनेको तत्पर थे। आह! प्रेम कैसी छलना बनकर दोनोंके जीवनमें अपना प्रभाव डाल चुका था। दोनों अन्तर्पीड़ामें चुपचाप रोते छटपटाते हुए, एक दूसरेको आदर्श पथसे च्युत करनेका तत्पर थे।

मृणालिनी अपने मुक्तिकी भीख अजितसे माग रही थी। वह अजितसे डरती थी—नहीं—उसकी स्मृतिसे व्याकुल हो उठती थी इसीलिए साधना-पथपर अग्रसर होनेसे पूर्व अजितसे ही आदेश माँग रही थी और अजित! वह जो शैशव बेलासे लेकर आजतक पीड़ाओंका बोझ ढोते आया था, आज भी मृणालिनीको मुक्ति-मार्गिनी बननेका परामर्श दे कर, मानो अपने हृदयके लथपथ प्रेमकी आकुल आकांक्षा-को क्रूरतापूर्वक कुचल रहा था। जिस मृणालिनीकी सहज स्नेहमयी प्रतिमा उसके अन्तरतममें प्रेम-देवताकी सारी पूजा ग्रहण करनेके हेतु प्रतिष्ठित हो चुकी थी, मानो उसी प्रतिमाको हृदय मन्दिर सूना छोड़कर जानेकी निर्दय आज्ञा देते हुए अजित ममता-शून्य हो चुका था।

मृणालिनी चुपचाप अजितको निर्निमेष दृष्टिसे देखते हुए उसके समीप सरककर आ खड़ी हो गयी। दोनोंकी वाणी मौन थी। अन्तरमें विपुल वेदनाकी होली हाहाकार मचाने लगी थी। वे दोनों गम्भीर थे—आँसुओंकी धारा उमड़कर, नेत्र कोरोंमें छायी हुई थी।

मृणालिनीने अजितका हाथ अपने हाथोंमें थाम लिया। इस क्षणिक सुखद-स्पर्शमें, आजीवन रुदनका भीषण उन्माद, जैसे सम्पूर्ण शरीरमें व्याप्त हो गया। पीड़ा भरी वाणीसे मृणालिनी बोली—

'आज सच कहना! मुझपर क्रोध है क्या? मैं जानती हूँ कि मैं तुम्हारे जीवनमें छलना बनकर घुसी हूँ, मैंने सुप्त आकर्षणोंको जगाया

है, मैंने तुम जैसे अडिग पुरुषकी जीवन-परिखामें हठात् प्रवेश कर, अपने मोहक-उन्मादों-द्वारा तुम्हारी सुख शान्ति एवं दृढ़ताको छीन लिया है किन्तु क्या नियतिके क्रूर-विधानका मुझे ही पता था ?

'सब कुछ ठीक है, मृणालिनी ! क्या तुम चाहती हो कि अजित तुम्हें अपराधिनी कहकर पुकारे ? नहीं, यह नहीं हो सकता ! विधि-विधानके क्रूर हाथों द्वारा हम तुम दोनोंकी भाग्य रेखा खींची गयी थी। उसमें हम तुम परिवर्तन करनेवाले कौन ? इसमें तुम्हारा दोष भी क्या ? राजमाताके आग्रहका यही परिणाम है ! चलो, जब तुमने ही जीवन-दिशाको मोड़ लिया, तब मैं भी उसी पथका पथिक बनूँगा ! मेरा क्या है ? यह राज-पाट जब तुम्हारा न रहा, जब तुम्हें ही उसका मोह नहीं, तब मैं तो झोपड़ीका रहनेवाला था और हूँ। यदि अपने ऊपर डाले गये दायित्वोंको निभा सका, तब तो ठीक ही है। अन्यथा, अनन्त पथका पथिक बनकर हृदयके हाहाकारको शान्त करूँगा। न सही आज, न सही कल, किन्तु जीवनके किसी क्षणमें अवश्य ही तुम्हें भुला दूँगा !

अजित उठकर खड़ा हो गया। मृणालिनीने उसके हाथ छोड़ दिये। वह चल पड़ा। मृणालिनको ज्ञात हुआ जैसे वह उसका हृत्पिण्ड कुचल कर जा रहा हो। मृणालिनीकी दृष्टि घूमने लगी—सारा अन्तरिक्ष घूमने लगा। ममताके तागे एक एक करके टूटने लगे। मृणालिनी काँपने लगी—दिशि-विदिशाएँ भी काँपती दृष्टि-गोचर हुईं। स्वप्नकी तरह अजित इसके दृष्टि पथसे अन्तर्ध्यान हो गया। वह आह खींचकर धड़ामसे भूमिपर गिर पड़ी।

मृणालिनी चेतना शून्य होकर घण्टों पड़ी रही। किसीको पता भी न चला कि कब क्या हुआ। जब आपसे आप वह पुनः सचेत हुई, तब मणिहीन सर्पकी तरह, निर्जीव जैसी चलकर अपने शून्य कक्षमें जाकर लेट गयी।

★

४

वह अन्तिम दिन था, जब मृणालिनीकी दृष्टिसे हटकर एकाएक अजित चला गया। वह अन्तिम दर्शन था, जब अन्तिम बार अजित और मृणालिनी एक दूसरेसे मिलकर फिर एक युगतक कभी न मिले वह प्रेमकी अन्तिम जीत या हार थी, जब एक दूसरेको अपना सर्वस्व मानकर, प्रेमकी बलिवेदीपर दोनोंने आत्मप्रेम एवं आत्म-सुख उत्सर्ग किया था।

महीनों पागलोंकी तरह एक शून्य कक्षमें पड़े रहनेके अतिरिक्त मृणालिनीने और कुछ न किया। उस दिनसे उसे लोगोंने बहुत कम देखा या बिल्कुल नहीं देखा। मृणालिनीकी परिचर्यामें उसकी दो दासियाँ थीं, जो चौबीस-घण्टोंमें केवल दो बार उसके समीप जाया करती थी। इनके अतिरिक्त मृणालिनी किसीके सामने न आती थी। राजमाता से मिलना-जुलना और यहाँतक कि उसकी दृष्टिके सामने आना भी राजकुमारीने बन्दकर दिया था।

जो राजप्रासाद किसी समय संगीत नृत्य एवं वाद्य-यंत्रोंकी मधुर स्वर-लहरियोंकी मोहक-झंकारोंसे गूँजता रहता था, वह मानों योगीके समाधि सा शून्य हो गया था। चारों ओर उदासी, शून्यता एवं वैराग्य-का बोलबाला था। सारा राजप्रासाद मानों युगोंके कोलाहलको त्यागकर मृतक-भूमिकी भाँति नीरव था। एक छोरपर राजमाताका निवास था, तो दूसरे छोरपर मृणालिनी का।

राजमाता तो दिनचर्याके समय दीख भी पड़ती थीं किन्तु मृणालिनीका दर्शन वायुकी तरह असंभव था—दिन और महीने व्यतीत होने लगे मृणालिनी गयी गुजरी कहानीकी तरह निर्लिप्त भावसे सबकी दृष्टिसे ओझल रहते हुए, जनताके चर्चाकी विषय बन गई थी। उसके जीवन-सन्यासकी कथा लोगोंमें अपार श्रद्धा उत्पन्न करती जा रही थी। दर्शनोत्सुक जनता अपनी साम्राज्ञीके असमय वैराग्यसे अवश्य प्रभावित थी किन्तु इससे अधिक उसके सम्बन्धकी कोई जानकारी किसीको न थी।

मृणालिनीने शृङ्गार करना त्याग दिया। वह बाह्य एवं अन्तर की शुद्धि रखते हुए थोड़ेसे वस्त्रों एवं अल्पाहार-द्वारा जीवन व्यतीतकर रही थी। कभी-कभी वह अपनी परिचारिकाओं-द्वारा नगरमें आनेवाले बौद्ध भिक्षुकोंका उपदेश श्रवण करती थी।

एक दिन अर्द्ध-रात्रिके समय राजप्रासादके पिछले गुप्त द्वारपर एक रथ आकर खड़ा हो गया। मृणालिनी काषाय वस्त्रोंको भिक्षुणीकी भांति परिवेष्टितकर चुपचाप रथमें जाकर आरूढ़ हो गई। साथमें उसकी वे ही दोनों परिचारिकाएँ और कुछ अमूल्य धनराशि थी। वह स्त्री राजमाताके नाम एक पत्र छोड़ आई थी, जिसमें स्पष्टतया सन्यास ग्रहण करनेकी इच्छा प्रकट थी।

कई दिनोंकी निरन्तर यात्राके पश्चात् मृणालिनी प्रयाग राजमें त्रिवेणीके संगमपर पहुँची। वहाँ पतित पावनी त्रिवेणीकी गोदमें बैठकर सङ्कल्प करते हुए सन्यास धन दान दिया—भूखोंको भोजन एवं नंगोंको वस्त्र प्रदान किया। इसके पश्चात् वह आगे बढ़ी और गयामें बोधिसत्व, के पास पहुँचकर आश्रम बनाकर रहना आरम्भ कर दिया। रथ और दास-दासियोंको वापस लौटा दिया।

परिवर्तन सृष्टिका अटल नियम है। मृणालिनी कलतक सम्राज्ञी थी, वह आज थी केवल एक भिक्षुणी। आमोद-प्रमोद एवं दास-दासियोंसे सुसज्जित जीवनके स्थानपर था एकाकी जीवन, केवल प्रकृति एवं ईश्वरके भरोसे संसार-सागरमें चल पड़ी थी, जीवन-नौका खेने। सगे-स्वजनोंका सारा मायविक सम्बन्ध टूट चुका था, बच्चोंकेखिलौने जैसा। मृणालिनी, जैसे एक खेल खेल चुकी थी। खिलौना टूट चुका था और तब भी वह निर्मम भावसे आयोजनकर चुकी थी दूसरे खेलका—यह खेल वैराग्यमय था। कोई साथी हितू नहीं, कोई योग—क्षेत्र वहन करनेवाला नहीं। संसारके कोलाहलसे बहुत दूर—एकान्त देशमें—अपने अलख—प्रेमकी ज्योति जगाने चली थी मृणालिनी। आज उसका प्यारा अजित उससे

साथ नहीं थो। आज अकेले निस्पृह बनकर मृणालिनी अपने जीवनके भीतर ही कुछ खोज रही थी।

एकान्त अँधेरी रातमें —नीले आकाशके नीचे आसमानके नीचे—घन्टों बैठकर मृणालिनी सोचती थी—दृश्य-जगतका वह मोहक नाटक, जो आजतक स्वप्न सदृश्य देख चुकी थी। संसारका समस्त आकर्षण परित्याग करनेपर भी, जैसे सारा संसार और उसके उलझन। भरे दृश्य और उनके परिणाम मृणालिनीके अन्तरमें आज भी अपना प्रभाव डाले हुए थे। वह सोचते सोचते इस निष्कर्षपर पहुँच चुकी थी कि दृश्य जगत का परित्याग करनेपर भी वास्तविक संसार तो जीवात्माके मोहमय अभेद्य सम्बन्धोंसे उसके जीवनमें ही जुड़ा है। इसका परित्याग कैसे हो?

यह अनुभव जैसे सारे सासारिक सम्बन्धोंकी स्मृतियाँ धुँधली पड़ गयी किन्तु उनका समूल विनाश होना बाकी है। नहीं तो वे भी एक संस्कार बनकर बीते जीवनकी याद दिलाती हैं किन्तु जिसे उसने सबसे अधिक भुलानेका प्रयास किया, वही अपने स्मृति तन्तुओं द्वारा मृणालिनिको जकड़े हुए जैसे मुक्ति पथपर आगे बढ़नेसे रोक रहा है। इसे वह क्या करे?

वह जानती थी कि वायुकी गतिके समान मन चंचल है। उसे अभ्यास एवं वैराग्य द्वारा क्रम-क्रमसे वशमें किया जा सकता है किन्तु क्या ऐसा क्रम एक ही जीवनमें संभव है? अनेक योनियोंके संस्कारोंकी प्रक्रिया ही अन्तिम मुक्तिके रूपमें प्राप्त होती है। जीव आवागमनके बन्धनसे मुक्त हो जाता है किन्तु क्या ऐसी मुक्ति उसे इसी जीवनमें मिलनी संभव है? जिस अजितको वह जीवन भरके लिए छोड़ आयी है उसकी स्मृति मुक्तिके सामने प्रश्नवाचक बनकर खड़ी है? वह आज भी किसी गहरी निराशाकी ज्वालामें जल रही है। वह अपनी जलन कैसे मिटाये? अतीतकी मादक स्मृतियाँ बलात् उसके सूने जीवनमें प्रवेशकर 'सुप्त संस्कारों' को जाग्रत करती हैं। वह उन्हें अपने विचारों

के साथ प्रवेश करते समय कैसे रोक ? जिसे वह जीवनकी छलना और भूल समझती आयी है, उसका वह कैसे सुधार करे? अरे, यह मनके साथ मिला हुआ संसार अपने विकारोंके साथ कब उसके जीवनसे बिदा लें ?

मृणालिनी उस सूने एकान्तमें जाकर आत्म-साधना एवं मुक्तिके प्रशस्त मार्गमें लग गयी। अवश्य ही उसकी साधना थी दुरुह और जिस मृणालिनीने आजतक भौतिक सुख-साधनोंके बीच अपना बाल्य-काल्य एवं कौमार्यावस्था व्ययतीत की थी, उसने गहन शिक्षाके दिन अतीतके संस्कारोंसे-युक्त जीवनी तालिकाके सुखमय परिच्छेदोंकी भ्रामक स्मृतिमें, कभी-कभी भय उत्पन्न कर बैठते थे। मृणालिनी सोचती कि जिस युगमें वह अवतरित हुई है, उसकी सारी दृष्टि ही भौतिक उपासनाके बाह्य गोरख-धन्धोंसे आगे कछ नहीं है। 'खाओ, पिओ, मौज करो' वाले युद्धमें आध्यात्मिक जीवनका मूल्य क्या है ? मुक्तिकी खोजमें समग्र जीवन उदासीन और तपस्याओंकी निर्मम-प्रक्रियामें व्यतीत करनेवाले पागल नहीं हैं तो और क्या हैं ? दृश्य जगतकी उपेक्षा करके अदृश्य एवं कल्पनातीत जीवन व्यतीत करनेकी साध अकर्मण्यता नहीं तो और क्या है ? वह चार्वाकके उस सिद्धान्तसे अवगत थी कि—"यावत् जीवेत, सुखं जीवेत ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत !"

किन्तु वह सोचती कि महान वैचित्रयसे युक्त यह सृष्टि, केवल भौतिकताकी उपासना भरसे ही नहीं समझमें आ सकती और न दृश्य जगत्का अनुभव ही उसे मुक्ति दिला सकता। उसे दृश्य जगतका बहिष्कार अन्तरंग और बहिरङ्ग दृष्टियोंसे करना होगा और अदृश्यकी उपासनामें मुक्ति, जीव आत्माका विश्लेषण करना होगा और अपने सात्विक अनुभवका सन्देश भी विश्वके नाना क्लेश युक्त प्राणियोंको देना होगा तब कहीं विश्व बन्धनकी अटूट श्रङ्खला छिन्न-विच्छिन्न होगी—कोरी भौतिक दृष्टि एवं तर्कका सहारा लेकर मुक्तिका मार्ग नहीं

प्रशस्त किया जा सकता और न भौतिक सापेक्षताकी दलीलोंसे मुक्तिकी उत्कट आकांक्षाका ही दमन किया जा सकता है !

दिन-महीने और वर्ष व्यतीत होने लगे। मृणालिनी अपनी ही विचारधारामें निरन्तर गोते लगाते-लगाते मूल्यवान मुक्तिके मोतीकी खोज लगा लायी। अपने आश्रममें बैठे ही बैठे उसने साधु एवं सिद्ध पुरुषोंसे सत्सङ्ग किया, अपनी सन्देहयुक्त अनेक शंकाएँ उनसे प्रकट कीं और उनके सन्देशों द्वारा भ्रम मूलक शङ्काओंका निवारणकर वह विशुद्ध वैदिक ज्ञानसे सम्पन्न होकर, आत्म-बोध द्वारा मुक्तिकी उलझी गुत्थी सुलझा लिया। वह मुक्तिकी खोजमें स्थित-प्रज्ञ पुरुषोंकेसे लक्षणोंसे युक्त हो सुख-दुःख, आशा-निराशा, हानि-लाभ, जीवन-मरण राग-वैराग्य आदि द्वन्द्वोंसे जीवात्माको वीतरागीकी भाँति अलग रखने लगी।

हृदयके अन्तरालसे लिपटे अतीतके संस्कारजन्य मोहमय संवेदन, ज्ञानकी प्रखर किरणों द्वारा भस्म हो गये। वर्षोंकी कठोर साधनाके परिणामस्वरूप मृणालिनीने जीवन-मुक्त अवस्थाको प्राप्त कर लिया। वह शुद्ध सच्चिदानन्दके निरन्तर चिन्तन द्वारा गुणातीत आदर्शको प्राप्तकर मायविक सम्बन्धोंसे परे मनःस्थिति प्राप्त कर ली। वह अपनी आत्मामें ही सन्तुष्ट थी। उससे परे उसके जीवनमें कोई सुख महत्वपूर्ण न था।

जब मृणालिनी वर्षों पश्चात् इस अवस्थातक पहुँची, तबतक वह यौवनके कठोर दिन व्यतीतकर प्रौढ़ावस्थाकी ओर पाँव बढ़ा चुकी थी। जिस संसारको प्रपंच समझकर उसने परित्याग किया था, एक बार उसे पुनः देखने और दुःखी-व्यथित प्राणियोंके क्लेशोंको अपनी अमूल्य सेवाओं द्वारा कम करनेकी भावना जाग्रत हो उठी। जब वह अमूल्य पैतृक सम्पत्ति एवं शक्ति त्यागकर सूने स्थानोंकी ओर बढ़ी थी, तब वह अपने साथ अमूल्य औषधियोंका एक भाण्डार लेती आयी थी।

अब उसे ज्ञात हुआ कि शारीरिक आधि-व्याधियोंसे पीड़ित अब

भी एक विशाल शोषित समाज है, जिसके कुशल-क्षेमका दायित्व न तो सरकारपर है और न समाजपर ही। वे बेचारे छोटी-छोटी शारीरिक पीड़ाओंसे लेकर मृत्युके कराल गालमें पहुँचनेतक भी रोग-निवारणकी कोई औषधि नहीं प्राप्तकर पाते थे। अतएव आस-पासके गाँवोंकी जनतासे सम्पर्क और भलाई करनेके कारण ही मृणालिनीने एक औषधालय खोल दिया और स्वयं रोगीकी देख-भाल दवा-दारू एवं परिचर्याका भार भी वहन करना शुरू कर दिया। मृणालिनीके समीप दूर-दूरसे पीड़ित व्यक्ति आने लगे और मृणालिनी आत्म-ज्ञानके प्रकाशमें, उन्हें स्वयं अपनी आत्माके समान समझकर दत्तचित्तसे सेवामें रहने लगी।

लोक कल्याणकारी कार्यने मृणालिनीकी कीर्ति और फैला दी। वह योगिनीके नामसे चारों ओर विख्यात होने लगी। उसके लोकोपकारी सुयशकी चर्चा सुनकर गाँवोंकी रुग्ण जनता उसे श्रद्धाकी दृष्टिसे देखने लगी। योगिनी दुखित प्राणियोंके लिए वरदायिनी देवी सिद्ध हुई। जो कुछ समय पूर्व साम्राज्ञी बनकर राष्ट्रको गरीबी-पोषण एवं रोग-शोक-से मुक्ति दिलानेमें संलग्न रहा करती थी, वही योगिनीके वेशमें दुखित एवं पीड़ित-प्राणियोंकी सेवा द्वारा अपने दयामय भगवानके अधिक निकट रहने लगी; क्योंकि उसका विश्वास था कि भगवानका दर्शन करुणा और दयाकी अविच्छिन्न धारामें गोते लगाते रहनेसे ही सम्भव है।

इधर अजित अपनी मृणालिनीको खोकर स्वयं वीतरागी हो उठा था। चौदह वर्षोंकी सुदीर्घ वियोगमयी घड़ियोंमें उसने जीवनके पाप सन्ताप एवं कलुषको आँसुओंकी धारासे धोकर शुद्ध बना लिया था। सचमुच, उसका हृदय प्रेम मन्दिर बन चुका था। इन चौदह वर्षोंमें एक ओर वैयक्तिक जीवन मृणालिनीको खोकर वैरागी बन चुका था किन्तु दूसरी ओर उसी रोते हुए हृदयके द्वारा उसने राष्ट्रकी जनता को अपनी महान सेवाएँ अर्पित की थीं। भौतिक आवश्यकताओंको उसने

इस भाँति राष्ट्रकी जनताके लिए प्रस्तुत किया था कि सम्पूर्ण राष्ट्रसे दुःख-दैन्य एवं शोषण पलायन कर चुका था। सुख शान्ति एवं समृद्धि-मयी घड़ियोंको प्रस्तुतकर, सचमुच उसने राष्ट्रकी जनताका बड़ा कल्याण किया था। अजित जनताके हृदयमें बैठा हुआ, मानों अपनी सेवाओंका समादर प्राप्तकर रहा था।

एक दिन अजितने राष्ट्रकी जनताके सामने अपना त्यागपत्र प्रेषित किया और उसने जनतासे निवेदन किया कि वह उसे राष्ट्रके दायित्वों से मुक्तकर दे। उसने अपनी समान-योग्यतावाले अनेक राष्ट्रसेवियोंको खोजकर शासनके दायित्वका सम्पूर्ण भार उनपर डाल दिया था और वे सब अजितको गुरुभावसे पूजते हुए सम्मानपूर्वक उसे दायित्वसे मुक्तकर चुके थे। अजितकी प्रार्थनासे ज्ञात होता था। वह शासन जैसे शुष्क कर्तव्य परायणताको निभाते हुए थक-सा गया है।

अन्तिम बार अजितकी सेवाओंके प्रति प्रकाश डालनेके हेतु एक विशेष सभाका आयोजन किया गया, जिसमें सम्पूर्ण राष्ट्रभरके देश-भक्त अजित और उसके कार्योंका अभिनन्दन करनेके लिए एकत्रित हुए। नेताओं-सेवकों एवं जनताने अपनी श्रद्धाञ्जलियाँ अजितको सम-र्पित कीं। वह भी उस सभामें उपस्थित था। उसने अपनी सेवाओंके परिणामस्वरूप जन-मनका आदर एवं प्रेम-भाव प्राप्तकर अपने जीवन को सफल और धन्य समझा। जनताके प्रति उसने आभार प्रदर्शित किया और राष्ट्रके दिन प्रति दिन समुन्नत होनेकी कामना व्यक्तकर उसने राजनीतिसे संन्यास ग्रहण किया।

एक विशाल आयोजन एवं अतिथि सत्कारके पश्चात् वह सभा भंगकर दी गयी। राष्ट्रके विशेष नगरों एवं स्थानोंमें अजित एवं मृणालिनीकी प्रस्तर प्रतिमाएँ उनके प्रति सहज आदर भाव प्रदर्शित करनेके लिये स्थापित की गयीं। एक दिन अजित चुपचाप मृणालिनीकी

भाँति ही अपने परिचितों एवं प्रियजनोंके बीचसे बिदा लेकर अपरिचित प्रदेशों एवं स्थानोंकी यात्रा करने चल पड़ा ।

वास्तवमें वह मृणालिनीको इन चौदह वर्षोंमें एक क्षणके लिए भी न भुला सका था किन्तु जिस अपार धैर्य एवं लगनके साथ उसने राष्ट्रकी सेवा की थी, वह कम साहसपूर्ण कार्य न था । एक बार पुनः मृणालिनीके दर्शनकी तीव्र वासना उसके हृदयमें जागृत हो चुकी थी अतएव सांसारिक सम्बन्धोंसे अपनेको अलगकर वह तीर्थ स्थानों एवं एकान्त प्रदेशोंकी यात्रा करने लगा ।

वह देशके उत्तर-दक्षिण पूर्व पश्चिम सभी दिशाओंमें घूमा । मृणालिनीके दर्शनकी उत्सुक, तरसती हुई आँखें अपनी प्रिय-प्रेमी प्रतिमा कहीं न देख सकीं ।

अब वह छोटे-छोटे तीर्थस्थलोंमें भी आने-जाने लगा । गया पहुँचकर उसे एक योगिनीका पता लगा, जो चौदह वर्षोंसे किसी एकान्त स्थलमें धूनी रमाये हुए लोकसेवामें व्यस्त है । अजितने विशेष परिचय जानना चाहा किन्तु इससे अधिक कोई न बता सका कि उसे सब लोग योगिनके नामसे ही जानते हैं और उसके अतीत जीवनका किसीको कोई पता नहीं । हाँ, लोगोंने यह भी बताया कि अभी हाल हीके वर्षोंमें उसने एक औषधालय खोला है और वह स्वयं रोगियोंकी परिचर्या एवं दवा-दारू करती है किन्तु बदलेमें कुछ भी स्वीकार नहीं करती ।

अजित ने लोगोंसे जानना चाहा कि उसके पास साधन क्या है, तो लोगोंने अतिरञ्जना एवं अतिशयोक्ति द्वारा सिद्ध किया कि वह योगिनी वास्तवमें सिद्धि प्राप्त किए हुये है ।

अजितके हृदयने कहा—हो न हो यह योगिनी ही मृणालिनी हो । क्योंकि जिस दिनसे वह संन्यास लेकर राजमहलसे बाहर निकली थी तबसे आजतक किसी परिचितने अपनी साम्राज्ञीको नहीं देख पाया ।

राजमाताने चारों ओर दूत भेजे थे, किन्तु कभी कोई पता लगा ही नहीं।

स्वयं राजमाताने पछतावेके साथ हाथ मलते हुए बड़े कष्टसे अपने वृद्ध शरीरका त्याग किया था और राजकीय कोषमें जो भी सम्पत्ति बची थी, उसे राजमाताने बेटीके नामपर, एक विशाल आश्रम खोलकर, राष्ट्रकी पिछड़ी हुई नारी जातिकी सर्वाङ्गीण उन्नतिके लिये दानकर दिया था। आज भी उस आश्रम द्वारा हजारों लाखों नारियाँ सुसंस्कृत एवं विदुषी बनकर, अनेक क्षेत्रोंमें नारी-जागरणका कार्यकर रही थीं। एक प्रकारसे मृणालिनीके नामपर चलनेवाला आश्रम उसकी अक्षय कीर्तिको एक चरित्रवान नारीके रूपमें चारों ओर फैलाता ही जा रहा था।

अजित चुपचाप उस योगिनीका पता लगाकर बोधिसत्वकी ओर बढ़ा और सचमुच उसने संयमित मृणालिनीका एक योगिनीके रूपमें दर्शन किया। उसने देखा कि वह अपने औषधालयमें दुःखी प्राणियों की परिचर्या एवं दवा-दारू करते हुए मानों जीवमात्रको सञ्जीवनी द्वारा नव-जीवन प्रदान किया करती है।

अजितने अपनेको प्रकट नहीं किया, वरन् उसने गुप्तरूपसे मृणालिनी की दिनचर्या एवं तपस्याके सम्बन्धमें विशेष रूपमें ज्ञान प्राप्तकर लिया। सचमुच अजितको बोध हो गया कि मृणालिनी ही वह जीवन्मुक्त योगिनी है, जिसके परिवर्तित जीवनको देखकर आजतक राष्ट्र उसे पहचान नहीं सका है।

एक तो प्रकाशन हीन उसका जीवन है और उससे भी अधिक प्रखर संन्यास द्वारा वह अहंता एवं ममताका नाशकर चुकी है। जीवमात्रके साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापितकर वह अपना अवशेष जीवन दीन-दुखियों की सच्ची सेवामें व्यतीतकर रही है। उसने अपनेको जीवन्मुक्त तो कर

ही डाला है। साथ ही वह अन्य प्राणियोंको भी सच्चे सुख प्राप्त करनेकी दिशामें मार्ग दर्शन करा रही है।

अजित उसकी दृष्टिसे छिपकर उसी वन प्रान्तमें रहने लगा। वह एक बार अवश्य ही मृणालिनीको देखा करता था और फिर अपने एकान्त वास-स्थलकी ओर लौटकर चुपचाप प्रेमकी अलख जगाता था। धीरे-धीरे उसकी अन्तरात्माको व्यथित करनेवाला वियोगजन्य दुःख घटने लगा और वह अनिर्वचनीय शान्तिकी उपासनामें बढ़ने लगा।

यद्यपि अजित एवं मृणालिनीने अलग अलग जीवन व्यतीत करते हुए एक दीर्घ समय व्यतीतकर डाला था। फिर भी उन दोनोंके हृदयमें एक दूसरेके प्रति जो प्रेमाशक्ति उत्पन्न हुई थी। वह मोहकी एक सूक्ष्म रेखा बनकर अन्तरतममें छिपी हुई थी। आज जब अजितकी दृष्टि चौदह-पन्द्रह वर्षों पश्चात् मृणालिनीपर पड़ी, तो जैसे राखके बीचमें छिपी हुई अग्निकी भाँति प्रेमकी दबी हुई ज्वाला भभक उठी।

अजितने मनको समझाया कि वह मृणालिनीकी दृष्टिसे बचकर कहीं दूर चला जाय, किन्तु वह पराजित-सा मनकी भावमयी आकांक्षाओं के प्रवाहमें बह चला। चिर अतृप्त दर्शनकी लालसा प्रबल हो उठी। मृणालिनीके आश्रमसे दूर रहनेवाला अजित प्रत्येक सन्ध्याको समीपवर्ती जलाशयके समीप छिपकर आ बैठता, जहाँ प्रति दिन सूर्योपासना करने मृणालिनी आया करती थी।

एक दिनकी बात है! मृणालिनी अपने निश्चित समय तक न आ सकी। धीरे धीरे सूर्यदेव प्रतीचीके गर्भमें जाकर विलीन हो गये। अजित फिर भी प्रतीक्षामें बैठा रहा। मृणालिनी न आयी। हाँ, मृणालिनीके साथ एक अन्य भिक्षुणी जो कभी-कभी आया करती थी, आज अकेले ही जलपात्र लेकर आयी।

प्राचीके क्षितिजमें चन्द्रदेव अपनी अमृतमयी किरणोंकी रजत ज्योत्स्ना फैलाकर मुक्त आकाशमें धीरे-धीरे चढ़ रहे थे। वन-भूमिमें

शान्ति विराज रही थी। शीतल-मन्द-सुगन्धयुक्त विविध समीर बहकर थके प्राणोंमें नव-जीवनका संचारकर रहे थे। जैसे ही भिक्षुणी सन्ध्या-वन्दनसे निवृत्त हुई, जलपात्र शिरमें रखकर आश्रमकी ओर चल पड़ी। अजित निराश हो गया। रह-रहकर उसका मन मृणालिनीके न आनेका कारण खोजने लगा। भिक्षुणी धीरे-धीरे आँखोंकी ओटमें ओझल हो गया।

अब अजित स्वयं जलके भीतर उतरकर स्नान सन्ध्या वन्दन एवं उपासनामें लग गया। उसे सन्ध्या करते समय प्राणायाम करनेमें पर्याप्त समय लगता था। वह प्राण अपान-वायु द्वारा जीवनकी गति रोककर समाधिस्थ हो जाता था। आज भी जब प्राणायाम करके वह समाधिस्थ अवस्थामें आकण्ठ जलमग्न था, उसी समय मृणालिनी जलाशयके किनारे प्रफुल्ल मनसे आ खड़ी हुई। किन्तु एक अपरिचितको जल-मग्न देखकर उसे स्वाभाविक लज्जा-सी आन हुई किन्तु दूसरे ही क्षण वह जलाशयके किनारे बैठकर अपना पात्र धोने लगी।

चन्द्रदेव अबतक क्षितिजके ऊपर चढ़ चुके थे और उनकी स्निग्ध शीतल ज्योति दिनकी भाँति ही सभी वस्तुओंका स्पष्ट दर्शन करा रही थी। मृणालिनीने अपरिचितपर दृष्टिपात की और प्रथम दृष्टिमें ही पहचान गयी कि समाधिस्थ व्यक्ति अजित ही है। [illegible] विगत स्मृतियाँ हृदय पटलपर उभरकर एक तूफान खड़ा करने लगीं। मृणालिनीके हृदयकी धड़कन एकाएक बढ़ गयी। वह उद्विग्न हो उठी। क्षण भरके लिये उसे बोध हुआ कि वह भाग जाये, किन्तु [illegible] जैसे खो गयी थी। वह चन्द्रदेवकी शीतल ज्योत्स्नामें अजितके मुखारविन्दको ऐसे देखने लगी जैसे अपनी सम्मोहनी शक्तिको लिये हुए कामदेव वन-प्रान्तमें चन्द्र किरणोंसे स्नानकर रहे हों।

योगिनी मृणालिनीके कषाय-वस्त्र उसको निर्ममता, त्याग [illegible] होते हुए भी आज जैसे अजितके सम्मुख पराजित हो चुके थे [illegible]

वैराग्य क्षण भरमें ही मृणालिनीका साथ छोड़कर ममतासे डरा हुआ दूर खड़ा था। मृणालिनी निर्निमेष दृष्टिसे आश्चर्य एवं कौतूहलसे भरी अजितको देख रही थी। अजितने ज्यों ही प्राणायामकी प्रक्रिया बन्दकर मार्जन करनेके लिए जल स्पर्श किया और मुँदी पलकें खुलीं त्यों ही सारी तपस्या की सजीव प्रतिमूर्ति-सी मृणालिनी उसके दृष्टि पथपर, अथसे इतितक समा गयी। अवाक् आश्चर्यने क्षण भरके लिए उसे भी स्तब्धकर दिया। दोनोंके नेत्र मिलकर चार हुए और संयमका बाँध फूट पड़ा।

अजित और मृणालिनी दोनोंके होठोंपर मुसकुराहट नाच उठी। वाणी द्वारा संभाषणके पूर्व ही जैसे नेत्रोंने एक दूसरेसे पूछा हो, 'अरे, तुम!'

और फिर अजित सन्ध्यावन्दनमें ही तल्लीन रहा। मृणालिनी भी जलके गर्भमें बैठकर नित्यक्रियासे निवृत्त होने लगी। दोनोंके हृदयोंमें अननुभूत सुखका ज्वारभाटासा उठ चला था फिर भी वे दोनों दिन-चर्यासे पीछे न हटकर नित्यकी भाँति अपने-अपने सन्ध्यावन्दनमें तल्लीन रहे।

अजित जलके गर्भसे निकलकर सूखे वस्त्र पहिनने लगा मृणालिनी आनन्द, मग्न होकर, अन्य दिवसोंकी भाँति ही-नहीं वरन् अन्य दिवसोंसे कुछ अधिक देरतक ही उपासना ध्यान एवं समाधिमें मग्न रही। अजित को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कैसे मृणालिनी शीतल जलमें बिना कम्पनके ध्यानावस्थित हुआ करती है। उसने अनुभव किया कि यह राजकुमारी मृणालिनी नहीं वरन् सचमुच योगिनी मृणालिनी है।

इस योगिनीमें सुख-दुःख सर्दी-गर्मी एवं मात्रा स्पर्श सहन करनेकी अभूत पूर्व क्षमता है। संभव है, अब वह तपस्याके बलपर ही हर प्रकारका काया-क्लेश सहन करनेमें समर्थ है। क्यों न हो, चौदह वर्षोंसे अधिक तपस्याके बीच व्यतीत करनेपर ही उसने नियंत्रित जीवन प्राप्त किया है। सुकुमार जीवनके स्थानपर कठोर संयमित जीवन है। कल जो

फूलसे भी अधिक सुकुमार थी, आज वह हृदयहीन पाषाणसे भी बढ़कर कठोर है। यह उसकी विजय है, यही है उसकी तपस्याओंका वरदान। घन्टों प्रतीक्षाके पश्चात् मृणालिनी जलसे बाहर निकली किन्तु उसके होठोंपर निष्पाप हँसी नाच रही थी। वह अपनी वैराग्य प्रखर-वाणीमें बोली—'अतिथि! तुम अचानक इन कष्टदायक पहाड़ियोंके गर्भमें कैसे आ पहुँचे? क्या मार्ग भूल गये हो?

'नहीं देवि! मैंने शोधा हुआ मार्ग पा लिया है। हाँ, इस ओर आ पहुँचनेका विशेष कारण है, तुम्हारे पावन दर्शन की उत्कट लालसा।

मृणालिनीने तीक्ष्ण दृष्टिसे अजितको देखा जैसे वह भूत-भविष्यके गर्भकी बात एक ही दृष्टिमें जान लेना चाहती हो। उसे अजितका प्रत्युत्तर कुछ अटपटा सा लगा—'शोधा हुआ मार्ग उसने पा लिया है।'

पुनः मृणालिनीने पूछा—तुम कहाँसे आ रहे हो?

'यहीं पास हीके एक आश्रम से।

'यहाँ तो मेरे आश्रमके अतिरिक्त आस-पास कोई दूसरा आश्रम नहीं।'

'अवश्य नहीं था किन्तु जबसे मैं रहने लगा हूँ, तभीसे दूसरा आश्रम भी बन चुका है।'

'अतिथि! तुम्हारी बातें मुझे आश्चर्यमें डाल रही हैं। तुम तो इस विशाल भारत देशके प्रमुख शासक एवं प्रमुख सेवक हो।'

'नहीं देवि! मैं एक घास-फूसकी झोपड़ीका निवासी होनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं हूँ।'

'यह कैसे?'

संक्षेपमें अजितने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। यह जान लेनेपर कि उसी भांति सर्वस्व त्यागकर अजित भी वीतरागी जीवन-पथपर अग्रसर हो चुका है, मृणालिनीने प्रश्न किया—'यह तुमने क्या कर डाला?'

'वही, जो मार्ग दर्शककी भांति तुमने किया था, देवि !

मृणालिनीकी अन्तर्दृष्टिमें वे सारी अतीतकी स्मृतियाँ उभर आयीं। आह! वह अजित ही था जिसे न पा सकनेकी असमर्थतामें, विवश होकर मृणालिनीने राज-पाट, आमोद-प्रमोद ऐश्वर्य एवं अपार सम्पत्ति जैसी सर्वस्व वस्तुएँ परित्याग की थीं !' चौदह वर्ष पटलपर पुनः अङ्कित हो उठे और उसने अनुभव किया कि जिस विफल-प्रेमकी दारुण पीड़ासे ऊबकर वह सूनसान पहाड़ोंकी ओर भागी थी, वही असफल प्रेमकी तिल तिल भर जलानेवाली वियोग-व्यथा अजितको भी सूने एकान्तमें खींच लायी है। आगे उसने इस सम्बन्धमें अजितसे कुछ भी न पूछा। पूछती ही क्यों? अनुभवकी अकथ कहानी उसे भली-भांति ज्ञात थी।

वह मन ही मन अजितके धैर्य एवं संयमकी प्रशंसा करते हुए उस बेचारेको धन्यवादका पात्र समझने लगी। जिसने अपनी पीड़ा एवं जलनकी परवाह न कर चौदह वर्षोंतक परोपकारके लिए जीनेका साहस दिखलाया जब कि सचाई यह थी कि स्वेच्छासे वह एक क्षण भी सुखसे बिता सकनेमें असमर्थ था।

वह बोली—प्रिय अतिथि! आश्रमकी ओर चलो। वहीं आजकी रात बिताना और मुझ गरीबिनीका आतिथ्य ग्रहण करना।

आगे आगे मृणालिनी और उसके पीछे अजित इस प्रकार चलने लगा जैसे किसी भूले भटके प्राणीको अपने मार्गके खोजमें किसी जानकारके पीछे-पीछे चलना पड़ता है।

थोड़ी ही दूर चलकर मृणालिनी अपने आश्रममें जा पहुँची, जहाँ अजित चुपके चुपके एकाध बार हो आया था। अजितने योगिनीके आश्रममें पहुँच कर देखा कि आसपासकी सुन्दर एवं स्वच्छ झोपड़ियोंमें दूर दूरसे आये हुए ग्रामीण किसान अपनी दवा कराने आये हैं।

मृणालिनीके आश्रममें पहुँचते ही दास-दासियोंके रूपमें कुछ पुरुष और स्त्रियाँ आ पहुँची और मृणालिनीके पूछनेपर अनेक रोगियोंके नाम तथा पता बतलाते हुए, दास-दासियोंने उनके स्वास्थ्य-विषयक सुधार की चर्चा।

अभी अभी मृणालिनीके स्नान करनेके पूर्व जिस भिक्षुणीको अजितने जलाशयपर देखा था, वह सम्भवतः शिष्याकी भांति मृणालिनीके साथ रहा करती थी। मृणालिनीके साथ अपरिचित अतिथिको देखकर उसने पूछा—'देवि! क्या अभ्यागतके सम्मानमें रात्रिके समय फलाहारका आयोजन करना होगा?'

'अवश्य' वात्सल्य दृष्टिसे भिक्षुणी को देखते हुए मृणालिनी बोली!

मृणालिनीकी आज्ञा पाकर वह फलाहारके आयोजनमें लग गयी और मृणालिनी अजितको बैठनेका आग्रह करके आश्रममें पड़े हुए रोगियोंकी देखभाल एवं औषधि देनेके कार्यमें व्यस्त हो गयी। वह रोगियोंकी परिचर्यामें इस प्रकार तल्लीन थी कि उसे घण्टों याद न रहा कि उसके आश्रममें प्रिय अतिथि प्रतीक्षामें बैठा होगा। जब वह रोगियों की सेवासे मुक्त हुई तब प्रसन्न मनसे अजितके पास बैठकर अपनी दिन-चर्या आदिके बारेमें प्रकाश डालने लगी।

मृणालिनीके जीवनमें अनेक परिवर्तन देखनेसे अजितको स्पष्ट हो गया था कि उसने अपना समग्र जीवन तपस्या एवं मानवताकी सेवामें समर्पित कर दिया है और इसी जीवनमें मृणालिनीको वास्तविक सुख-शान्ति मिली है।

रात्रि लगभग डेढ़ प्रहर व्यतीत हो चली थी, किन्तु चन्द्रदेवकी रूप-हली कान्तिसे जैसे सारा जग आलोकित हो उठा था। मृणालिनीने अजितके सामने पर्णपात्र में फलाहार लाकर रख दिया और स्वयं भी अजितके आग्रहपर फलाहार करनेके लिए बैठ गयी क्योंकि वह साधारणतः पूरे दिनमें एक ही बार भोजन करती थी।

अजित भोजन करते समय पर्णपात्रको देखकर मन ही मन सोचने लगा कि एक वह दिन था जब मृणालिनी सुवर्ण एवं रजत-पात्रमें भोजन करते समय अनेक प्रकारकी त्रुटियाँ निकाला करती थी और आजके परिवर्तन जीवनमें जैसे सब कुछ ठीक है।

मृणालिनी भोजन करते समय मौन रहा करती थी। अतः वह अजित से कुछ पहले ही भोजन समाप्त कर प्रतीक्षामें बैठे बैठे मुसकरा रही थी। जैसे ही अजितने भोजन समाप्त किया और दोनों हाथ मुँह धोकर बैठे, अजितने पूछा—

'क्यों देवि ! पत्तलोंपर भोजन करते हुए क्या कभी पूर्वजीवनकी भी याद आती है !

'कभी नहीं ! प्रायः अभाव अनुभव करनेपर ही सुखमय क्षणोंकी याद सताया करती है किन्तु जब अन्तरात्मा सन्तुष्ट रहती है, तब अभाव की कोई चर्चा ही क्यों ?

छोटी छोटी बातों और दिनचर्याके अनेक प्रसङ्ग जाननेपर अजितको बोध हो गया, वास्तवमें मृणालिनीने सम्पूर्ण जीवनके संस्करण ही बदल डाले हैं और वह शान्त, गम्भीर, हँसमुख एवं निश्चिन्त बन गयी है।

रात लगभग आधी हो चली थी। वर्षों पश्चात् मिलनेपर दोनों परिचित व्यक्तियोंके सम्बन्धमें अनेक बातें करते रहे, राज-काजकी चर्चा भी अजितने छेड़ दी। मृणालिनी सब कुछ सुनती रही। अन्तमें जब अजितने राजमाताके देहावसानकी बात प्रकट की तब नेत्र-कोटरोंमें आँसू भरकर मृणालिनीने कहा—'मुझे किसी साधूके द्वारा यह बात ज्ञात हो चुकी थी किन्तु मैं क्या करती ? माताकी मृत्युके सालों पश्चात् यह सूचना मुझे मिली थी !

मृणालिनीने अर्द्धरात्रि व्यतीत हो जानेपर अजितसे कहा प्रिय

अतिथि ! यह तो विश्रामकी बेला आ पहुँची। चलो आसन लगा है, उसीपर विश्राम करो न !'

'नहीं देवि ! अब मैं अपने स्थानपर ही चला जाऊँगा ! वर्षों से मेरे व्याकुल नेत्र तुम्हारे एक बार दर्शन करनेको लालायित थे। आज चौदह पन्द्रह वर्षों उपरान्त चिर-अतृप्त-नेत्र अपनी पावन-प्रतिमा दर्शन कर पूर्ण सन्तुष्ट हो चुके हैं। यदि ये कलपती हुई आँखें तुम्हें न देख पातीं तो सम्भवतः मेरा समग्र जीवन आँसुओंकी धारामें ही धराशायी होता, किन्तु पूर्व पुण्योंके परिणाम स्वरूप मेरी साध पूरी हुई। तुम अपनी साधनामें सफल हो। मुझे आशीर्वाद दो कि मैं भी तुम्हारी ही भांति मनकी ममताको जीतकर चिर-मुक्त जीवन प्राप्त कर सकूँ।

अजित उठकर खड़ा हो गया मृणालिनी कुछ कह न सकी। न जाने क्यों आज पुनः ममताकी धारा नेत्र-पथपर बह चली। अजित ने दोनों हाथ उठाकर मृणालिनीको अभिवादन किया किन्तु बदलेमें मृणालिनीने अजितको हृदयसे लगा लिया और रुँधे गलेसे बोली—'जाओ वीतरागी इस जीवनके यही संस्कार हैं। इन्हीं साधनामय घड़ियों-की पावन स्मृतिके बीच तुम्हें भी याद कर लिया करती हूँ। तुम भी यही करना। मेरी साधना सचमुच सफल है। वह तुम्हें भी बन्धनकी ग्रन्थि-से मुक्त कर एकान्तमें ले आयी है। मुझे तो इस जीवनमें फिर भी तुम्हें देख पानेकी कोई आशा न थी किन्तु प्रभुने कलपते हृदयकी अशान्ति हरनेके लिए ही तुम्हें मेरे पास भेजा था। मेरी तृप्ति मुझे मिल गयी। अब आगे ममताके बोल न बोलूँगी—न सुनूँगी।'

अजितने मृणालिनीके बाहु-पाशसे अपनेको मुक्त कर लिया। एक बार उसने दृष्टि भरकर उस योगिनीको देखा और नेत्र मूँदकर जैसे सदा के लिए हृदयके अन्तरतममें वह माधुरी मूर्ति छिपा लिया। उसके पाँव धीरेसे बढ़े। वह चल पड़ा, जब तक मृणालिनीकी दृष्टिमें वह दिखायी पड़ा, मृणालिनी उस शून्य रात्रिमें प्रियतम अतिथिको देखती रही। जब

वह उसकी दृष्टिसे ओझल हो गया, तब वह उन्माद भरी विषैली पीड़ा-की मूर्च्छनामें बेसुध होकर सो गयी।

दूसरे प्रभातमें मृणालिनी शीघ्रतापूर्वक उठकर सन्ध्या वन्दनसे निवृत्त हो उसी पहाड़ीकी ओर चली, जहाँ अजितने अपने आश्रमका होना बताया था।

सचमुच, वहाँ घास-फूसकी एक झोपड़ी थी, किन्तु बिल्कुल सूनी! ज्ञात होता था जैसे कोई अभी अभी छोड़कर गया हो।

एक घास काटनेवाली जंगली बुढ़ियासे पता लगानेपर ज्ञात हुआ कि कलतक झोपड़ीमें कोई रहता था, किन्तु आज सूरज निकलनेसे पूर्व जब वह उसी जगह घास काटने आयी थी तब एक पुरुष जल्दी-जल्दीमें अपना सामान एकत्र कर और घने जंगलोंकी ओर चल पड़ा था।

याचना करनेपर उसने सारे वस्त्र दे डाले थे। ज्ञात होता था जैसे कोई वीतरागी हो।

मृणालिनी उस शून्य कुटीमें जाकर बैठ गई, जैसे वह प्रियतम अतिथिकी प्रतीक्षामें हो। उसने सुबहसे शामकर दिया, किन्तु उसका अतिथि लौटकर न आया।

अब उसने उसी कुटीमें अपना आश्रम बना लिया है! पुराना आश्रम रोगियोंके लिये छोड़ आयी है। उसे विश्वास है कि यदि कभी वह वीतरागी लौटा, तो अपनी कुटीपर अवश्य आयेगा।